व्यवहारिक समाजशास्त्र

APPLIED SOCIOLOGY

उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय

तीनपानी बाईपास मार्ग, ट्रांसपोर्ट नगर के पीछे, हल्द्वानी-263139

नैनीताल, (उत्तराखण्ड़)

फोन न0- 05946- 261122, 061123

Toll free No. : 18001804025

Email: info@uou.ac.in Website: https://uou.ac.in

अध्ययन मण्डल

अध्यक्ष
कुलपति, उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय, हल्द्वानी

संयोजक
निदेशक, समाज विज्ञान विद्याशाखा

अध्ययन मण्डल के सदस्यों के नाम

1. **प्रो. जे. पी. पचौरी,** (सदस्य) कुलपति, हिमालयन, विश्वविद्यालय, जीवनवाला, देहरादून
2. **प्रो. सी. सी. एस. ठाकुर,** (सदस्य) प्रो. (से.नि.), रानी दुर्गावती, विश्वविद्यालय, जबलपुर, मध्यप्रदेश
3. **प्रो. रबीन्द्र कुमार,** (सदस्य) इग्नू, मैदानगढ़ी, नई दिल्ली
4. **प्रो. रेनू प्रकाश,** (सदस्य) समन्वयक, समाजशास्त्र, उत्तराखण्ड़ मुक्त विश्वविद्यालय, हल्द्वानी
5. **डॉ. भावना डोभाल,** (मनोनीत सदस्य) असिस्टेंट प्रोफेसर (ए.सी), समाजशास्त्र, उत्तराखण्ड़ मुक्त विश्वविद्यालय, हल्द्वानी
6. **डॉ. गोपाल सिंह गौनिया,** (मनोनीत सदस्य) असिस्टेंट प्रोफेसर (ए.सी), समाजशास्त्र, उत्तराखण्ड़ मुक्त विश्वविद्यालय, हल्द्वानी

पाठ्यक्रम समन्वयक

प्रो. रेनू प्रकाश, उत्तराखण्ड़ मुक्त विश्वविद्यालय, हल्द्वानी

इकाई लेखक	इकाई संख्या
डॉ. भावना डोभाल, सहायक प्राध्यापक, उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय, हल्द्वानी	**1, 8, 9, 11**
प्रो. रेनू प्रकाश, प्राध्यापक, समाजशास्त्र, उत्तराखण्ड़ मुक्त विश्वविद्यालय, हल्द्वानी	**2**
डॉ. गोपाल सिंह गौनिया, सहायक प्राध्यापक, उत्तराखण्ड़ मुक्त विश्वविद्यालय, हल्द्वानी	**3, 14**
डॉ. किशोर कुमार, सहायक प्राध्यापक, उत्तराखण्ड़ मुक्त विश्वविद्यालय, हल्द्वानी	**4, 5**
डॉ. अरूणिमा पाण्डे, सहायक प्राध्यापक, हरि ओम सरस्वती पी.जी. कालेज धनौरी, हरिद्वार	**6, 12**
प्रो. कमरुद्दीन आलम, समाजशास्त्र विभाग, एमबीपीजी कॉलेज, हल्द्वानी	**7**
डॉ. योगेश मैनाली, सहायक प्राध्यापक, एस.एस.जे. विश्वविद्यालय, अल्मोड़ा	**10, 13**

सम्पादन एवं संयोजन

प्रो. रेनू प्रकाश
समन्वयक
उत्तराखण्ड़ मुक्त विश्वविद्यालय, हल्द्वानी

शैलजा
असिस्टेंट प्रोफेसर (ए.सी), समाजशास्त्र
उत्तराखण्ड़ मुक्त विश्वविद्यालय, हल्द्वानी

आई.एस.बी.एन. : **प्रकाशन पूर्व प्रतियां**

कापीराइट: उत्तराखण्ड़ मुक्त विश्वविद्यालय, हल्द्वानी, नैनीताल, 263139

प्रकाशक: उत्तराखण्ड़ मुक्त विश्वविद्यालय, हल्द्वानी, नैनीताल, 263139

नोट: इस पुस्तक की समस्त इकाईयों के लेखन तथा कॉपीराईट संबंधी किसी भी मामले के लिए संबंधित इकाई लेखक जिम्मेदार होगा। इस प्रकाशन का कोई भी अंश उत्तराखण्ड़ मुक्त विश्वविद्यालय, की लिखित अनुमति के बिना मिमियोग्राफी चक्रमुद्रण द्वारा या किसी अन्य साधन से पुन: प्रस्तुत करने की अनुमति नहीं है। **मुद्रित प्रतियॉ-**

उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय, हल्द्वानी

षष्ठम सेमेस्टर (Sixth Semester) **BASO (N) 350** **4 CREDITS**

व्यवहारिक समाजशास्त्र
(Applied Sociology)

इकाई	अनुक्रमणिका	पृष्ठ सं.
	खण्ड- 1 **व्यवहारिक समाजशास्त्र (Applied Sociology)**	
इकाई-1	व्यवहारिक समाजशास्त्र की अवधारणा, प्रकृति अध्ययन क्षेत्र और महत्व (Concept, Nature, Scope and Importance of Applied Sociology)	1-07
इकाई-2	सामाजिक व्यवस्था: अवधारणा, सामाजिक व्यवस्था की समस्याएं (Social System: Concept, Problems of Social System)	08-21
	खण्ड- 2 **सामाजिक नीति, सामाजिक योजना और समाज कल्याण (Social Policy, Social Planning and Social Welfare)**	
इकाई-3	सामाजिक योजना: सामाजिक योजना का अर्थ और उद्देश्य (Social Planning: Meaning and Objectives of Social Planning)	22-33
इकाई-4	सामाजिक नीति एवं सामाजिक योजना का निर्माण (Formulation of Social Policy and Social Planning)	34-45
इकाई-5	सामाजिक समस्या का समाधान (Resolution of social problem)	46-57
इकाई-6	सामाजिक नीति: अवधारणाएं एवं विशेषताएं (Social Policy: Concepts and Features)	58-72
इकाई-7	सामाजिक नीति का निर्माण एवं सामाजिक नीतियों का क्रियान्वयन, सफलता के परिणाम (Formulation of social policy and implementation of social policies, results of success)	73-95
	खण्ड- 3 **समाज कल्याण और प्रभावी योजना का सामाजिक पुनः निर्माण (Social Welfare and Social Reconstruction of Effective Planning)**	
इकाई-8	बाल, महिला और श्रम कल्याण (Child, Women and Labour Welfare)	76-109
इकाई-9	अनुसूचित जाति अनुसूचित जनजाति तथा अन्य पिछड़ी जाति का कल्याण (Welfare of Scheduled Castes, Scheduled Tribes and Other Backward Classes)	110-119
इकाई-10	प्रभावी योजना का सामाजिक पुनर्निर्माण, सामाजिक योजना की सीमाएं (Social Reconstruction of Effective Planning, Limitations of Social Planning)	120-137
	खण्ड- 4 **गैर सरकारी संगठन (non-government organisation)**	
इकाई-11	गैर सरकारी संगठन की अवधारणा एवं महत्व (Concept and Importance of Non-Government Organisation)	138-144
इकाई-12	सामाजिक परिवर्तन में गैर सरकारी संगठन की भूमिका (The Role of NGOs in Social Change)	145-164
इकाई-13	गैर सरकारी संगठन: समस्या एवं निराकरण (NGOs: Problems and Solutions)	165-181
इकाई-14	भारत सरकार की योजनाओं में सरकारी संगठनों की भूमिका (Role of NGO's in The Government Schemes)	182-190

इकाई -1 व्यावहारिक समाजशास्त्र की अवधारणा, प्रकृति, अध्ययन क्षेत्र और महत्व

Concept, Nature and Importance of Applied Sociology

इकाई की रुपरेखा

1.1 प्रस्तावना

1 .2 उद्देश्य

1.3 व्यावहारिक समाजशास्त्र की अवधारणा

1.4 व्यावहारिक समाजशास्त्र की प्रकृति

1.5 व्यावहारिक समाजशास्त्र का अध्ययन क्षेत्र

1.6 व्यावहारिक समाजशास्त्र का महत्व

1.7 सारांश

1.8 संदर्भ ग्रन्थ सूची

1.9 निबंधात्मक प्रश्न

1.1 प्रस्तावना

व्यावहारिक समाजशास्त्र के परिचय और विषय प्रवेश के लिए आवश्यक है कि सर्वप्रथम हम समाजशास्त्र के प्रमुख प्रकारों पर एक दृष्टि डालें। अध्ययन के उद्देश्य, दृष्टिकोण और उपयोगिता के आधार पर वैज्ञानिकों ने समाजशास्त्र दो प्रमुख प्रकारों में विभाजित किया है। ये हैं- (1) विशुद्ध समाजशास्त्र और (2) व्यावहारिक समाजशास्त्र। विशुद्ध समाजशास्त्र का उद्देश्य सामाजिक व्यवस्था, सामाजिक अव्यवस्था और उनमें होने वाले परिवर्तनों का अध्ययन करके सिद्धान्तों का निर्माण करना है। विशुद्ध समाजशास्त्र का उद्देश्य ज्ञान का विस्तार एवं सिद्धान्तों का निर्माण करना होता है। यह सैद्धान्तिक लक्ष्यों एवं विद्यमान ज्ञान के भण्डार की वृद्धि करता है। विशुद्ध समाजशास्त्र का उद्देश्य किन्हीं समस्याओं का अध्ययन करना तथा समाधान प्रस्तुत करना नहीं है। समाज की समस्याओं का अध्ययन करना तथा समाधान प्रस्तुत करना समाजशास्त्र के दूसरे प्रकार व्यावहारिक समाजशास्त्र का सर्वोपरि उद्देश्य होता है।

1.2 उद्देश्य

1. व्यावहारिक समाजशास्त्र की अवधारणा को जान पाएगें।

2. इस इकाई में व्यावहारिक समाजशास्त्र की प्रकृति का अध्ययन कर पाएगें।

3. व्यावहारिक समाजशास्त्र का अध्ययन क्षेत्र एवं व्यावहारिक समाजशास्त्र का महत्वन के बारें में जान पाएगें।

1.3 व्यावहारिक समाजशास्त्र की अवधारणा

जब समाजशास्त्र का उद्देश्य ऐसे ज्ञान की खोज के लिए किया जाता है जो प्यावहारिक समस्याओं के समाधान के लिए उपयोगी हो तो उसे व्यावहारिक समाजशास्व कहते हैं। व्यावहारिक समाजशास्त्र का सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण कार्य समाज की समस्याओं के समाधानों को ज्ञात करना है। इस समाजशास्त्र का परिप्रेक्ष्य या दृष्टिकोण मानविकी होता है। इसीलिये व्यावहारिक समाजशास्त्र का सीधा सम्बन्ध समाज की विभिन्न समस्याओं, कल्याणकारी योजनाओं, नीति-निर्माण तथा व्यावहारिक उपयोगिता से होता है।

व्यावहारिक समाजशास्त्र समाजशास्त्रीय ज्ञान की वह दशा है जो समाजशास्त्रीय सिद्धान्तों का प्रयोग सामाजिक समस्याओं एवं व्याधिकीय स्थितियों को ज्ञात करने, उन पर विचार करने, उन्हें वास्तविकता में दूर करने हेतु उपाय सुझाने और सामाजिक पुनर्निर्माण में करती है और एक विकसित समाज के निर्माण में योगदान देती है। वहुत ही स्पष्ट शब्दों में यह कहा जा सकता है कि समाशास्त्रीय सिद्धान्तों का व्यावहारिक प्रयोग वा परीक्षण हो समाजशास्त्र का व्यावहारिक पक्ष है और इसी को व्यावहारिक समाजशास्त्र कहते हैं। व्यावहारिक समाजशास्त्र की निम्नलिखित कुछ परिभाषाएँ इस बात की पुष्टि करेंगी-

ग्रोव्स तथा मूरे के अनुसार - "व्यावहारिक समाजशास्त्र मुख्यतः सामाजिक अनुभव की समस्याओं व उनके उपचार तथा निवारण की विधियों के विषय में सूचना प्राप्त करने से सम्बन्धित हैं।"

सार्जेन्ट फ्लोरेंस के शब्दों मे - "जब एक ही विज्ञान को व्यावहारिक कहा जाता है तो माना जाता है कि शुद्ध विज्ञान के द्वारा सामान्य सिद्धान्तों, नियमों अथवा मतों के एक निकाय का निर्माण किया गया है जोकि पर्याप्त रूप से निश्चित हैं। तब निगमन द्वारा सामान्य सिद्धान्तों को एक विशिष्ट मामले में प्रयुक्त करने का प्रश्न शेप रह जाता है।"

फोर्ड जेम्स के अनुसार - "क्रियात्मक अथवा व्यावहारिक समाज विज्ञान को ही अन्य नामों-व्यावहारिक सामाजिक आचारशास्त्र (Applied Social Ethics) या सामाजिक नीति (Social Policy) से सम्बोधित किया जा सकता है। नैतिक उद्देश्य की प्राप्ति के हेतु सामाजिक विधि के अनुकूलन के अध्ययन को ही व्यावहारिक समाजशास्त्र कहा जा सकता है।"

उपरोक्त परिभाषाओं के आधार पर यह कहा जा सकता है कि व्यावहारिक समाजशास्त्र, समाजशास्त्रीय ज्ञान की वह शाखा है जो परिवर्तनशील सामाजिक विशेषताओं, उनसे उत्पन्न विभिन्न सामाजिक संबंधों तथा उनके पुनः संगठन की प्रक्रियाओं का अध्ययन करती है। इस विश्लेषण से यह भी स्पष्ट होता है कि व्यावहारिक समाजशास्त्र मुख्य रूप से सामाजिक समस्याओं के अध्ययन पर केंद्रित होता है।

1.4 व्यावहारिक समाजशास्त्र की प्रकृति

एक अध्ययनकर्ता समाजशास्त्र के जिस उपागम के अन्तर्गत अध्ययन क्षेत्र में जाकर समस्या रूपी किसी सामाजिक घटना का विश्लेषण करता है, तथ्य जुटाता है, उस उपागम को व्यावहारिक समाजशास्त्र कहा जाता है। व्यावहारिक समाजशास्त्र के माध्यम से समाजशास्त्रीय सिद्धान्तों का परीक्षण किया जाता है। कह सकते हैं कि व्यावहारिक समाजशास्त्र की प्रकृति खोजपरक व शोधपरक होती है। उपर्युक्त विश्लेषण के आधार पर व्यावहारिक समाजशास्त्र की प्रकृति के सम्बन्ध में निम्नलिखित अनेक बातें सामने आती हैं-

(1) सैद्धान्तिक समाजशास्त्र का पूरक - व्यावहारिक समाजशास्त्र सैद्धान्तिक तमाजशास्त्र का पूरक है। सैद्धान्तिक समाजशास्त्र के अन्तर्गत जितने भी सिद्धान्तों का निर्माण किया जाता है, वह व्यावहारिक समाजशास्त्र के आधार पर ही किया जाता है। साथ ही सिद्धान्तों का परीक्षण भी व्यावहारिक समाजशास्त्र के माध्यम से ही होता है।

(2) व्याधिकीय पक्ष में रुचि- सामाजिक संगठन प्रत्येक समाज की आवश्यकता होती है। सामाजिक संगठन तभी बना रह सकता है, जबकि सामाजिक व्याधिकी से समाज मुक्त रहे। कोई भी सामाजिक व्यापिकी किस रूप और अवस्था में है, इस बात को जाने विना व्याधिकी को दूर नहीं किया जा सकता। यही कारण है कि व्यावहारिक समाजशास्त्र सामाजिक संगठन के साथ-साथ सामाजिक व्याधिकी के अध्ययन में भी रुचि रखता है।

(3) आचार व नीतिशास्त्र से घनिष्ठ सम्बन्ध- व्यावहारिक त्तमाजशास्त्र का सम्बन्ध आचार व नीतिशास्त्र से अधिक घनिष्ठ है। परन्तु फिर भी व्यावहारिक समाजशास्त्र आदर्शवादी न होकर वैज्ञानिक दृष्टिकोण अर्थात् अवलोकन व अनुभव सिद्ध ज्ञान के आधार पर आगे बढ़ता है।

(4) सिद्धान्तों को व्यावहारिक जीवन पर लागू करता है- व्यावहारिक समाजशास्त्र सिद्धान्तों के निर्माण में तो रुचि लेता ही है, उनको व्यावहारिक जीवन में भी लागू करता है।

(5) अध्ययन क्षेत्र व्यापक है- व्यावहारिक समाजशास्त्र का अध्ययन क्षेत्र अत्यन्त व्यापक है। यह केवल सामाजिक समस्याओं के तमाचान और अध्ययन तक ही सीमित नहीं है, बरन् इसमें सामाजिक कार्य, सामाजिक सेवाओं, सामाजिक कल्याण तया सामाजिक पुनर्निर्माण का भी समावेश किया गया है। सामाजिक कार्य और सामाजिक सेवाओं के द्वारा सामाजिक समस्याओं को दूर किया जा सकता है और नवीन तामाजिक नीतियाँ बनाकर समाज कल्याण को प्रोत्साहित करके सामाजिक पुनर्निर्माण की परिकल्पना साकार की जा सकती है।

(6) व्यावहारिक समाजशास्त्र त्रिकालदर्शी है- व्यावहारिक समाजशास्त्र त्रिकालदर्शी है अर्थात यह भूतकाल, वर्तमान व भविष्य, तीनों के अध्ययनों से पूर्ण रूप से सम्बन्धित है। व्यावहारिक समाजशास्त्र भूतकाल से अध्ययन विषय के सम्बन्ध में अन्तर्दृष्टि प्राप्त करता है, वर्तमान समय में अध्ययन करता है और अध्ययन के भविष्य प्रभावों की घोषणा करता है।

(7) यह सर्वव्यापी है- व्यावहारिक समाजशास्त्र हर उस स्थान पर विद्यमान है जहां पर मानवीय सम्बन्ध पाए जाते हैं। मानव सम्बन्धों में जो कुसमायोजन एवं सामाजिक समस्याएँ उत्पन्न हो जाती हैं. उन्हें व्यावहारिक समाजशास्त्र ही हल कर पाता है।

(8) इसकी प्रकृति वैज्ञानिक है- व्यावहारिक समाजशास्त्र की प्रकृति वैज्ञानिक है। यह मानवीय समस्याओं को सुलझाने में अवलोकन, साक्षात्कार व प्रश्नावली जैसी तथ्य संकलन की वैज्ञानिक प्रविधियों का प्रयोग करता है। इसी अर्थ में यह विज्ञान है।

(9) एक नवीनतम विज्ञान- वैसे तो समाजशास्त्र अपेक्षाकृत एक नवीन सामाजिक विज्ञान है किन्तु व्यावहारिक समाजशास्त्र समाजशास्त्र की भी एक नवीन शाखा है।

(10) व्यावहारिक समाजशास्त्र की प्रकृति निदानात्मक है- उपर्युक्त विश्लेषण के आधार पर कह सकते हैं कि व्यावहारिक समाजशास्त्र की प्रकृति निदानात्मक भी है। क्योंकि यह समस्याओं के कारणों का पता लगाने के साथ-साथ उन्हें दूर करने के उपाय भी सुझाता है।

1.5 व्यावहारिक समाजशास्त्र का अध्ययन क्षेत्र

यह सर्वविदित है कि समाजशास्त्र का क्षेत्र संपूर्ण समाज होता है। व्यावहारिक समाजशास्त्र भी समाजशास्त्र की ही एक शाखा है, लेकिन इसका अध्ययन क्षेत्र संपूर्ण समाज का सैद्धांतिक अध्ययन नहीं होता। व्यावहारिक समाजशास्त्र का मुख्य उद्देश्य मानव समाज का कल्याण करना है। जहाँ भी मानवीय संबंध पाए जाते हैं, वहीं सामाजिक समस्याएँ भी उत्पन्न होती हैं। इन समस्याओं का समाधान करना उतना ही आवश्यक होता है जितना सामाजिक संबंधों को सामान्य बनाए रखना। सामाजिक समस्याओं को दूर करके ही सामाजिक संबंधों को संतुलित और सामान्य बनाया जा सकता है। सामाजिक संबंधों को सामान्य बनाने का कार्य व्यावहारिक समाजशास्त्र करता है और यही इसका वास्तविक क्षेत्र है। इस प्रकार, जहाँ कहीं भी मानवीय संबंध विद्यमान हैं, वहीं व्यावहारिक समाजशास्त्र का क्षेत्र माना जाता है।

परन्तु विशुद्ध समाजशास्त्र व व्यावहारिक समाजशास्त्र का विषय क्षेत्र एक समान नहीं है। इसका कारण यह है कि व्यावहारिक समाजशास्त्र का मुख्य या प्राथमिक उद्देश्य समाजशास्त्रीय सिद्धान्तों का प्रयोग मानवीय कल्याण तथा आवश्यकताओं हेतु करना है। विशुद्ध समाजशास्त्र का क्षेत्र इन सामाजिक समस्याओं का अध्ययन करना नहीं है। इस प्रकार व्यावहारिक समाजशास्त्र गैर-सैद्धान्तिक है तथा इसका उद्देश्य मानव कल्याण है। इसका मुख्य क्षेत्र सामाजिक संगठन है। सामाजिक वियटन व्यावहारिक समाजशास्त्र का ही एक भाग है। इसके अन्तर्गत सामाजिक विघटन के अनेक रूपों वैयक्तिक विघटन, पारिवारिक विघटन, सांस्कृतिक विघटन व सामुदायिक विघटन का अध्ययन किया जाता है। व्यावहारिक समाजशास्त्र विघटन के कारणों का परिचय प्राप्त करता है और पुनः निर्माण के उपायों के सम्बन्ध में सुझाव देता है। इस दृष्टिकोण के आधार पर व्यावहारिक समाजशास्त्र के सम्पूर्ण अध्ययन क्षेत्र को तीन भागों में बाँटा जा सकता है-

1. सामाजिक व्याधिकी

सामाजिक व्याधिकी से हमारा तात्पर्य सम्पूर्ण सांस्कृतिक संकुल के विभिन्न तत्वों के ऐसे गम्भीर त्रुटिपूर्ण अनुकूलनों से है जो समूह के अस्तित्व को संकट में डाल दे अथवा उनके सदस्यों की आधारभूत इच्छाओं की संतुष्टि में गम्भीर बाधक हो, जिनके परिणामस्वरूप सामाजिक सम्बद्धता (Social Affiliation) नष्ट हो जाती है।

गिलिन तथा गिलिन "सामाजिक व्याधिकी सामाजिक विघटन का अध्ययन है।"

जॉन लेविस "सामाजिक व्याधिकी वह अध्ययन है जिससे पता चलता है कि मनुष्य स्वयं अपने से तया अपने जीवन के लिए उपयोगी संस्थाओं से समायोजन करने में असफल क्यों रहता है।"

यह स्पष्ट है कि किसी भी समाज में विभिन्न सामाजिक समस्याओं की उत्पत्ति का मुख्य कारण व्यक्ति का अपनी परिस्थितियों के साथ उचित समायोजन न कर पाना होता है। व्यावहारिक समाजशास्त्र व्यक्ति और उसकी परिस्थितियों के बीच होने वाले असमायोजन की प्रकृति तथा उसके कारणों का वैज्ञानिक पद्धति के आधार पर अध्ययन करता है। जब इस असमायोजन की पूरी तस्वीर समाज के सामने आ जाती है, तब उसे दूर करने के उपाय किए जाते हैं। हालांकि, इन उपायों को लागू करने का कार्य स्वयं व्यावहारिक समाजशास्त्र नहीं करता।

2. सामाजिक विघटन

सामाजिक व्याधिकी का शीघ्र ही प्रभावपूर्ण उपचार न होने की दशा में सामान्य सामाजिक समस्याएँ गम्भीर रूप ग्रहण करके सम्पूर्ण सामाजिक जीवन को विघटित कर देती हैं। इसी दशा को हम सामाजिक विघटन कहते हैं। थॉमस तथा नैनकी का कहना है कि सामाजिक विघटन का तात्पर्य एक समूह के सदस्यों के व्यवहारों पर वर्तमान सामाजिक नियमों का प्रभाव कम हो जाना है। फेरिस का मत है कि सामाजिक विघटन मानवीय सम्बन्धों के यन्त्रों एवं प्रतीकों में गड़बड़ का सूचक है।

सामाजिक विघटन व सामाजिक समस्याएँ एक दूसरे से घनिष्ठ रूप से सम्बद्ध है। सामाजिक समस्याओं में उग्रता व कर्तव्य पालन में कठिनाई ही सामाजिक विघटन को जन्म देती है। यही कारण है कि यदि सामाजिक विघटन की दशा को काफी दिनों तक टीक नहीं किया जाता तो परिणामस्वरूप सामाजिक समस्याएँ जन्म लेती हैं। इस अर्थ में व्यावहारिक समाजशास्त्र सामाजिक विघटन व सामाजिक समस्याओं, दोनों का ही अध्ययन करता है। प्रत्येक समाज में सामाजिक विघटन पाया जाता है, मात्रा में भिन्नता हो सकती है। वैयक्तिक विघटन, पारिवारिक विघटन, सांस्कृतिक विघटन व सामुदायिक विघटन, सामाजिक विघटन के रूप हैं और ये प्रत्येक समाज में पाए जाते हैं। इसी आधार पर व्यावहारिक समाजशास्त्र उन सभी सामाजिक समस्याओं का अध्ययन करता है, जोकि वैयक्तिक, पारिवारिक, सांस्कृतिक व सामुदायिक जीवन में पाई जाती हैं।

3. सामाजिकं पुनर्निर्माण

व्यावहारिक समाजशास्त्र केवल सामाजिक समस्याओं की प्रकृति और उनके कारणों का अध्ययन ही नहीं करता, बल्कि उन व्यावहारिक आधारों की भी खोज करता है जिनके माध्यम से समाज का पुनर्निर्माण किया जा सके। इसी कारण व्यावहारिक समाजशास्त्र को एक कल्याणकारी विज्ञान माना जाता है। उदाहरण के रूप में,

महिलाओं का कल्याण, दलितों और जनजातियों का विकास, श्रमिकों का कल्याण, बाल श्रम का उन्मूलन, दिव्यांगजनों और वृद्धों का कल्याण, कृषि श्रमिकों तथा अल्पसंख्यकों का विकास जैसे विषय—अर्थात् समाज के वंचित और सीमान्त वर्गों का कल्याण—व्यावहारिक समाजशास्त्र के प्रमुख अध्ययन क्षेत्र हैं।

इसी प्रकार ग्रामीण पुनर्निर्माण, नगरीय पुनर्निर्माण, औद्योगिक समाज का पुनर्गठन तथा समाज के लिए व्यावहारिक नीतियों का निर्माण भी व्यावहारिक समाजशास्त्र के अध्ययन क्षेत्र के अंतर्गत आते हैं। यहाँ यह उल्लेख करना आवश्यक है कि व्यावहारिक समाजशास्त्र अपने सभी अध्ययनों में वैज्ञानिक पद्धति का प्रयोग करता है। इसलिए, कल्याणकारी स्वरूप होने के बावजूद यह एक निष्पक्ष और वस्तुनिष्ठ दृष्टिकोण बनाए रखता है। व्यावहारिक समाजशास्त्र का मुख्य कार्य विभिन्न सामाजिक समस्याओं के वास्तविक कारणों, समाज की समग्र परिस्थितियों और उपलब्ध संसाधनों को ध्यान में रखते हुए सामाजिक पुनर्निर्माण की योजनाएँ प्रस्तुत करना है। यही वैज्ञानिक और वस्तुनिष्ठ दृष्टिकोण व्यावहारिक समाजशास्त्र को विज्ञान की श्रेणी में स्थापित करता है।

1.6 व्यावहारिक समाजशास्त्र का महत्व

आज अधिकांश समाजशास्त्री यह स्वीकार करने लगे हैं कि सैद्धांतिक आधार पर समाजशास्त्र का कितना मी विकास क्यों न हो जाये लेकिन इसकी वास्तविक उपयोगिता तमी संभव है जब इसके सिद्धांतों से सामाजिक जीवन को अधिक अच्छा बनाया जा सके। इसी धारणा को लेकर आज विभिन्न सामाजिक समस्याओं का अध्ययन करने तथा उनका समाधान प्रस्तुत करने में व्यावहारिक समाजशास्त्र महत्वपूर्ण भूमिका निभाने लगा है। मिलिन तथा डिटमर (Gillin and Dittmer)का कथन है कि व्यावहारिक समाजशास्त्र का ज्ञान समाजशास्त्रियों को विभिन्न प्रकार की परिवर्तनशील दशाओं के अंतर्गत मानवीय संबंधों का अध्ययन करने का अवसर प्रदान करता है इस तरह के अध्ययन से समाजशास्त्री जिन सिद्धांतों को ज्ञात करते हैं. उन्हीं की सहायता से ऐसी पद्धतियों का विकास संभव हो पाता है, जो स्वस्थ *सामाजिक अभियोजन के लिए कार्यक्रम बनाने तथा नीतियों को वास्तविक रूप देने के लिए आवश्यक है। समाज > को केवल सिद्धांतों के द्वारा ही संगठित नहीं किया जा सकता, बल्कि इसके लिए उन दशाओं का अध्ययन करना आवश्यक है जो एक स्वस्थ सामाजिक जीवन के मार्ग में बाधाएं उत्पन्न करती है। व्यावहारिक समाजशास्त्र सामाजिक प्रगति में बाधा डालने वाली तथा समाज में व्याधिकीय दशाएं उत्पन्न करने वाली शक्तियों के प्रभाव को ज्ञात करके सामाजिक जीवन को स्वस्थ बनाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकता है। संभवतः इसीलिए गिडिंग्स (Giddings) ने कहा था कि समाजशास्त्रीय अध्ययन का व्यावहारिक पक्ष ही हमें यह बता सकता है कि प्रगति का मूल्य क्या है।'

वर्तमान युग सामाजिक नियोजन का युग है। आज न तो किसी समाज को अपनी समस्याओं का सामना करने के लिए अकेले छोड़ा जा सकता है और न ही इस धारणा में विश्वास किया जा सकता है कि विघटन प्रत्येक समाज का एक आवश्यक दोष है। आज के अधिकांश राज्य स्वयं को कल्याण-राज्य (Welfare State) घोषित कर चुके हैं। इनमें दुर्बल और असहाय वर्गों को सामाजिक सुरक्षा प्रदान करना, सामाजिक समस्याओं का समाधान करना तथा नगरीय और ग्रामीण पुनर्निर्माण करना राज्य के महत्वपूर्ण दायित्व है। लेकिन प्रश्न यह उठता

है कि ज्ञान की कौन सी शाया ऐसी है जो सामाजिक पुनर्निर्माण के लिए एक सही दिशा दे सकती है? स्पष्टतः यह कार्य व्यावहारिक समाजशास्त्र का है। ज्ञान की इसी शाखा की सहायता से समाजशास्त्री सामाजिक पुनर्निर्माण के लिए व्यावहारिक कार्यक्रम तथा नीतियां प्रस्तुत कर सकते हैं।

1.7 सारांश

समाजशास्त्री स्वयं ही किसी समस्या को दूर नहीं कर सकते, लेकिन आप व्यावहारिक ज्ञान की सहायता से वे यह अवश्य बता सकते हैं कि एक विशेष परिस्थिति में कौन सा निर्णय वांछि परिणाम उत्पन्न कर सकता है। उदाहरण के लिए वे बुद्ध को नहीं रोक सकते, लेकिन तनाव और संघर्षर उत्पन्न करने वाली परिस्थितियों का प्रभावपूर्ण विश्लेषण अवश्य कर सकते हैं। ऐसा विश्लेषण युद्ध की संभाक को स्वयं ही कम कर देता है। इस आधार पर व्यावहारिक समाजशास्त्र की उपयोगिता को स्पष्ट करते है बाटोमोर (Bottomore) ने लिखा है कि 'समाजशास्त्रीय अध्ययन सामाजिक समस्याओं के बारे में एक यथा दृष्टिकोण विकसित करके उन कटु आलोचनाओं को कम करता है जो अक्सर समस्याओं को बढ़ाने में सहाय होती है।"

1.8 संदर्भ ग्रन्थ सूची

- डॉ अमित अग्रवाल, समाजशास्त्र, जगदंबा पब्लिशिंग कंपनी, नई दिल्ली
- समाजशास्त्र, डॉ रवींद्र नाथ टैगोर एवं डॉ भारत अग्रवाल

1.9 निबंधात्मक प्रश्न

1. व्यावहारिक समाजशास्त्र की अवधारणा से आप क्या समझते है? इसकी प्रकृति को स्पष्ट कीजिए।

2. व्यावहारिक समाजशास्त्र का अध्ययन क्षेत्र का वर्णन कीजिए।

3. व्यावहारिक समाजशास्त्र का महत्व को नस्पष्ट कीजिए।

इकाई – 02 सामाजिक व्यवस्था: अवधारणा, सामाजिक व्यवस्था की विशेषतायें

Social System: Concept, Problem of Social System

इकाई की रूपरेखा

2.0 प्रस्तावना

2.1 उद्देश्य

2.2 सामाजिक व्यवस्था की अवधारणा

2.3 सामाजिक व्यवस्था की विशेषताएँ

2.4 सारांश

2.5 पारिभाषिक शब्दावली

2.6 अभ्यासार्थ प्रश्न

2.7 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

2.8 सहायक / उपयोगी पाठ्य सामग्री

2.9 निबन्धात्मक प्रश्न

2.10 लघु स्तरीय प्रश्न

2.0 प्रस्तावना

मानव समाज में सामाजिक व्यवस्था अपना एक महत्वपूर्ण स्थान रखती है, जैसा कि हम सब जानते है कि कोई भी समाज स्थिर नहीं रह सकता अर्थात सामाजिक परिवर्तन समाज प्रत्येक समाज में निरन्तर होता रहता है। मानव समाज या मानव जीवन में होने वाले प्रत्येक परिवर्तन समाज को सदैव एक नया स्वरूप प्रदान करता है, जिसके परिणामस्वरूप परिवर्तन सकारात्मक और नकारात्मक दोनों प्रकार से समाज को प्रभावित कर सकते है। अत: समाज को व्यवस्थित बनाये रखने में सामाजिक व्यवस्था अपनी एक महत्वपूर्ण भूमिका का निवर्हन करती है। कोई भी मनुष्य एक अव्यवस्थित समाज में रहकर अपना सम्पूर्ण जीवन व्यवतीत नही कर सकता। यह सर्वविदित है कि मानव अपनी अनेक आवश्यकताओं को पूर्ति के लिए मानव समाज पर निर्भर होता है।

अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए वह प्रत्येक दूसरे व्यक्ति के साथ विभिन्न प्रकार की प्रक्रियायें एवं अन्तक्रियायें करते है। इन्ही क्रियायों को व्यवस्थित करने के लिए सामाजिक व्यवस्था का निर्माण होता है। प्रस्तुत अध्याय में हम सामाजिक व्यवस्था के बारे में सविस्तार अध्ययन करेंगे।

2.1 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात आपके द्वारा समझना सम्भव होगा-

1. आप सामाजिक व्यवस्था की अवधारणा को भली प्रकार समझ पायेगे।
2. सामाजिक व्यवस्था की विशेषतायें, प्रमुख तत्व, सिद्धान्त एवं विशेषताओं को समझ पायेगे।

2.2 सामाजिक व्यवस्था की अवधारणा

जैसा कि हम पूर्व में भी इस बात को स्पष्ट कर चूके है कि मनुष्य एक सामाजिक प्राणी होता है, अपनी आवश्यकताओं की पूर्ती के लिए वह पूर्ण रूप से समाज पर निर्भर होता है, तथा अनेक सामाजिक प्रक्रियाओं के माध्यम से एक व्यक्ति दूसरे व्यक्ति से सम्बन्धित होता है, इन्ही सामाजिक प्रक्रियाओं और अन्तक्रियाओं को सन्तुलित एवं व्यवस्थित करने की प्रक्रिया को सामाजिक व्यवस्था कहा जाता है। डॉ0 अग्रवाल न सामाजिक व्यवस्था की अवधारणा को स्पष्ट करते हुए कहा है कि "सामाजिक व्यवस्था वह स्थिति है जिसमें समाज का निर्माण करने वाले विभिन्न तत्व एक सांस्कृतिक व्यवस्था के अर्न्तगत कार्यात्मक रूप से एक – दूसरे से सम्बद्ध रहते है तथा एक ऐसे सन्तुलन का निर्माण करते है जिसमें विभिन्न संस्थाएँ अपने उद्देश्यों के अनुसार कार्य करके व्यक्तियों की अन्तक्रियाओं को नियमित कर सके। इसका तात्पर्य यह है कि सामाजिक व्यवस्था को एक ऐसी स्थिति कहा जा सकता है जिसके द्वारा समाज की सहयोगी और विरोधी शक्तियों के बीच एक सन्तुलन स्थापित कर दिया गया हो, इस सन्तुलन का निर्माण उस समाज की सांस्कृतिक विशेषताओं को दृष्टि में रखते हुए किया जाता है।"[1] सामाजिक व्यवस्था के सन्दर्भ में यदि हम बात करे इसकी अवधारणा को विकसित करने में प्रमुख समाजशास्त्रियों में हरबर्ट स्पेन्सर, मैक्स वैबर, पैरेटो तथा पारसन्स का विशेष योगदान रहा है। हरबर्ट स्पेन्सर का विश्वास था कि समाज एक प्राणिशास्त्रीय व्यवस्था की भाति है और दोनों की संरचना और कार्य एक समान है। सावयव की भॉति समाज का भी क्रमिक विकास सरल से जटिल रूप में होता है और सावयक की भाति समाज में भी कार्यो का विभाजन और संरचना के विभिन्न अंगों में अन्त: सम्बन्ध व अन्त: निर्भरता देखने को मिलती है।[2] मैक्स वेबर की "सामाजिक व्यवस्था" की व्याख्या "शक्ति की अवधारणा से प्रारम्भ होती है, सामाजिक व्यवस्था शक्ति पर आधारित होती है।" शक्ति से मैक्स वेबर का तात्पर्य "उस अवसर से है जिसको कि एक व्यक्ति या कुछ व्यक्ति किसी सामूहिक क्रिया में अपनी इच्छा की पूर्ति के लिए उस क्रिया में भाग लेने वाले दूसरे व्यक्तियों द्वारा विरोध करने पर भी प्राप्त कर लेते है।"[3] विलफ्रेड़ो पेरेटों का मानना है कि यदि किसी समाज के सदस्यों के गुण सामाजिक संगठन को प्रभावित करते है तो सामाजिक संगठन भी सदस्यों के गुणों को प्रभावित करेगा। इसी को और भी विस्तृत अर्थ में हम इस तरह कह सकते है कि जिस प्रकार एक ओर समाज व्यक्ति के व्यक्तिगत निर्माण में सहायता करके उसे सामाजिक प्राणी के रूप में विकसित करता है। इस प्रकार

समाज का व्यक्ति पर या व्यक्ति का समाज पर एक तरफा प्रभाव नही है बल्कि इन दोनों का दोनों पर एक आन्तरिक प्रभाव और एक का दूसरे के साथ एक घनिष्ठ सम्बन्ध तथा पारस्परिक निर्भरता है।[4] पारसन्स का सामाजिक व्यवस्था सम्बन्धी विचार उनकी प्रख्यात पुस्तक "दि सोशल सिस्टम" जोकि सन् 1951 में प्रकाशित हुई थी, में देखने को मिलता है। पारसन्स के अनुसार, सामाजिक व्यवस्था तब उत्पन्न होती है जबकि एक सामाजिक परिस्थिति मे (जिसका कि एक पक्ष भौतिक हो) तथा सामान्य रूप में स्वीकृति सांस्कृतिक प्रतीकों की एक व्यवस्था के अर्न्तगत अनेक वैयक्तित्व कर्त्ता अपनी इच्छाओं की आदर्श प्राप्ति के लिए परस्पर सामाजिक अन्त: क्रियाओं में लगे होते है। पारसन्स का मानना है कि "अति सरल शब्दों में यह कहा जा सकता है कि सामाजिक व्यवस्था एक ऐसी परिस्थिति में , जिसका कि कम से कम एक भौतिक या पर्यावरण – सम्बन्धी पहलू हो अपनी इच्छाओं या आवश्यकताओं की आदर्श पूर्ति की प्रवृत्ति से प्रेरित एकाधिक वैयक्तिक कत्ताओं की एक – दूसरे के साथ अन्त: क्रियाओं के फलस्वरूप उत्पन्न होती है और इन अन्त: क्रियाओं में लगे हुए व्यक्तियों का पारस्परिक सम्बन्ध तथा उनका उनकी परिस्थितियों के साथ सम्बन्ध सांस्कृतिक रूप में संरचित या स्वीकृत प्रतीकों की एक व्यवस्था द्वारा परिभाषित और माध्य स्थित होता है।"[5] सामाजिक व्यवस्था की अवधारणा के सन्दर्भ में उपरोक्त समाजशास्त्रियों में विचारो को स्पष्ट करने के उद्देश्य को लेकर डॉ0 अग्रवाल का मानना है कि "स्पेन्सर ने समाज को एक व्यवस्था के रूप में स्पष्ट किया। उन्होने बताया कि समाज इस कारण एक व्यवस्था है कि इसके विभिन्न अंग उसी तरह एक – दूसरे से सम्बन्धित रहते है, जिस प्रकार मनुष्य की जीव-रचना के विभिन्न अंग एक – दूसरे से सम्बन्धित रहते है जिस प्रकार मनुष्य की जीव – रचना के विभिन्न अंग एक दूसरे को अपना सहयोग देते हुए कार्य करते है। उसी को सामाजिक व्यवस्था कहा जाता है।" पैरेटो ने समाज के विभिन्न अंगो के बीच पायी जाने वाली अर्न्तक्रिया को "सामाजिक व्यवस्था" के नाम से सम्बोधित किया। इसके बाद वेबर और पारसन्स ने इस अवधारणा पर और अधिक विस्तार से प्रकाश डालते हुए यह बताया कि सामाजिक व्यवस्था का तात्पर्य एक ऐसे सन्तुलन से है जिसका निर्माण विभिन्न सामाजिक इकाइयों की परस्पर सम्बन्धित क्रियाओं से होता है। उदाहरण के लिए जब हम परिवार व्यवस्था आर्थिक व्यवस्था अथवा सांस्कृतिक व्यवस्था की बात करते है, तब हमारा उद्देश्य यह स्पष्ट करना होता है कि परिवार आर्थिक जीवन अथवा संस्कृति का निर्माण करने वाली इकाइयॉ किस तरह एक – दूसरे से सम्बन्धित रहकर एक – दूसरे को सहयोग देती है। [6]इस प्रकार कहा जा सकता है कि सामाजिक व्यवस्था का तात्पर्य है कि समाज का निर्माण करने वाली विभिन्न इकाइयों के मध्य सन्तुलन स्थापित करने वाली एक प्रक्रिया, जिसके परिणामस्वरूप विभिन्न संस्थायें व्यक्ति की प्रक्रियाओं एवं अन्तक्रियाओं को नियन्त्रित कर एक व्यवस्था को स्थापित कर सके।

अनेक समाजशास्त्रियों एवं विद्वानों ने सामाजिक व्यवस्था की अवधारणा को विभिन्न रूपों में परिभाषित किया है। जो निम्नांकित है –

01. जोन्स (M.E. Jones) सामाजिक व्यवस्था वह दशा है जिसके अर्न्तगत समाज के विभिन्न अंग एक दूसरे से तथा सम्पूर्ण समाज के साथ अर्थपूर्ण ढ़ग से सम्बन्धित रहकर कार्य करते है।[7]

02. लूमिस (C.P. Loomis) के अनुसार "सामाजिक व्यवस्था वह है जिसका निर्माण अनेक वैयक्तिक कर्ताओं से होता है, साथ ही यह वह दशा है जिसमें वैयक्तिक कत्ताओं के सम्बन्ध कुछ पूर्व निर्धारित तथा सहभागी प्रतीकों एवं सामाजिक प्रत्याशाओं से निर्धारित होते है।" [8]

03. पार्सन्स के अनुसार "एक सामाजिक परिस्थिति में (जिसका भौतिक अथवा पर्यावरण सम्बन्धी पक्ष होता है) जब अनेक वैयक्तिक कर्त्ता सामान्य रूप से स्वीकृत सांस्कृतिक प्रतीकों की व्यवस्था के अर्न्तगत अपने आदर्श – लक्ष्यों की प्राप्ति के लिए अन्तक्रिया कर रहे होते है, तब इसी स्थिति को हम सामाजिक व्यवस्था कहते है।" [9]

04. मैकाइवर और पेज ने सम्पूर्ण समाज को ही एक व्यवस्था माना है। इसी सन्दर्भ में समाज को परिभाषित करते हुए अपका मानना है कि "समाज रीतियों, कार्य – प्रणालियों, अधिकार और पारस्परिक सहायता, अनेक समूहो और विभाजनों, मानव व्यवहार के नियन्त्रणों और स्वतन्त्रताओं की व्याख्या है। इस सतत् परिवर्तनशील जटिल व्यवस्था को ही समाज कहते है। यह सामाजिक सम्बन्धों को जाल है और सदैव परिवर्तित होता रहता है।" [10]

सामाजिक व्यवस्था की अवधारणा को समझने के लिए हमें यह जानना आवश्यक है कि समाजिक व्यवस्था के अर्थ एवं विभिन्न विद्वानों ने समाजिक व्यवस्था को किस प्रकार परिभाषित किया तथा प्रमुख सिद्धान्त कौन – कौन से है व ऐसे कौन से प्रमुख तत्व है जो सामाजिक व्यवस्था के निर्माण में सहायक है। अत: इन्हे सविस्तार समझना आवश्यक है तभी सामाजिक व्यवस्था की अवधारणा को समझा जा सकता है।

सामाजिक व्यवस्था के तत्व (Elements of Social System)

सामाजिक व्यवस्था के निर्माण में कुछ तत्व अपनी महत्वपूर्ण भूमिका का निवर्हन करते है। पारसन्स ने सामाजिक तत्वों को मुख्यत: पॉच भागों में विभाजित किया है।[11]

1. एकाधिक वैयक्तिकर्ता (Pluarlity of Individual Actors)
2. कर्ताओं के बीच पारस्परिक अन्त:क्रिया (Object of Interaction)
3. अर्न्तक्रियाओं का उद्देश्य (Object of Interaction)
4. परिस्थिति (Situation)
5. सांस्कृतिक व्यवस्था से सम्बन्ध (Relationship to Cultural System)

पारसन्स ने उपरोक्त तत्वों के आधार पर स्पष्ट किया है कि "सामाजिक व्यवस्था के लिए एक से अधिक या अनेक कत्ताओं, जो कि अन्त:क्रिया करते है, की आवश्यकता होती है साथ ही कत्ताओं के मध्य पारस्परिक अन्त:क्रियायें भी होना आवश्यक है। पारसर्न्स का मानना है कि सामाजिक व्यवस्था के लिए उद्देश्य, एक विशिष्ट परिस्थिति तथा अन्यक्रिया करने वाले व्यक्तियों के मध्य सांस्कृतिक व्यवस्था होना अनिवार्य है।"[12]

पारसन्स ने सामाजिक व्यवस्था के दो पक्षों संरचनात्मक तथा संस्थात्मक पक्ष द्वारा किया है।[13]

1 - संरचनात्मक पक्ष (Structural Aspect)

1. नातेदारी व्यवस्था (Kindship system)
2. सामाजिक स्तरण (Social Stratification)
3. शक्ति व्यवस्था (Power System)
4. धर्म तथा मूल्य संगठन (Religious and value organization)

2 – संस्थात्मक पक्ष (Institutional Aspect)

1. सम्बन्धात्मक संस्थाएँ (Relational Institution)
2. नियामक संस्थाएँ (Regulative Institutions)
3. सांसकृतिक संस्थाएँ (Cultural Institutions)
4. सम्बन्धात्मक नियामक संस्थाएँ (Relational Regulative Institution)

लूमिस (C. P. Loomis) के अनुसार[14], सामाजिक व्यवस्था के अध्ययन के लिए उन प्रक्रियाओं का अध्ययन करना आवश्यक है जो समाज की आन्तरिक स्थिति से सम्बन्धित हैं। इस प्रकार इन्हीं प्रक्रियाओं (processes) को सामाजिक व्यवस्था के तत्वों के रूप में देखना चाहिए। लुमिस ने आठ प्रमुख तत्वों का उल्लेख किया-

01. विभिन्न प्रकार के सामाजिक और पारलौकिक विश्वास जो व्यक्ति को मानसिक संघर्षों से छुटकारा दिलाते हैं।
02. सदस्यों में एक-दूसरे के प्रति भावनाएँ।
03. सामाजिक व्यवस्था के अन्तर्गत आवश्यकताओं, लक्ष्यों और उद्देश्यों का समावेश जो किसी व्यवस्था को व्यक्तियों के लिए उपयोगी बनाये रखते हैं।
04. सामाजिक-सांस्कृतिक परिस्थितियों के अन्तर्गत व्यक्तियों के व्यवहारों पर नियन्त्रण रखने के लिए आदर्श-नियमों की एक व्यवस्था।
05. प्रस्थिति और भूमिका (status and role) की व्यवस्था जिससे सामाजिक व्यवस्था क्रियाशील रहती है।
06. पारस्परिक संघर्षों पर नियन्त्रण रखने के लिए एक शक्ति-व्यवस्था (power structure) का होना।
07. समाज द्वारा स्वीकृत मान्यताएँ अथवा सामाजिक मूल्य।

08. समाज द्वारा प्रदत्त सुविधाएँ, जिनसे व्यक्तियों को अपने दायित्वों को पूरा करने की प्रेरणा मिलती है।

अभ्यास प्रश्न – 01

01. सामाजिक व्यवस्था की अवधारणा को विकसित करने का श्रेय किन प्रमुख समाजशास्त्रियों को जाता है।

02. सामाजिक व्यवस्था से सम्बन्धित पुस्तक "दि सोशल सिस्टम" कब प्रकाशित हुई।

03. पैरेटो ने समाज के विभिन्न अंगो के बीच पायी जाने वाली अर्न्तक्रिया को किस नाम से सम्बोधित किया है।

04. पारसन्स ने सामाजिक व्यवस्था के तत्वों को मुख्यत: कितने भागों में विभाजित किया है।

05. पारसन्स ने सामाजिक व्यवस्था के कौन-कौन से दो प्रमुख पक्षों का उल्लेख किया है।

06. लूमिस ने सामाजिक व्यवस्था के कितने प्रमुख तत्वों का उल्लेख किया है।

समाजशास्त्रीय व्यवस्था के समाजशास्त्रीय सिद्धान्त

01. चार्ल्स लूमिस (Charles Loomis)[15] – चार्ल्स लुमिस के अनुसार सामाजिक व्यवस्था समाज की आन्तरिक स्थिति है। इसकी सहायता से समाज के आन्तरिक पक्ष का ज्ञान होता है। यही कारण है कि उसने सामाजिक व्यवस्था का वर्णन करते हुए आन्तरीकरण के अध्ययन को विशेष महत्व प्रदान किया है। उसने लिखा है कि अन्त:क्रिया समाजशास्त्र का महत्वपूर्ण अंग है। सामाजिक अन्त:क्रियाओं के माध्यम से ही सामाजिक सम्बन्धों की स्थापना होती है और सामाजिक तत्वों का प्रदर्शन होता है। इन तत्वों का स्पष्टीकरण सामाजिक प्रक्रियाओं के माध्यम से ही होता है। इन्ही सामाजिक प्रक्रियाओं की गतिशीलता सामाजिक व्यवस्था का निर्धारण करती है।

02. मॉर्गन (Morgan)[16] उद्विकासवादी विचारकों में मार्गन का नाम सर्वप्रमुख है। मार्गन ने सामाजिक व्यवस्थाओं का वर्गीकरण या उनका वर्णन उद्विकासवादी सिद्धान्त के आधार पर किया है। "मॉर्गन का विचार है कि समाज का उद्विकास सिद्धान्त के आधार पर किया है। मार्गन का विचार है कि समाज का उद्विकास विभिन्न सामाजिक और सांस्कृतिक उद्विकास के प्रत्येक स्तर पर समाज में किसी न किसी प्रकार की व्यवस्था का अस्तित्व रहा ह।"

मॉर्गन ने सामाजिक उद्विकास के निम्नलिखित तीन स्तर बताये है-

01. जंगली सामाजिक व्यवस्था (Savagery Social System) - मार्गन के अनुसार सामाजिक उद्दिवकास की पहली अवस्था वह थी जब मनुष्य जंगलों में जानवरों की भाँति इधर से उधर भटकता फिरता था। इस अवस्था में उसकी न तो कोई संस्कृति ही थी और न ही सामाजिक व्यवस्था के कोई चिह्न ही थे। जंगली अवस्था के माध्यम से लोगों ने शिकार करने, मछली पकड़ने और फल-फूल इकट्ठा

करने की कला सीख ली, इसके साथ ही आग जलाने की कला का भी आविष्कार हुआ। जंगली जानवरों का शिकार करने के लिए मनुष्य ने धनुष-वाण का भी आविष्कार किया। संक्षेप में, यह मनुष्य की आखेट अवस्था थी जिसमें यह पूर्ण जंगली जीवन व्यतीत करता था।

02. असभ्य सामाजिक व्यवस्था (Barbarian Social System) - सामाजिक उद्विकास के परिणामस्वरूप मनुष्य निरन्तर प्रगति करता गया। उसने विभिन्न प्रकार के बर्तनों और औजारों का प्रयोग किया। साथ ही उसने कृषि करने की कला भी सीखी, परिणामस्वरूप विभिन्न प्रकार के पौधों को उत्पन्न करने लगा। कृषि के विकास के परिणामस्वरूप व्यक्ति के जीवन में स्थायित्व का विकास हुआ, एक स्थान से दूसरे स्थान भटकने वाला समुदाय जमीन के साथ बँध गया। एक ही रक्त सम्बन्धी व्यक्ति एक साथ रहने लगे और परिणामस्वरूप सामुदायिक भावना का विकास हुआ। व्यक्ति ने धर्म, परिवार, प्रथा आदि महत्वपूर्ण परम्पराओं और सामाजिक व्यवस्थाओं को विकसित किया। मॉर्गन के अनुसार इस युग की सामाजिक व्यवस्था को मध्यकालीन सामाजिक व्यवस्था कहकर भी सम्बोधित किया जा सकता है।

03. सभ्य सामाजिक व्यवस्था (Civilized Social System) - मॉर्गन के अनुसार मानव उद्विकास की तीसरी और अन्तिम अवस्था सभ्य अवस्था है। द्वितीय अवस्था के उत्तरकाल में मनुष्य की सबसे बड़ी उपलब्धि थी लोहे का आविष्कार। इस आविष्कार के परिणामस्वरूप उसने लोहे के विभिन्न प्रकार के उपकरणों का प्रयोग करना शुरू किया परिणामस्वरूप उसने सभ्य युग में प्रवेश किया। मॉर्गन के अनुसार यह मानव के औद्योगिक विकास की अवस्था है। इस सामाजिक व्यवस्था में धर्म, नातेदारी, जादू और यौन भेद के महत्व में कमी आयी। राजनीतिक संस्थाओं का विकास हुआ तथा विभिन्न उद्देश्यों की पूर्ति के लिए अनेक संस्थाओं और समितियों का विकास हुआ ।

इमाइल दुर्खीम (Emile Durkheim) [17]- दुर्खीम ने अपनी महत्वपूर्ण पुस्तक 'समाज में श्रम का विभाजन' (The Division of Labour in Society) के प्रथम भाग में सामाजिक व्यवस्था के महत्वपूर्ण सिद्धान्त का प्रतिपादन किया है। दुर्खीम का विचार है कि सामाजिक व्यवस्था कोई स्थायी अवधारणा नहीं है। परिवर्तन के परिणामस्वरूप सामाजिक व्यवस्था में परिवर्तन होता है। उसने अपनी पुस्तक में निम्न दो प्रकार की सामाजिक व्यवस्था का वर्णन किया है:

01. यान्त्रिक सामाजिक व्यवस्था (Mechanical Social System) - समाज में श्रम विभाजन की विवेचना करते हुए दुर्खीम ने स्वीकार किया है कि आदिकाल में श्रम विभाजन नहीं पाया जाता था। सम्पूर्ण सामाजिक व्यवस्था एक यन्त्र की भाँति होती है। आदिकालीन समाज में यान्त्रिक व्यवस्था पायी जाती थीं इसका कारण यह था कि सदस्यों की संख्या अत्यन्त ही सीमित होती थी, उनकी आवश्यकताएँ सीमित थीं और उनका सामाजिक जीवन अत्यन्त ही संगठित था। समाज के सभी व्यक्तियों के आचार-विचार, धारणाएँ, मूल्य और जीवन के उद्देश्यों में समानता थी। धर्म, परिवार और परम्पराओं का आदर किया जाता था। नैतिक दबाव समाज के सभी व्यक्तियों को एकता के सूत्र में बाँधे रहते थे। व्यक्तिवाद के स्थान पर समूहवाद की भावना अत्यन्त प्रबल थी। सम्पूर्ण समाज एक यन्त्र

की भाँति था। जिस प्रकार यन्त्र के विभिन्न पुर्जे सम्पूर्ण यन्त्र से बँधे होकर अपने कार्यों का संचालन करते हैं, ठीक उसी प्रकार मनुष्य भी समाज से यन्त्र की भाँति बँधा हुआ था। वह आँख मूँदकर बिना किसी प्रकार के तर्क के धर्म, ईश्वर और राजा की आज्ञा का पालन करता था। सामाजिक आदेशों का पालन यन्त्र की भाँति करता था।

02. सावयवी सामाजिक व्यवस्था (Organic Social System) – दुर्खीम के अनुसार आदिकालीन सामाजिक व्यवस्था अधिक दिनों तक स्थायी नहीं रह सकी। जैसे-जैसे आदिकालीन परिस्थितियाँ बदलती गयी, यान्त्रिक व्यवस्था में भी परिवर्तन होता गया। जनसंख्या में वृद्धि के साथ-साथ व्यक्ति की आवश्यकताओं में भी वृद्धि हुई। परिणामस्वरूप समाज में श्रम-विभाजन की आवश्यकता का अनुभव किया जाने लगा। श्रम-विभाजन के परिणामस्वरूप विशेषीकरण का महत्व बढ़ा। सावयवी सामाजिक व्यवस्था ने व्यक्तिवाद के स्थान पर समूहवाद के महत्व का प्रतिपादन किया। व्यक्तियों के विचारों, भिन्नताओं का विकास हुआ। इसका परिणाम यह हुआ कि नवीन सामाजिक व्यवस्था का जन्म हुआ। इस व्यवस्था में यान्त्रिक व्यवस्था समाप्त हो गयी। व्यक्ति समाज के साथ यन्त्र की भाँति न रहकर उसके अंग की भाँति रहने लगा। विशेषीकरण से व्यक्ति के महत्त्व में वृद्धि हुई। इस सामाजिक व्यवस्था में व्यक्ति ने परम्परात्मक मूल्यों के स्थान पर नवीन मूल्यों का प्रतिपादन किया।

पैरेटो (Pareto)[18] पैरेटो ने सामाजिक व्यवस्था के बारे में ऑगस्त कॉम्टे और हरबर्ट स्पेंसर द्वारा प्रतिपादित विचारों से असहमति व्यक्त की है। उसने स्वीकार किया है कि समाज एक सामाजिक व्यवस्था है। किसी भी समाज की सामाजिक व्यवस्था सामाजिक सन्तुलन पर निर्भर रहती है। सामाजिक सन्तुलन के आचार दर ही सामाजिक व्यवस्था का जन्म होता है, उसे स्थायित्व प्राप्त होता है और वह कार्य करती है। सामाजिक सन्तुलन के द्वारा समाज को संगठित तथा विघटित करने वाली शक्तियाँ संगठित रहती है। उसने स्वीकार किया कि प्रत्येक समाज में दोनों ही विरोधी शक्तियाँ पायी जाती हैं। ऐसा कोई भी समाज नहीं है जिसमें किसी भी एक शक्ति का पूरी तरह से अभाव हो। सामाजिक व्यवस्था के लिए समाज को संगठित और विघटित करने वाली शक्तियों में सन्तुलन होना आवश्यक हैं।

मैक्स वेबर (Max Weber)[19] मैक्स वेबर ने शक्ति (Power) को सर्वोच्च महत्ता प्रदान की है। उसके द्वारा शक्ति के माध्यम से ही सामाजिक व्यवस्था का जन्म होता है। शक्ति की व्याख्या करते हुए मैक्स वेबर ने लिखा है कि शक्ति से मेरा तात्पर्य उस अवसर से है जिसको कि एक व्यक्ति या कुछ व्यक्ति किसी सामूहिक क्रिया में अपनी इच्छा की पूर्ति में, उस क्रिया में भाग लेने वाले दूसरे व्यक्तियों का विरोध करने पर भी प्राप्त कर लेते हैं। मैक्स वेबर ने लिखा है कि शक्ति के द्वारा समाज के व्यक्तियों को विशिष्ट अवसर प्राप्त होता है। इन अवसरों के द्वारा व्यक्ति सामाजिक जीवन में विभिन्न प्रकार के पदों को प्राप्त करता है। ये पद उसे सामाजिक जीवन में प्रतिष्ठा दिलाते हैं। मैक्स वेबर ने स्वीकार किया है कि आर्थिक अवसरों द्वारा जो शक्ति प्राप्त होती , वह साधारण शक्ति से भिन्न होती है। आर्थिक प्रतिष्ठा के द्वारा व्यक्ति अन्य क्षेत्रों में भी प्रतिष्ठा प्राप्त करता है। आज भी हम देखते हैं कि जो व्यक्ति आर्थिक दृष्टि से सम्पन्न हैं, उन्हें सामाजिक तथा राजनीतिक क्षेत्रों में भी प्रतिष्ठा प्राप्त होती है। समाज में व्यक्ति की प्रतिष्ठा धन के अतिरिक्त अन्य अनेक गुणों पर आधारित है।

मैक्स वेबर ने व्यवस्थाओं को निम्नलिखित तीन भागों में बाँटा है:

01. सामाजिक व्यवस्था (Social System) - सामाजिक व्यवस्था के अन्तर्गत समाज की सम्पूर्ण आर्थिक, राजनैतिक व्यवस्थाएँ आ जाती है। दूसरे शब्दों में, सम्पूर्ण व्यवस्था को सामाजिक व्यवस्था के नाम से जाना जाता है।

02. आर्थिक व्यवस्था (Economic System) – आर्थिक व्यवस्था के अन्तर्गत उन तरीकों और विधियों को सम्मिलित किया जाता है जिनकी सहायता से आर्थिक वस्तुओं और सेवाओं का विकास और पयोग किया जाता है।

03. वैधानिक व्यवस्था (Legal System) - उस व्यवस्था को वैधानिक व्यवस्था के नाम से जाना जाता है जिसकी सहायता से सामाजिक और आर्थिक व्यवस्थाओं को सुचारु रूप से चलाने में मदद मिलती है।

सोरोकिन (Sorokin)[20] सोरोकिन के अनुसार सामाजिक व्यवस्था सांस्कृतिक व्यवस्थाओं से सम्बन्धित रहती है। सामाजिक व्यवस्था को प्रभावित करने वाली सांस्कृतिक व्यवस्थाओं को निम्नलिखित भागों विभाजित किया जाता है-

01. भावात्मक सांस्कृतिक व्यवस्था (Ideational Cultural System) - इस सांस्कृतिक व्यवस्था में व्यक्ति धर्म और आध्यात्मिकता को सर्वोच्च महत्व प्रदान करता था। धर्म और ईश्वर-आधास्ति परम्पराएँ, विचार और आदर्शों को प्राथमिकता प्रदान की जाती थी। व्यक्ति की क्रियाओं को संचालित करने में परिवार, समुदाय और धर्म का विशेष महत्व था। जीवन के हर एक क्षेत्र में धर्म और परम्पराएँ प्रमुख थीं। परिवार, विवाह और अन्य सामाजिक संस्थाएँ आध्यात्मिकता पर आधारित थीं। परम सत्य की खोज करना ही व्यक्ति के जीवन का मुख लक्ष्य होता था।

02. आदर्शात्मक सांस्कृतिक व्यवस्था (Idealistic Cultural System) - इस सांस्कृतिक व्यवस्था को संक्रमण कर तीन सांस्कृतिक व्यवस्था के नाम से भी जाना जाता है। जब भावात्मक सांस्कृतिक व्यवस्था में संक्रमण पैदा होता है तो इसके परिणामस्वरूप थोड़े समय के लिए आदर्शात्मक सांस्कृतिक व्यवस्था का जन्म होता है। इस सांस्कृतिक व्यवस्था में दोनों प्रकार की संस्कृतियों की मिली-जुली विशेषताएँ पायी जाती हैं।

03. चेतनात्मक सांस्कृतिक व्यवस्था (Sensate Cultural System) - सोरोकिन के अनुसार, चेतनात्मक सांस्कृतिक व्यवस्था भौतिक सुख-साधनों से सम्पन्न होती है। व्यक्ति के पद एवं कार्यों का निर्धारण भौतिक वस्तुओं या धन के आधार पर होता है। सामाजिक संस्थाओं और समितियों का जन्म भी आर्थिक उद्देश्यों के परिणामस्वरूप होता है। व्यक्ति के जीवन का उद्देश्य भौतिक सुख-साधनों की प्राप्ति होता है, इन्ही उद्देश्यों की प्राप्ति के लिए वह अनेक सामाजिक संस्थाओं को विकसित करता है। इस युग में सामाजिक व्यवस्था में धर्म, प्रथा एवं परम्परा का महत्व कम होता है। इस युग में सामाजिक व्यवस्था का मुख्य उद्देश्य अधिकाधिक ऐन्द्रिक सुख प्राप्त करना होता है।

पारसन्स (Parsons)[21] पारसन्स ने दो महत्वपूर्ण सिद्धान्तों का प्रतिपादन किया है जिसमें पहला तत्व सामाजिक व्यवस्था है और दूसरा तत्व सामाजिक क्रिया। यद्यपि सामाजिक व्यवस्था के बारे में पारसन्स से पहले भी अनेक विद्वानों ने अपने विचारों का प्रतिपादन किया है किन्तु इन सभी विचारकों की तुलना में पारसन्स का योगदान सर्वाधिक महत्वपूर्ण है। सामाजिक क्रिया और सामाजिक व्यवस्था के कारण ही पारसन्स आज मूर्धन्य समाजशास्त्रियों में गिना जाता है। आधुनिक समाजशास्त्र को पारसन्स की सबसे महत्वपूर्ण देन उसका सामाजिक व्यवस्था का सिद्धान्त है।

पारसन्स ने सामाजिक व्यवस्था के महत्वपूर्ण सिद्धान्त का प्रतिपादन अपनी प्रख्यात पुस्तक 'सामाजिक व्यवस्था' (The Social System) में किया है। पारसन्स की यह पुस्तक 1951 में पहली बार प्रकाश में आयी है। पारसन्स के अनुसार सामाजिक आवश्यकताएँ होती हैं। इन आवश्यकताओं के सन्दर्भ में व्यक्ति को अनेक सामाजिक क्रियाएँ करनी पड़ती हैं। व्यक्ति सामाजिक प्राणी है इसके परिणामस्वरूप वह अन्य प्राणियों के साथ सामाजिक अन्तक्रियाएँ (Social Interactions) करता रहता है। इन्हीं सामाजिक अन्तःक्रियाओं के परिणामस्वरूप सामाजिक व्यवस्था का जन्म होता है। इस सन्दर्भ में पारसन्स ने जो विचार व्यक्त किये हैं, वे इस प्रकार है- "अत्यन्त ही सरल शब्दों में यह कहा जा सकता है कि सामाजिक व्यवस्था एक ऐसी परिस्थिति में, जिसका कि कम से कम एक भौतिक या वातावरण सम्बन्धी पहलू हो, अपनी इच्छाओं या आवश्यकताओं की आदर्श पूर्ति की प्रवृत्ति से प्रेरित एक या एक से अधिक वैयक्तिक कर्ताओं की एक-दूसरे के साथ अन्तक्रियाओं के फलस्वरूप उत्पन्न होती है। इन अन्तक्रियाओं में लगे व्यक्तियों के साथ सम्बन्ध सांस्कृतिक रूप से संरचित तथा स्वीकृत प्रतीकों की एक व्यवस्था द्वारा परिभाषित और व्यवस्थित होता है।"

2.3 सामाजिक व्यवस्था की विशेषतायें

01. सामाजिक व्यवस्था अमूर्त होती है – मनुष्य अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति के लए समाज में निवासरत अन्य व्यक्तियों के साथ विभिन्न अन्तक्रियायें एवं प्रक्रियाये करता है, जिससे समाज में एक व्यवस्था उत्पन्न होती है। अन्तक्रियाये एवं प्रक्रियाये अमूर्त होती है। अत: सामाजिक व्यवस्था अमूर्त होती है।

02. मूल्यों एवं नियमों पर आधारित – प्रत्येक समाज में व्यवस्था एवं सन्तुलन स्थापना के लिए समाज द्वारा स्वीकृत आदर्श मूल्य एवं रीतियों का निर्माण किया जाता है। समाज में निवासरत प्रत्येक व्यक्ति इन्ही मूल्यों एवं रीतियों के अनुरूप अपनी अन्तक्रियाये करता है। अत: सामाजिक व्यवस्था की एक विशेषता यह है के इसका निर्माण आदर्श मूल्यों एवं नियमों के आधार पर होता है।

03. गतिशीलता का गुण – सामाजिक व्यवस्था कभी भी स्थिर नहीं होती है, जैसा कि हम सब जानते है कि प्रत्येक मनुष्य अपनी अनेक आवश्यकताओं की पूर्ती हेतु समाज से जुड़ा रहता है, जब-जब आवश्यकताओं में परिवर्तन होता है तब-तब व्यक्ति की अन्तक्रियाये एवं प्रक्रियायें भी परिवर्तित होती रहती है। अत: सामाजिक व्यवस्था में परिवर्तन का गुण पाया जाता है जो समाज में सन्तुलन बनाये रखने में सहयोग प्रदान करता है।

04. सामाजिक नियन्त्रण में सहायक – सामाजिक व्यवस्था की एक प्रमुख विशेषता यह होती है कि यह संस्कृति, मूल्यों, रीति-रिवाज एवं मानदण्डो के अनुरूप व्यक्ति को अन्तक्रियायें एवं प्रक्रियाये करने को बाध्य करता है। कोई भी मनुष्य इन नियमों के विरूद्ध कोई भी कार्य नही करता, जिससे समाज सन्तुलित एवं व्यवस्थित बना रहता है।

05. प्रस्थिति एवं भूमिका निर्धारण – किसी भी समाज में प्रत्येक व्यक्ति की एक निश्चित स्थिति होती है, सामान्यतया व्यक्ति अपनी प्रस्थिति अपनी क्षमता, योग्यता एवं कुशलता के आधार पर प्राप्त करता है। अपनी प्रस्थिति की अनुरूप ही व्यक्ति अपनी विभिन्न भूमिकाओं का निवर्हन करता है। सामाजिक व्यवस्था व्यक्ति की प्रस्थिति एवं भूमिका के निर्धारण में सहयोग प्रदान करती है जिसे समाज में सन्तुलन एवं एकीकरण बना रहे।

अभ्यास प्रश्न – 02

01. मार्गन ने सामाजिक व्यवस्थाओं का वर्गीकरण किस सिद्धान्त के आधार पर किया है ?

02. इमाइल दुर्खीम ने अपनी किस पुस्तक में सामाजिक व्यवस्था के सिद्धान्त का प्रतिपादन किया ?

03. मैक्स वेबर ने व्यवस्थाओं को कितने भागों में बाटा है?

04. सोरोकिन के अनुसार सामाजिक व्यवस्था किस प्रकार की व्यवस्था से सम्बन्धित रहता है ?

05. सोरोकिन ने सांस्कृतिक व्यवस्थाओं को कितने भागों में बाटा है?

2.4 सारांश

सम्पूर्ण अध्याय के अध्ययन के पश्चात सार रूप में कहा जा सकता है कि सामाजिक व्यवस्था के अभाव में सम्पूर्ण समाज विघटित होने लगता है, क्योकि सामाजिक व्यवस्था व्यक्ति की विभिन्न सामाजिक क्रियाओं, प्रक्रियाओं एवं अन्तक्रियाओं को नियन्त्रित कर समाज को सन्तुलित एवं व्यवस्थित बनाये रखने में अपनी एक महत्वपूर्ण भूमिका का निवर्हन करती है। सामाजिक व्यवस्था व्यक्ति को व्यस्थित एवं सन्तुलित रूप से अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति हेतु समाज में अन्तक्रियाओं को करने के लिए प्रेरित करती है जिससे व्यक्ति अपनी प्रस्थिति एवं भूमिका के अनुरूप एक समान्य जीवन का निवर्हन कर सके। इस प्रकार सामाजिक व्यवस्था सम्पूर्ण समाज को नियन्त्रित कर सन्तुलित एवं व्यवस्थित बनाये रखने में एक महत्वपूर्ण भूमिका का निवर्हन करती है।

2.5 पारिभाषिक शब्दावली

01. सामाजिक व्यवस्था- किसी भी समाज में सामाजिक व्यवस्था का तात्पर्य उस दशा से है जिसमें व्यक्ति एवं समाज की विभिन्न इकाइया एक साथ मिलकर कार्यात्मक सन्तुलन एवं व्यवस्था का निर्माण करती है।

2.6 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

01 – अभ्यास प्रश्न एक के उत्तर

1- स्पेन्सर, बैबर, पैरेटो तथा पारसन्स, 2-1951,

3- सामाजिक व्यवस्था 5- पॉच भागों में

6- संरचनात्मक पक्ष तथा संस्थात्मक पक्ष 7- 08

02 – अभ्यास प्रश्न दो के उत्तर

1- उद्धविकासवादी सिद्धान्त 2- समाज में श्रम विभाजन

3- तीन 4- सांस्कृतिक व्यवस्था

5- तीन भागों में

2.7 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

01. अग्रवाल जी0के0 "मानव समाज" साहित्य भवन पब्लिशर्स एण्ड डिस्ट्रीब्यूटर्स आगरा – 2000 पे0न0 – 304
02. मुकर्जी, "सामाजिक विचारधारा कॉम्ट से मुकर्जी तक" विवेक प्रकाशन जवाहर नगर, दिल्ली – 2009 पे0न0 – 76
03. उपरोक्त पे0न0 – 279
04. उपरोक्त पे0न0 – 241
05. उपरोक्त पे0न0 – 352 – 353
06. अग्रवाल जी0के0, "समाजशास्त्र" साहित्य भवन पब्लिकेशन्स आगरा, पे0न0 – 54
07. Jones, Basic Sociological Principles Pg no – 210
08. C.P. Loomis , Social System Pg no. – 163
09. Parsons, The Social System Pg no. – 5,6
10. Maclver and Page, Society 1956 Pg no – 05
11. बघेल डी0एस0, "महान समाजशास्त्रीय विचारक" 2002 मध्य प्रदेश हिन्दी ग्रन्थ अकादमी भोपाल पे0न0 – 215
12. उपरोक्त पे0न0– 215

13. उपरोक्त पे0न0– 216 – 217

14. Loomis C.P "Social System" 1980

15. Loomis C.P "Social System" 1980

16. बघेला, "उच्चतर समाजशास्त्र " – 2005 साहित्य भवन आगरा, पे0न0 – 132

17. इमाल दुर्खीम, "उच्चतर समाजशास्त्र " – पे0न0 – 132

18. उपरोक्त पे0न0 – 133

19. उपरोक्त पे0न0 – 133

20. सारोकिन , "उच्चतर समाजशास्त्र " – पे0न0 – 133

21. पारसन्स , "उच्चतर समाजशास्त्र " – पे0न0 – 133

2.8 सहायक /उपयोगी पाठ्य सामग्री

01. Talcott Parsons "The Social System" – 1952

02. डी.एस0 बघेल, "उच्चतर समाजशास्त्र" – 2005

03. जी0के0 अग्रवाल, "मानव समाज" – 2000

04. विधाभूषण, डी0आर0 सचदेव, "समाजशास्त्र के सिद्धान्त" – 2010

05. रवीन्द्र नाथ मुकर्जी, "सामाजिक विचारधारा" – 2009

06. Loomis, "Social System" – 1990

2.9 निबन्धात्मक प्रश्न

01. सामाजिक व्यवस्था से आप क्या समझते है एवं इसकी प्रमुख विशेषताओं को स्पष्ट करियें ?

02. सामाजिक व्यवस्था की अवधारणा को स्पष्ट कीजिए ?

03. पारसन्स द्वार वर्णित सामाजिक व्यवस्था के तत्वों को स्पष्ट करिये ?

04. सामाजिक व्यवस्था की अवधारणा तथा तत्वों की विवेचना कीजिए ?

05. सामाजिक व्यवस्था के समाजशास्त्रीय सिद्धान्त की विस्तार पूर्वक व्याख्या कीजिए ?

2.10 लघु स्तरीय प्रश्न

01. सामाजिक व्यवस्था से आप क्या समझते है?

02. सामाजिक व्यवस्था के तत्व लिखिये?

03. सामाजिक व्यवस्था की विशेषताये लिखिये?

इकाई-3 सामाजिक योजना: सामाजिक योजना का अर्थ और उद्देश्य

Social Planning: Meaning and Objectives of Social Planning

इकाई की रूपरेखा

3.0 प्रस्तावना

3.1 उद्देश्य

3.2 सामाजिक योजना की आवश्यकता

3.3 सामाजिक योजना का अर्थ एवं परिभाषा

3.4 सामाजिक योजना की विशेषताएं

3.5 सामाजिक योजना के उद्देश्य

3.6 सामाजिक योजना की प्रकृति

3.7 सामाजिक योजना की प्रक्रिया

3.8 सामाजिक योजना के प्रकार

3.9 सामाजिक योजना का महत्व

3.10 सारांश

3.11 पारिभाषिक शब्दावली

3.12 संदर्भ ग्रंथ सूची

3.13 निबन्धात्मक प्रश्न

3.0 प्रस्तावना

समाज में निरंतर परिवर्तन होते रहते हैं। ये परिवर्तन सामाजिक, आर्थिक, सांस्कृतिक, शैक्षणिक और धार्मिक संरचनाओं में होते हैं। ये परिवर्तन समाज की आवश्यकताओं और जरूरतों को जन्म देने का कार्य करते हैं। इस प्रक्रिया के परिणामस्वरूप समाज में पुरानी समस्याएं जटिलता का रूप ले लेती हैं। ऐसी स्थिति में समाज

की सामाजिक संरचनाओं को व्यवस्थित तरीके से आगे बढ़ाना आवश्यक हो जाता है। जिससे समाज में विकास को गति मिल सके और समाज के सभी वर्गों के लोग आगे बढ़ सकें।

ऐसी स्थिति में समाज के लिए योजनाओं की आवश्यकता पड़ती है। से योजनाएं व्यक्तियों और समाज की दिशा और दशा बदलने में सहायक होती हैं। यही योजनाऐं आगे चलकर सामाजिक योजना के रूप में जानी जाती हैं।

शिक्षार्थियो अब आपके मस्तिष्क में प्रश्न उठ रहा होगा की सामाजिक योजना का आखिर आशय क्या है? शिक्षार्थियो सामाजिक योजना एक ऐसी समिन्वत, वैज्ञानिक और उद्देश्यपूर्ण प्रक्रिया है जो समाज में उत्पन्न समस्याओं का निदान करती है, जिससे लोगों के जीवन स्तर और जीवन की गुणवत्ता में सुधार होता है। इस प्रकार आप समझ सकते हैं कि सामाजिक योजना समाज के विकास और जनकल्याण का मूल आधार स्तम्भ होती है। यह समाज की समस्याओं को समझकर उसके समाधान के लिए वैज्ञानिक उपाय प्रस्तुत करती है। आज सामाजिक असमानताऐं, बेरोजगारी, लैंगिक असमानता, स्वास्थ्य सुविधाओं की समस्याऐं आदि अनेक सामाजिक समस्याओं से समाज की चुनौतियां बढ़ रही हैं। इन चुनौतियों के निराकरण के लिए सामाजिक योजना महत्वपूर्ण बन जाती है। इस इकाई की शुरूआत करने से पहले सर्वप्रथम यह जानने की आवश्यकता है कि आखिर सामाजिक योजनाओं की आश्यकता पड़ी क्यों?

3.1 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात्

1. शिक्षार्थियो आप समझ पायेंगे-
2. सामाजिक योजना क्या है और इसकी समाज में आवश्यकता क्यों पड़ती है।
3. सामाजिक योजना की अवधारणा और विशेषताओं का ज्ञान प्राप्त कर पाने में सक्षम होंगे।
4. सामाजिक योजना के उद्देश्य और प्रकृति पर भी आप अपनी समझ विकसित कर सकेंगे।
5. सामाजिक योजना के महत्व और स्वरूपों विषय में जान सकेंगे।
6. सामाजिक योजना से आये परिवर्तनों के विषय में अपनी समझ विकसित कर सकेंगे।

3.2 सामाजिक योजना की आवश्यकता

शिक्षार्थियो स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद भारती की स्थिति संतोषजनक नहीं थी। गरीबी, अशिक्षा, बेरोजगारी, स्वास्थ्य सुविधाओं की कमी, ग्रामीण-शहरी अंतर, जातिगत असमानता और लैंगिक असमानता जैसी गंभीर चुनौतियां हमारे देश के सम्मुख थी। इन गंभीर चुनौतियों से देश को कैसे बाहर निकाला जाये, इसके लिए देश को एक समन्वित, वैज्ञानिक और दीर्घकालीन योजना प्रणाली की आवश्यकता महसूस हुई। इस योजना प्रणाली का मुख्य उद्देश्य संसाधनों का न्यायपूर्ण वितरण करना था जिससे समाज के उन तमाम वर्गों के

लोग लाभांवित हो सकें। जो अंतिम पायदान पर खड़े थे। इन कमजोर और वंचित वर्ग के लोगों को समाज की मुख्यधारा में जोड़ने के लिए सामाजिक योजनाओं की आवश्यकता पड़ी। देश ने पंचवर्षीय योजनाओं, कल्याणकारी नीतियों और सामाजिक सुरक्षा कार्यक्रमों के माध्यम से देश के विकास को दिशा देने का कार्य किया।[1] इसका मुख्य उद्देश्य विकास को समस्त जनमानस तक पहुँचाया था।

3.3 सामाजिक योजना का अर्थ एवं परिभाषा

सामाजिक योजना से आशय उस प्रक्रिया से है, जिसके माध्यम से समाज की समस्याओं, आवश्यकताओं और लक्ष्यों का वैज्ञानिक विश्लेषण करने, उनके समाधान हेतु योजनाऐं तैयार की जाती है। सामाजिक योजनाओं का केन्द्र बिंदु मनुष्य और समाज दोनों ही होते हैं। सामाजिक योजना समाज में समानता, न्याय, सुरक्षा, अवसरों की उपलब्धता और लोगों के जीवन स्तर को बेहतर बनाने के लिए बनाई जाती हैं। इसमें सामाजिक समस्याओं की पहचान, संसाधनों का प्रबंध, नीति निर्माण, योजनाओं का क्रियान्वयन और मूल्यांकन सभी शामिल होते हैं।

विभिन्न विद्वानों द्वारा सामाजिक योजना की परिभाषाऐं दी गई है। विभिन्न विद्वानों द्वारा सामाजिक योजना के विषय में दी गई प्रमुख परिभाषायें निम्नलिखित हैं-

1. रिचर्ड टिटमस के अनुसार 'सामाजिक योजना एक संगठित प्रयास है, जो सामाजिक व्यवस्था को बेहतर भविष्य के लिए प्रभावित और विकसित करने का कार्य करता है।'[2]
2. पॉल चौधरी के अनुसार 'सामाजिक योजना का अर्थ है सामाजिक आवश्यकताओं की पहचान करना, सामाजिक आवश्यकताओं की पहचान करके, सामाजिक विकास हेतु संसाधनों की व्यवस्था करना।'[3]
3. गोडॅन के अनुसार- 'सामाजिक योजना मानव कल्याण के लिए, सामाजिक संसाधनों का सोच-समझकर और तर्कसंगत तरीके से उपयोग करने की प्रक्रिया है।'[4]
4. राबर्ट मर्टन के अनुसार 'सामाजिक योजना व्यवस्थित प्रक्रियाओं के माध्यम से इच्छित सामाजिक परिवर्तन लाने की प्रक्रिया है।'[5]
5. किंग्सले डेविस के अनुसार 'सामाजिक योजना सामाजिक परिवर्तन को दिशा देने की एक निरंतर प्रक्रिया है।'[6]

उपरोक्त विद्वानों के द्वारा दी गई परिभाषाओं से स्पष्ट होता है कि सामाजिक योजना एक संगठित, वैज्ञानिक और उद्देश्यपूर्ण प्रक्रिया है। जिसका मुख्या लक्ष्य समाज में इच्छित और सकारात्मक परिवर्तन लाना है। यह प्रक्रिया सामाजिक आवश्यकताओं की पहचान करती है तथा संसाधनों का तर्कसंगत उपयोग सुनिश्चित करती है।

3.4 सामाजिक योजना की विशेषताएं

सामाजिक योजना एक समन्वित, वैज्ञानिक और लक्ष्य उन्मुख योजना है। सामाजिक योजना की परिभाषाओं के आधार पर निम्नलिखित विशेषताऐं हैं-

I. **लक्ष्य उन्मुखता-** सामाजिक योजना स्पष्ट उद्देश्यों और लक्ष्य उन्मुखता पर आधारित होती हैं। सामाजिक योजना का मुख्य लक्ष्य समाज की समस्याओं का निदान करने की दिशा में ठोस कदम और ठोस रणनीति बनाना होता है।

II. **संगठित और चरणबद्ध प्रक्रिया-** सामाजिक योजना में सामाजिक समस्याओं और समाज की आवश्यकताओं के लिए क्रमबद्ध तरीके से कार्य किये जाते हैं। ताकि समाज की समस्याओं और आवश्यकताओं की पहचान की जा सके। सामाजिक योजना में, सामाजिक समस्याओं की पहचान से लेकर इनके निदान और मूल्यांकन तक की चरणबद्ध योजना बनाई जाती है।

III. **समुदाय की भागीदारी-** सामाजिक योजना के निर्माण एवं क्रियान्वयन में समाज और समुदाय के लोगों की राय और सहभागिता महत्वपूर्ण हो जाती है। जिसके परिणामस्वरूप सामाजिक योजना अधिक प्रभावी बनती है।

IV. **आवश्यकताओं पर आधारित-** सामाजिक योजना का निर्माण समाज की जरूरतों और आवश्यकताओं को ध्यान में रखकर किया जाता है। इसमें यह सुनिश्चित करने में आसानी होती है कि संसाधनों का उपयोग सही दिशा में हो रहा है या नहीं।

V. **परिवर्तन और सुधार पर केन्द्रित-** सामाजिक योजना समाज में सकारात्मक परिवर्तन लाने का कार्य करती हैं। इस परिवर्तन से समाज में मात्रात्मक और गुणात्मक परिवर्तन आते हैं। इससे समाज की वर्तमान स्थिति में सकारात्मक परिवर्तन आता है।

VI. **उपलब्ध संसाधनों का समुचित उपयोग-** सामाजिक योजना समाज के सीमित संसाधनों का अधिकतम उपयोग सुनिश्चित करने का कार्य करती है। इससे कम लागत पर समाज को अधिक फायदा मिलता है।

VII. **दीर्घकालीन दृष्टिकोण-** सामाजिक योजनाऐं सिर्फ तत्कालीन लाभ के लिए नहीं बनाई जाती हैं। ये समाज के सतत् विकास को ध्यान में रखकर निर्मित की जाती है। इसलिए सामाजिक योजनाओं का दृष्टिकोण दीर्घकालीन होता है।

VIII. **निरंतर मूल्यांकन-** सामाजिक योजना की प्रगति का समय-समय पर मूल्यांकन किया जाता है। इस प्रगति में यह सामाजिक योजनाओं की कमियों को दूर करने की दिशा में कार्य किये जाते हैं ताकि सामाजिक योजनाओं के सकारात्मक परिणाम समय में दिखें।

IX. **सामाजिक जोखिमों को कम करना-** सामाजिक योजना समाज के संभावित जोखिमों जैसे- प्राकृतिक आपदाओं, स्वास्थ्य संकट, सामाजिक-आर्थिक अस्थिरता और सामाजिक संघर्ष को कम करती हैं।

X. **सामाजिक सहभागिता को मजबूत करना-** सामाजिक योजनाऐं समाज के लोगों को शामिल करती है। सामाजिक योजनाओं से सामुदायिक सहभागिता मजबूत होती है। जब समाज के लोग स्वयं सामाजिक योजनाओं में शामिल होते हैं, तब टिकाऊ विकास होता है और विकास स्थानीय परिस्थितियों के अनुरूप होता है।

XI. **नवाचार और सामाजिक नवाचार को बढ़ावा देना-** समाज की बदलती आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए नई-नई तकनीकों और नये-नये विचारों की आवश्यकता होती है। सामाजिक योजनाऐं नये सामाजिक मॉडल, नई सेवाऐं और आधुनिक तकनीकों को अपनाने के अवसर प्रदान करती है। जिससे विकास को गति मिलती है।

3.5 सामाजिक योजना के उद्देश्य

शिक्षार्थियो सामाजिक योजना के उद्देश्यों पर निम्नलिखित बिंदुओं के माध्यम से चर्चा की जा रही है।

I. **सामाजिक समस्याओं का समाधान-** सामाजिक योजना का प्रथम और सबसे महत्वपूर्ण उद्देश्य समाज में मौजूद समस्याओं जैसे- बेरोजगारी, अशिक्षा, स्वास्थ्य संसाधनों की समस्या, लैंगिक असमानता और समाज से जुड़ी समस्याओं का समाधान ढूढ़ना है। योजनाऐं समस्या की गहराई को समझकर ऐसे हस्तक्षेप विकसित करती हैं, जो समाज में स्थायी बदलाव ला सके। इसलिए दुर्खीम ने कहा है कि 'समस्या का समाधान तभी संभव है, जब उसे वैज्ञानिक रूप से समझा जाये।'[7]

II. **जीवन गुणवत्ता को सुधारना-** सामाजिक योजना का उद्देश्य समाज में रहने वाले प्रत्येक व्यक्ति के जीवन को बेहतर बनाना है। इसमें स्वास्थ्य, शिक्षा, रोजगार, स्वच्छता, शुद्ध पानी एवं सुरक्षा आति आते हैं। व्यक्तियों के जीवन की गुणवत्ता में सुधार से समाज को गति मिलती है।

III. **राष्ट्रीय विकास को गति देना-** समाज में रहने वाले व्यक्तियों के जीवन की गुणवत्ता में जब सुधार होता है, तब इससे राष्ट्रीय विकास को भी गति मिलती है। जब व्यक्तियों का जीवन स्तर अच्छा होगा, तब जो पैसा बिमारियों में लगता है वह विकास कार्यों में लगेगा। इससे शिक्षा, रोजगार, तकनीकी नवाचार और ग्रामीण विकास को गति मिलेगी।

IV. **संसाधनों का न्यायपूर्ण वितरण-** शिक्षार्थियो जैसा कि आप जानते हैं कि समाज में संसाधन सीमित होते हैं। इसलिए समय में उपलब्ध इन संसाधनों का न्यायपूर्ण उपयोग आवश्यक है। सामाजिक योजना संसाधनों को इस तरह से वितरित करती है कि सभी समुदायों को इन संसाधनों से लाभ मिल सके। इससे समाज में संघर्ष समाप्त होता है।

V. **अवसरों की समानता सुनिश्चित करना-** जब समाज में प्रत्येक व्यक्ति को उसकी योग्यता और क्षमता के अनुरूप समाज में आगे बढ़ने का अवसर मिलेगा, तब इससे उस व्यक्ति की सामाजिक-आर्थिक स्थिति मजबूत होगी। समाज के सभी व्यक्तियों को दिये जाने वाले समान अवसरों से सामाजिक विकास को मजबूती मिलेगी।

VI. **कमजोर वर्गों का उत्थान-** सामाजिक योजना विशेष रूप से उन वर्गों के लिए बनाई जाती है, जो सामाजिक-आर्थिक रूप से कमजोर होते हैं। महिलाऐं, बच्चे, अनुसूचित जाति, जनजाति, दिव्यांगजन और वृद्धों को विशेष रूप से ध्यान में रखकर सामाजिक योजनाओं का निर्माण किया जाता है। इसका मुख्य उद्देश्य कमजोर वर्गों को समाज की मुख्यधारा से जोड़ना है। सामाजिक योजनाओं के द्वारा इन कमजोर वर्गों के लोगों को शिक्षा, स्वास्थ्य और रोजगार उपलब्ध कराया जाता है।

VII. **सामाजिक न्याय की स्थापना-** शिक्षार्थियो समाज में प्रत्येक व्यक्ति को समान अधिकार और समान अवसर प्राप्त होने से व्यक्तियों के तरक्की के रास्ते खुलते हैं। जाति, वर्ग, लिंग, धर्म और आर्थिक स्थिति के कारण उत्पन्न असमानताओं को, सामाजिक योजनाऐं ही समाज से हटाने का कार्य करती हैं। सामाजिक योजनाओं के माध्यम से समाज के अंतिम पायदान पर खड़े व्यक्तियों को भी बराबरी के अवसर मिलते हैं।

VIII. **सामाजिक स्थिरता और सद्भाव बढ़ाना-** सामाजिक योजना समाज और समूहों के बीच समन्वय और सौहार्द बढ़ाने का कार्य करती है। जब लोगों को सम्मान, सुरक्षा, समानता, सहयोग और रोजगार के समान अवसर प्राप्त होते हैं, तब इससे समाज में शांति और सौहार्द स्थापित होता है इसलिए सामाजिक योजनाओं को समाज में शांति, सौहार्द और स्थिरता सुनिश्चित करने का साधन भी कहा जाता है।

IX. **मानव पूंजी का निर्माण-** सामाजिक योजना का उद्देश्य समाज के लोगों की क्षमताओं, कौशलों और निपुणता को बढ़ाना होता है। शिक्षा, प्रशिक्षण, स्वास्थ्य, रोजगार और पोषण जैसी योजनाऐं मानव पूंजी को विकसित करती है। ये प्रत्येक समाज की बड़ी शक्ति होती है। बेहतर मानव पूंजी से समाज में अधिक उत्पादन होता है। इससे व्यक्ति, समाज और देश का विकास भी होता है।

X. **सामाजिक सुरक्षा प्रणाली का निर्माण-** आज के युग में सामाजिक युग में सामाजिक सुरक्षा प्रत्येक व्यक्ति के लिए महत्वपूर्ण होती है। सामाजिक योजना उन व्यवस्थाओं का निर्माण करती हैं, जो किसी दुर्घटना के समय सुरक्षा प्रदान करती है। ये योजनाऐं समाज के कमजोर वर्गों को जीवन के जोखिमों से बचाने के लिए आवश्यक होती है। इन सब उद्देश्यों के अतिरिक्त सामाजिक योजना के अन्य उद्देश्यों के अतिरिक्त सामाजिक योजना के अन्य उद्देश्य भी है। जैसे-

- सामाजिक प्रशासन की अधिक पारदर्शी बनाना।
- नवाचार और सामाजिक नवाचार को बढ़ावा देग।

- पर्यावरण संतुलन और सतत् विकास सुनिश्चित करना।
- सामुदायिक सहभागिता को मजबूत बनाना।
- सामाजिक जोखिमों को कम करना।

3.6 सामाजिक योजना की प्रकृति

शिक्षार्थियो सामाजिक, योजना समाज में सकारात्मक परिवर्तनों को लाने का कार्य करती है। जिससे समाज में परिवर्तन आते हैं। इन परिवर्तनों से लोगों की स्थिति में सुधार आता है। किसी भी विषय को समझने के लिए उस विषय की प्रकृति को जानना आवश्यक हो जाता है। इसी क्रम में इस इकाई में भी सामाजिक योजना की प्रकृति को जानना आवश्यक हो जाता है। सामाजिक योजना की प्रकृति को निम्मलिखित बिन्दुओं के माध्यम से समझाने की कोशिश की जा रही है।

I. **वैज्ञानिक प्रकृति-** सामाजिक योजना वैज्ञानिक वैज्ञानिक सिद्वांतों, सर्वेक्षणों और तथ्यात्मक आँकड़ों पर आधारित होती है। सामाजिक योजना में अनुभवजन्य अध्ययन का बहुत महत्वपूर्ण स्थान है। इससे यह स्पष्ट हो जाता है कि सामाजिक योजना की प्रकृति वैज्ञानिक है।

II. **मानव केन्द्रित दृष्टिकोण**- सामाजिक योजना का मुख्य उद्देश्य समाज के व्यक्तियों की समस्याओं और जरूरतों को समझकर इनका निदान करना होता है। इसलिए मामाजिक योजना के मुख्य केन्द्र बिंदु समाज के लोग होते हैं।

III. **वहुआयामी स्वरुप**- सामाजिक योजना शिक्षा, स्वास्थय, रोजगार, पर्यावरण, स्वच्छता, लैंगिक समानता, महिला सशक्तिकरण, दिव्यांगों के कल्याण और सामाजिक-आर्थिक विकास से संबंधित अनेक क्षेत्रों में कार्य करती है। इसका दायरा बड़ा होने के कारण, इनकी प्रकति बहुआयामी होती है।

IV. **गतिशील एवं परिवर्तनशील प्रकृति**: सामाजिक योजना की प्रकृति गतिशील होती है। यानि सामाजिक योजना में समाज में परिवहन आते हैं।

V. **लोकतान्त्रिक एवं सहभागी प्रकृति -** सामाजिक योजना में समाज के लोग, विशेषज्ञ और संबंधित संस्थानों की भागेदारी होती है। कोई एक वर्ग विशेष का व्यक्ति सामाजिक योजना का निर्माण नहीं कर सकता है। सामाजिक योजना भी लोकतांत्रिक तरीकों के पालन को महत्वपूर्ण स्थान देती है।

VI. **भविष्य उन्मुख प्रकृति -** सामाजिक योजना वर्तमान जरूरतों के साथ-साथ भविष्य की संभावित चुनौतियों और आवश्यकताओं को ध्यान में रखकर बनाई जाती है।

VII. **समस्या समाधान प्रकृति-** सामाजिक योजना की प्रकृति सामाजिक समस्यायों को वैज्ञानिक रूप से पहचान करना है। समस्याओं को पहचान करना इनका निदान करना है।

3.7 सामाजिक योजना की प्रक्रिया

शिथार्थियो सामाजिक योजना का कैसे कियान्वयन किया जाता है? सामाजिक योजना को समाज में लागू करने के लिए कौन-कौन की प्रकियाऐं अपनाई जाती है; इन प्रक्रियाओं के विषय में यहाँ पर चर्चा की जा रही है।

I. **समस्याओं की पहचान-** किसी भी सामाजिक योजना को लागू करने से पहले, समाज में मौजूद वास्तविक समस्यायों की वैज्ञानिक तरीके से पहचान की जाती है। दुर्खीम ने कहा है कि " किसी भी सामाजिक सुधार की पहली शर्त समस्या को समझना है।

II. **आंकड़ा संग्रह और विश्लेषण**- समस्या को गहराई से समझने के लिए, सर्वेक्षण, जनगणना और संबंधित आंकडों का संग्रह किया जाता है। इन आंकडों के विश्लेषण से योजना निमार्ण हेतु आवश्यक जानकारी प्राप्त को पाती है।

III. **लक्ष्य निर्धारण**- यदि एक बार कोई समस्या का स्पष्ट पता लग जाये तब अल्पकालीन कौर दीर्घकालीन लक्ष्यों को निर्धारित किया जता है।

IV. **योजना निमार्ण-** समाज में उपलब्ध संसाधनों और जनसमुदाय की सहभागिता के आधार पर योजना की संरचना तैयार की जाती है। इसमें योजना से संबंधित कार्यक्रम और कार्यप्रणालियाँ सुनिश्चित की जाती हैं।

V. **संसाधनों का विनियोजन**- सामाजिक योजना को प्रभावी बनाने के लिए वित्त, मानव संसाधन और तकनीकी संसाधनों का उचित वितरण इसमें किया जाता है।

VI. **क्रियान्वयन**- जो सामाजिक योजना निर्मित की गई है, उसे जमीनी स्तर पर लागू किया जाता है। सामाजिक योजना के क्रियांवयन में प्रशासन, समुदाय और संबंधित संस्थाएँ मिलकर कार्य करती हैं।

VII. **निगरानी और मूल्यांकन-** योजना के क्रियान्वयन के पश्चात् उसकी प्रभावशीलता को जांचने के लिए मूल्यांकन किया जाता है।

VIII. **समीक्षा और सुधार-** सामाजिक योजना में मूल्यांकन के आधार पर आवश्यक सुधार किये जाते हैं। ताकि यदि का सामाजिक योजना में कोई कभी हो, तो उसे दूर किया जा सके।

3.8 सामाजिक योजना के प्रकार

सामाजिक योजनाऔ के प्रकारों पर निम्नलिखित बिन्दुओं में चर्चा की जा रही है।

I. **राष्ट्रीय स्तर की योजना-** यह योजना सम्पूर्ण देश की सामाजिक- आर्थिक विकास को ध्यान में रखकर बनाई जाती है। इसका मुख्य उद्देश्य बड़े पैमाने पर सामाजिक परिवर्तन लाना होता है। जैसे- पंचवर्षीय योजनाएँ, राष्ट्रीय स्वास्थ्य मिशन और राष्ट्रीय शिक्षा नीति।

II. **राज्य स्तर की योजना-** राज्य सरकारें अपनी जनसंख्या के अनुरूप इस तरह की योजनाओं का निर्माण करते हैं। ये योजनाऐ राज्य की विशिष्ट समस्याओं और आवश्यकताओं के ध्यान में रख बनाई जाती हैं। जैसे – उत्तराखण्ड ग्रामीण पर्यटन योजना।

III. **स्थानीय समुदाय आधारित योजना**- स्थानीय स्तर की योजनाएँ गाँव, ब्लॉक, नगर के स्तर पर तैयार की जती है। जैसे- ग्राम पंचायत विकास योजना और नगर निकाय स्वच्छता योजना।

IV. **अल्पकालीन योजना-** ये योजनाएँ तत्कालिक समस्याओं को हल करने के लिए बनाई जाती हैं। इन योजनाओं का समय काल 1 से 5 वर्ष तक का होता है। इसके बाद यह योजना बंद कर दी जाती हैं। कोविड राहत योजना, अल्पकालिक फसल बीमा योजना और रोजगार गारंटी के वार्षिक कार्यक्रम आदि।

V. **दीर्घकालीन योजना-** ये योजनाएँ आमतौर पर 10 वर्ष या उसने अधिक अवधि के लिए बनाई जाती हैं। जैसे-सत्तत् विकास लक्ष्य और जल जीवन मिशन कार्यक्रम आदि।

VI. **प्रत्यक्ष कल्याण योजना**- ये योजनाऐं सीधे तौर पर समाज के लोगों को लाभ देने के लिए बनाई जाती हैं। इनका प्रभाव भी तुरंत दिखता है, जैसे- प्रधानमंत्री आवास योजना, पोषण अभियान और जननी सुरक्षा योजना।

VII. **अप्रत्यक्ष कल्याण योजना-** ये योजनाऐं मनुष्यों को सीधे लाभ नहीं देती हैं। ये योजनाएँ विकास के लिए बनाई जाती हैं। जैसे- सड़क निर्माण योजनाएं और औद्योगिक विकास योजनाएं आदि।

VIII. **क्षेत्रीय योजना**- ये याजनाऐं विशेष क्षेत्रों के लिए बनाई जाती हैं। ये योजनाऐं शिक्षा, स्वास्थ्य, कृषि और ग्रामीण विकास पर केंद्रित होती हैं। क्षेत्रीय आवश्यकताओं के आधार पर इन योजनाओं का निर्माण किया गया है। जैसे- समग्र शिक्षा अभियान पोषण और ग्रामीण विकास योजना आदि।

3.9 सामाजिक योजना का महत्व

सामाजिक योग समाज की समस्यायों और लोगों की जरूरतों को पूरा करते में अपना महत्वपूर्ण योगदान देती है। इस इकाई के अंत में, समाज में सामाजिक योजनाओं के लागू होने से क्या परिवर्तन आये हैं। इनके विषय में चर्चा कर रहे हैं। कैसे सामाजिक योजनाऐं किसी समाज के लिए महत्वपूर्ण बन जाती हैं। यानि सामाजिक योजनाओं के महत्व पर निम्नलिखित बिंदुओं के माध्यम से यहाँ पर चर्चा की जा रही है।

I. **गरीबी में कभी-** सामाजिक योजनाओं ने समाज के गरीब परिवारों को रोजगार, भोजन, आवास और सुरक्षा देने का कार्य किया है। इससे इन गरीब परिवारों की सामाजिक-आर्थिक स्थिति में सुधार हुआ है।

II. **शिक्षा में सुधार**- सामाजिक योजनाओं ने शिक्षा के प्रचार-प्रसार के लिए व्यापक कार्य किया है। इन योजनाओं से बालकों और बालिकाओं के स्कूलों, कॉलेजों और विश्वविद्यालयों में नामांकन की संख्या में बढ़ोत्तरी देखने को मिली है। छात्रवृत्तियाँ और नंदा गौरा कन्या धन योजनाओं ने वंचित वर्ग के वच्चों के लिए शिक्षा के समान अवसर प्रदान करवाये हैं।

III. **स्वास्थ्य सुविधाओं का विस्तार-** सामाजिक योजनाओं के माध्यम से राष्ट्रीय स्वास्थ्य कार्यक्रमों को गति मिली है। स्वास्थ्य बीमा योजनाओं ने गरीब वर्गों को आर्थिक सहायता प्रदान करने का कार्य किया हैं। इससे समाज के लोगों की स्वास्थ्य की स्थिति में सकारात्मक परिवर्तन आये हैं।

IV. **रोजगार अवसरों में वृद्धि-** सामाजिक योजनाओं के तहत चलाये गये कौशल विकास कार्यक्रमों ने युवाओं के लिए नये-नये रोजगार के अवसर पैदा किये हैं। इससे बेरोजगारी की समस्या को कम करने में सहायता मिली है।

V. **सामाजिक सुरक्षा में वृद्धि-** सामाजिक योजनाओं ने समाज के सभी वर्गों को समान अवसर प्रदान कराये हैं। इसमे समाज में सभी वर्गों के बीच आपसी विश्वास और एकता बढ़ी है। जिसके परिणामस्वरूप समाज में सौहार्द का वातावरण बना है। सामाजिक योजनाओं के परिणाम का ही नतीजा है कि इससे समाज की सुरक्षा को मजबूती मिली है।

VI. **सामाजिक सुरक्षा में वृद्धि**- सामाजिक योजनाओं में सामाजिक पेंशन, बीमा और अन्य सहायता योजनाओं ने जोखिमग्रस्त लोंगों के जीवन में सुरक्षा की भावना बढ़ाई है। संकट या कोई प्राकृतिक घटना की स्थिति में सामाजिक योजना ने लोगों को सहारा देने का कार्य किया है।

VII. **महिलाओं और कमजोर समूहों का सशक्तिकरण**- सामाजिक योजना ने महिलाओं, अनुसूचित जातियों, जनजातियों, और समाज के अन्य कमजोर वर्गों को शिक्षा, स्वास्थ्य, रोजगार और अन्य सामाजिक-आर्थिक सुरक्षा प्रदान करने का कार्य किया है। सामाजिक योजना के परिणामस्वरूप महिलाएँ और कमजोर वर्गों का सशक्तिकरण हुआ है।

VIII. **ग्रामीण विकास को प्रोत्साहन**- गाँवों में सड़क, बिजली, जल, कृषि और अन्य बुनियादी ढ़ाचों में सुधार से ग्रामीणों में का जीवन स्तर बेहतर हुआ है। सामाजिक योजना ने कृषि उत्पादकता और ग्रामीणों की आय को बढ़ाने का कार्य किया है। सामाजिक योजनाओं से ग्रामीण-शहरी अतर को भी कम करने का कार्य किया है।

3.10 सारांश

सामाजिक योजना समाज के संतुलित और समन्वित विकास के लिए बनाई गई एक सुव्यवथित और वैज्ञानिक प्रक्रिया है। सामाजिक योजना समाज की समस्याओं और लोगों की जरूरतों को समझकर बनाई जाती है। सामाजिक योजना लोगों की समस्याओं और जरूरतों को समझकर उनके समाधान की दिशा तय करती है। सामाजिक योजनाओं में शिक्षा, स्वास्थ्य, रोजगार, पर्यावरण, स्वच्छता, आवास, सामाजिक सुरक्षा आदि समाज के अनेक क्षेत्र शामिल होते हैं। इससे समाज के उन वर्गों को बहुत मदद मिलती है, ये किसी कारणवश समाज की मुख्यधारा से स्वयं जुड़ पाने में सक्षम नहीं हो पाये। सामाजिक योजनाएं केवल समाज की समस्याओं को समाप्त ही 'नहीं करती हैं। बल्कि ये समाज की वास्तिक जरूरतों का भी हल निकालती हैं। इस प्रकार सामाजिक योजनाएँ सामाजिक परिवर्तन को दिशा देने में अपनी महत्वपूर्ण भूमिका का निर्वहन करती हैं। इस इकाई में शिक्षार्थियो आपने सामाजिक योजना की आवश्यकता, अर्थ और विशेषताओं के विषय में अपनी समझ बनायी। इसके साथ ही आपने इस इकाई में सामाजिक योजना के उद्देश्य, प्रकृति और और सामाजिक योजना लागू करने की प्रक्रिया के विषय में जग। इस इकाई के अंत में सामाजिक योजनाओं के प्रकार और भारत में सामाजिक योजना के महत्व पर भी अपना ज्ञानार्जन किया है।

3.11 पारिभाषिक शब्दावली

I. **सामाजिक निदान**- सामाजिक निदान वह प्रक्रिया है जिसने माध्यम से समाज की किसी समस्या, समस्या के कारणों और प्रभावों को वैज्ञानिक रूप से पहचानकर, उस समस्या के निदान के लिए योजना निमार्ण की जती है।

II. **सामाजिक विकास**- यह वह प्रकिया है जिसके माध्यम से समाज के सभी वर्गों के जीवनस्तर, अवसरों और सामाजिक सुविधाओं में सुधार लाने का कार्य किया जता है। इससे समाज में जनकल्याण, आर्थिक सामाजिक-आर्थिक वृद्धि, सामाजिक और समानता स्थापित होती है। इसके साथ ही इस प्रक्रिया से समाज की उन्नति होती है।

III. **सामाजिक सुरक्षा-** यह वह प्रक्रिया जो लोगों को बीमारी, बेरोजगारी, दुर्घटना, वृद्धावस्था या किसी संकट या आपदा की घड़ी में लोगों को सामाजिक संरक्षण प्रदान करती है।

3.12 संदर्भ ग्रंथ सूची

1. Choudhary, P. (2015) "Introduction to Social welfare, Orient Books Publications New Delhi.

2. Sharma, R. 66, R. (2018) “problems of social Planning, Academic Publishers, New Delhi.

3. Titmuss, R (1974) 66 Social Policy: An Introduction, London Alen & Unwin.

4. Durkheim, E, (1912) "The Division of Labour in Society, New York Free Press Publication.

5. Gordon, W. (1999) 66 social work and Planning, New York, Humun services Press

6. Merton, R.K (1968) " Social theory and social structure, New York, The free Press

7. Davis, k (1959) 66 Human society Macmillan Publications, New York

8. Durkhim, E, (1912) "The Division of Labour in Society, New York Free Press Publication.

9. Durkhim, E, (1912) "The Division of Labour in Society, New York Free Press Publication.

10. Choudhary, P. (2015) "Introduction to Social welfare, Orient Books Publications New Delhi.

11. Titmuss, R (1974) 66 Social Policy: An Introduction, London Alen & Unwin.

3.13 निबन्धात्मक प्रश्न

1- सामाजिक योजना क्या है? इसकी आवश्यकता पर प्रकाश डालिए।

२. सामाजिक योजना का अर्थ एवं विशेषताओं की चर्चा कीजिए।

3. सामाजिक योजना के क्या उद्देश्य होते हैं चर्चा कीजिए।

५. सामाजिक योजना की प्रकृति पर चर्चा कीजिए।

5- सामाजिक योजना के कितने प्रकार होते हैं? क्यों स्पष्ट कीजिए।

6- सामाजिक योजना के महत्व पर एक निबन्ध लिखिए।

ईकाई 04 सामाजिक नीति एवं सामाजिक योजना का निर्माण

Formulation of Social Policy and Social Planning

ईकाई की रूपरेखा

4.0 प्रस्तावना

4.1 उद्देश्य

4.2 सामाजिक नीति का अर्थ एवं परिभाषा

4.3 सामाजिक नीति के उद्देश्य

4.4 सामाजिक नीति की विशेषताएं

4.5 समाजशास्त्र में सामाजिक नीति का निर्धारण एवं आवश्यकता

4.6 सामाजिक नीति के स्वरूप

4.7 सामाजिक नीति के कार्यान्वयन में समस्याएं

4.8 सामाजिक योजना का अर्थ एवं परिभाषा

4.9 सामाजिक योजना की विशेषताएं

4.10 सामाजिक योजना के प्रकार

4.11 सामाजिक योजना निर्माणक घटक

4.11.1 स्थानिक घटक

4.11.2 आर्थिक घटक

4.11.3 सामाजिक घटक

4.11.4 प्रशासनिक घटक

4.12 सारांश

4.13 निबंधनात्मक प्रश्न

4.14 संदर्भ ग्रंथ सूची

4.0 प्रस्तावना

समाजशास्त्रीय विवेचन के आधार पर अनेको प्रकार की सामाजिक समस्याओं को सुलझाने हेतु अनेको प्रकार की सामाजिक नीतियों का निर्माण किया जाता है। सामाजिक नीति के अन्तर्गत सामाजिक तथ्यों की आवश्यकता होती है जो केवल सूचना उपलब्ध कराने तक ही सीमित नहीं है, बल्कि यह नीतियों के सूत्रीकरण और उनके अनुप्रवेश की दशा में उपयोगी भी होते हैं। जो नीतियों के संचालन एवं उपलब्धियों के मूल्यांकन के लिहाज से महत्वपूर्ण भी है। समाजशास्त्र विषय के रूप में इन नीतियों एवं उनके क्रियान्वयन के लिए आधार एवं योजनाएं प्रदान करता है, जिसमें समाजशास्त्रीय समस्या का बहुआयामी अध्ययन करके विभिन्न कारकों और कारणों का वर्णन और व्याख्या करने के साथ-साथ उसके समाधान के लिए नीति निर्माण करना भी होता है। साथ ही निर्माण की गयी नीतियों को किस प्रकार से व्यवस्थित किया जाए, इसकी योजना भी समाजशास्त्र प्रस्तुत करता है। समाजशास्त्रीय अध्ययन का उद्देश्य समाज के निरंतर विकास के लिए नीतिपरक अनुसंधान करना भी होता है। ये नीतिपरक अध्ययन किसी भी सामाजिक व्यवस्था एवं अव्यवस्था अथवा विशिष्ट प्रक्रियाओं से सम्बंधित होते हैं। अत: यह नीतिपरक अध्ययनों को विभिन्न प्रकारों में वर्गीकृत किया गया (i) अन्वेषणात्मक (ii) वर्णनात्मक (iii) परिक्षणात्मक (ivi) व्यवहारिक (V) क्रियात्मक और मूल्यांकनात्मक आदि। इन नीतिपरक समाजशास्त्रीय अध्ययनों का उद्देश्य समाज की वर्तमान स्थिति का अध्ययन कर भविष्य में नीति निर्माण एवं क्रियान्वयन की योजना प्रस्तुत करना होता है। साथ ही सामाजिक परिवर्तन एवं सामान नियंत्रण की दिशा और दशा का अध्ययन कर एक स्थायी एवं व्यावहारिक नीति का निर्माण करना होता है। जो समाज के लक्ष्यों की प्राप्ति हेतु अनुकूल हो। किसी भी समाज के विकासात्मक मूल्यांकन हेतु वहां स्थित सामाजिक नीति के क्रियान्वयन की जाँच की जाती है। जिसके फलस्वरूप उस समाज की व्यवस्था का आंकलन किया जा सके।

4.1 उद्देश्य

इस ईकाई का अध्ययन उसे के पश्चात सम्भव होगा-

1. सामाजिक नीति एवं सामाजिक योजना के समाजशास्त्रीय अर्थ को समझेगें।
2. सामाजिक नीति एवं सामाजिक योजना से सम्बंधित सामाजिक-आर्थिक एवं राजनीतिक उद्दश्यों को समझेगें।
3. सामाजिक नीति एवं सामाजिक योजना के निर्माण एवं महत्व को समझेंगे।
4.

4.2 सामाजिक नीति का अर्थ एवं परिभाषा :

सामाजिक नीति के अर्थ को समझाते हुए यह कहना उचित होगा कि सामाजिक नियोजन के सफल क्रियान्वयन के लिए जिस नीति का निर्माण किया जाता है।, उसे सामाजिक नीति कहा जाता है। सामाजिक नीति का राष्ट्रीय नियोजन के साथ घनिष्ठ सम्बंध होता है। सामाजिक अर्थ को समझते हुए हम इसकी परिभाषा पर चर्चा करेगें जिसके अन्तर्गत विभिन्न विद्वानों ने सामाजिक नीति को परिभाषित किया है।

फ्रीमैन तथा शेरवुड के अनुसार "सामाजिक नीति वह प्रक्रिया है जिसमें छोटे संस्थान एवं संगठन अपने सदस्यों की दशाओं में सुधार लाने एवं उसमें स्थिरता लाने का प्रयास करते हैं"।

विलहेम कीलहाऊ के अनुसार, "सामाजिक नियोजन, नियोजन की वह दशा है जिसमें जो एक विशिष्ट सामाजिक नीति के प्रति निर्देशित होती है"।

उपरोक्त परिभाषा द्वारा स्पष्ट होता है कि सामाजिक नीति में परिवर्तन की दिशा सकारात्मक होती है। जो समाज के विकास हेतु आवश्यक है। सामाजिक नीति वह नीति है, जिसमे राज्य के कमजोर एवं पिछड़े लोगों को विकास मे जोड़ने का कार्य करती है। साथ ही इन लोगों की सामाजिक-आर्थिक स्तिथि को ऊंचा उठाने हेतु प्रावधानों का निर्माण करती है। स्पष्ट रूप से कहा जा सकता है की सामाजिक नीति नियोजन तथा विकास को दिशा प्रदान करने का कार्य करती है।

4.3 सामाजिक नीतियों के उद्देश्य :

1. **सामाजिक उद्देश्य -** सामाजिक नीतियों का सामाजिक क्षेत्रों में महत्वपूर्ण योगदान होता है। किसी भी सामाजिक नीतियों के अन्तर्गत समाजवादी समाज की स्थापना की जाती है। जिसमें लोगों को सुखमय जीवन यापन हेड अधिक से अधिक अवसर प्रदान करना एवं शिक्षा, स्वास्थ्य, पोषण, आवास तथा समाज कल्याण के लिए अधिक से अधिक सुविधाओं का विस्तार एवं सुधार करना है।
2. **आर्थिक उद्देश्य -** सामाजिक नीतियों के अन्तर्गत आर्थिक उदेश्यों में राष्ट्रीय एवं प्रति व्यक्ति की आय में वृद्धि करना है। जिसके परिणामस्वरूप व्यक्ति के आयरको सुरक्षित, निर्धनता का उन्मूलन एवं रोजगार में वृद्धि आदि करना है।
3. **सांस्कृतिक उद्देश्य -** सामाजिक नीति निर्माण में सांस्कृतिक उद्देश्यों की अहम भूमिका होती है। सांस्कृतिक उद्देश्यों के अन्तर्गत मानवीय अधिकारों की संरक्षण प्रदान करना, स्वतंत्र धार्मिक अभिव्यि का अधिकार, समाज में एकीकरण आदि करना है।
4. **राजनैतिक उद्देश्य -** इन उद्देश्यों के अन्तर्गत राजनीतिक विखण्डन का पुन: एकीकृत किया जाता है। तथा ऐसी व्यवस्था की स्थापना कि जाती है जो जनता के प्रति उत्तरदायी होती है। इन उद्देश्यों में राज्य में साम्प्रदायिकता, भाषावाद, जातिवाद आदि को समाप्त कर एकीकरण की स्थापना करना है।

4.4 सामाजिक नीति की विशेषताए :

सामाजिक नीति के अर्थ की संक्षेप में व्याख्या के आधार पर इसकी प्रमुख विशेषताओं का वर्णन किया जाता है।

1. सामाजिक नीति एवं सामाजिक नियोजन दोनो में घनिष्ट प्रकार का सम्बंध पाया जाता है, अर्थात सामाजिक नियोजन के क्रियान्वयन हेतु सामाजिक नीति की आवश्यकता होती है।
2. सामाजिक नीति सकारात्मक सामाजिक परिवर्तन में सहायक होती है। जिस प्रकार ग्रामीण क्षेत्रो के सर्वांगीण विकास हेतु सामाजिक नीति आवश्यक है।
3. सामाजिक नीति द्वारा सकारात्मक परिणाम निकाले जाए यह आवश्यक नही है कभी- कभी इसके नकारात्मक परिणाम भी देखे जा सकते है।
4. सामाजिक नीति का कार्यक्षेत्र व्यापक होता है जिसमें परिवर्तन के परिणाम दीर्घकालिक एवं अल्पकालिक होते है।
5. सामाजिक नीतियों का निर्माण सामाजिक एवं आर्थिक रूप से पिछड़े लोगों के उत्थान के लिए किया जाता है।
6. सामाजिक नीति जनहित के लिए महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। जिसमें इसके निर्माण के पूर्व लोगों की इच्छाओं एवं आवश्यकताओं को ध्यान में रखते हुए क्रियान्वयन किया जाता है।
7. सामाजिक नीति के निर्माण में राज्य एवं केन्द्र सरकार, नौकरशाही तथा उससे सम्बंधित समाज वैज्ञानिको की समन्वित भूमिका होती है।

4.5 समाजशास्त्र में सामाजिक नीति का निर्धारण एवं आवश्यकता

सामाजिक नीति का उद्देश्य समाज की वास्तविक समस्याओं का समाधान करना और लोगों के जीवन स्तर में सुधार लाना होता है। ऐसी नीतियाँ तभी प्रभावी बन सकती हैं, जब वे समाज की वास्तविक आवश्यकताओं, इच्छाओं और परिस्थितियों पर आधारित हों। समाजशास्त्र इसी कार्य में महत्वपूर्ण योगदान देता है। समाजशास्त्र विभिन्न समाज वैज्ञानिक अध्ययनों के माध्यम से यह स्पष्ट करता है कि समाज के लोग किन समस्याओं से जूझ रहे हैं, उनके व्यवहार के कारण क्या हैं और सामाजिक संस्थाएँ किस प्रकार कार्य कर रही हैं। इसके आधार पर यह सुनिश्चित होता है कि सामाजिक नीति केवल अनुमान या व्यक्तिगत विचारों पर नहींए बल्कि वैज्ञानिक शोध और तथ्यों पर आधारित हो। जैसे किसी आर्थिक नीति के निर्माण में अर्थशास्त्र की भूमिका होती हैए वैसे ही सामाजिक नीतियों के निर्माण में समाजशास्त्र का विशेष महत्व है। समाजशास्त्रीय अध्ययन सामाजिक संरचन, वर्ग, जाति, लिंग, धर्म, परिवार और समुदाय जैसी इकाइयों का विश्लेषण करता है। इससे यह समझने में सहायता मिलती है कि किसी विशेष समूह की समस्याएँ क्या हैं और उनके समाधान के लिए किस प्रकार की नीति आवश्यक है। उदाहरण के लिए, यदि किसी समाज में महिलाओं, अल्पसंख्यकों या वंचित वर्गों की सामाजिक सहभागिता बढ़ानी हो, तो समाजशास्त्रीय शोध उनके सामाजिक व्यवहार, सोच और

बाधाओं को उजागर करता है। इन्हीं निष्कर्षों के आधार पर ऐसी नीतियाँ बनाई जाती हैं, जो व्यवहारिक हों और समाज में सकारात्मक परिवर्तन ला सकें।

समाज निरन्तर परिवर्तनशील होता है। सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक तथा सांस्कृतिक परिवर्तनों के कारण समाज में अनेक प्रकार की समस्याएँ उत्पन्न होती रहती हैं। इन समस्याओं के समाधान और समाज के संतुलित विकास के लिए सामाजिक नीति की आवश्यकता होती है। सामाजिक नीति समाज को एक निश्चित दिशा प्रदान करती है और जनकल्याण को सुनिश्चित करती है। इसकी आवश्यकता को निम्न बिन्दुओं के माध्यम से स्पष्ट किया जा सकता है।

1. **सामाजिक समस्याओं के समाधान हेतु** – गरीबी, बेरोजगारी, अशिक्षा, अपराध, बाल श्रम, नशाखोरी, महिला उत्पीड़न जैसी समस्याओं के प्रभावी समाधान के लिए सुनियोजित सामाजिक नीतियाँ आवश्यक हैं।
2. **सामाजिक न्याय एवं समानता की स्थापना** – समाज में वर्ग, जाति, लिंग और धर्म के आधार पर व्याप्त असमानताओं को दूर करने तथा कमजोर और वंचित वर्गों को समान अवसर प्रदान करने के लिए सामाजिक नीति आवश्यक है।
3. **सामाजिक परिवर्तन को दिशा देने के लिए** – सामाजिक नीति समाज में होने वाले परिवर्तनों को नियंत्रित और सकारात्मक दिशा प्रदान करती हैए जिससे सामाजिक अव्यवस्था और संघर्ष को कम किया जा सके।
4. **कल्याणकारी राज्य की स्थापना हेतु** – आधुनिक राज्य का उद्देश्य केवल शासन करना नहीं, बल्कि नागरिकों के कल्याण को सुनिश्चित करना है। शिक्षा, स्वास्थ्य, आवास, सामाजिक सुरक्षा आदि क्षेत्रों में सामाजिक नीति महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है।
5. **राष्ट्रीय विकास एवं प्रगति के लिए** – सामाजिक नीति मानव संसाधन के विकास में सहायक होती है, जिससे राष्ट्र की समग्र प्रगति संभव होती है।
6. **सामाजिक स्थिरता बनाए रखने हेतु** – जब समाज में संतोष, सुरक्षा और अवसरों की समानता होती है, तब सामाजिक अशांति और तनाव कम होते हैं। सामाजिक नीति समाज में स्थिरता बनाए रखने में सहायक होती है।
7. **विकास योजनाओं के प्रभावी क्रियान्वयन के लिए** – सामाजिक नीति विभिन्न योजनाओं और कार्यक्रमों को सामाजिक आवश्यकताओं से जोड़कर उन्हें अधिक प्रभावी बनाती है।

इस प्रकार समाजशास्त्र सामाजिक नीतियों को दिशा देने का कार्य करता है। यह नीतियों को समाज की वास्तविकताओं से जोड़ता है और उन्हें अधिक उपयोगी, प्रभावी तथा जनकल्याणकारी बनाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है।

4.6 सामाजिक नीति के स्वरूप :

सामाजिक नीति से तात्पर्य उन सिद्धांतों, कार्यक्रमों और कार्यवाहियों से है जिनके माध्यम से राज्य समाज के कल्याण, सामाजिक न्याय और समान अवसर सुनिश्चित करता है। विभिन्न देशों और कालखंडों में सामाजिक नीति के अलग-अलग स्वरूप विकसित हुए हैं। जिनमे निम्नलिखित हैं -

I. **अवशिष्ट कल्याणकारी स्वरूप (**Residual Model of Social Policy**)** – यह सामाजिक नीति का सबसे सीमित स्वरूप है। इसमें यह माना जाता है कि मानव आवश्यकताओं की पूर्ति का मुख्य दायित्व परिवार और बाज़ार का है। राज्य तभी हस्तक्षेप करता है जब परिवार और बाज़ार असफल हो जाते हैं। यह सहायता भी अस्थायी और चयनात्मक होती है। इसमें साधन-परीक्षण पर जोर दिया जाता हैए अर्थात् केवल वही व्यक्ति सहायता प्राप्त करता है जो यह सिद्ध कर दे कि वह वास्तव में निर्धन है। इस स्वरूप में सामाजिक कल्याण को अपवाद माना जाता हैए अधिकार नहीं।

II. **संस्थागत कल्याणकारी स्वरूप (**Institutional Model of Social Policy**)** – इस स्वरूप में सामाजिक कल्याण को योग्यताए कार्य निष्पादन और उत्पादकता से जोड़ा जाता है। इसमें यह मान्यता है कि व्यक्ति को वही लाभ मिलना चाहिए जो उसके कार्य और योगदान के अनुरूप हो। इसमें सामाजिक संस्थाएँ महत्वपूर्ण भूमिका निभाती हैं और प्रोत्साहन, पुरस्कार, कार्यक्षमता तथा मनोवैज्ञानिक कारकों पर बल दिया जाता है। यह नीति श्रम, उत्पादकता और आर्थिक योगदान को केंद्र में रखती है।

III. **सामाजिक नीति का संस्थात्मक पुनर्वितरण स्वरूप** – यह आधुनिक और व्यापक स्वरूप है। इसमें सामाजिक कल्याण को समाज की एक स्थायी और आवश्यक संस्था माना जाता है। राज्य बाज़ार से बाहर जाकर सभी नागरिकों को आवश्यकता के आधार पर सेवाएँ उपलब्ध कराता है। इस स्वरूप में संसाधनों का पुनर्वितरण, सामाजिक सुरक्षा, शिक्षा, स्वास्थ्य और कल्याण सेवाओं पर जोर दिया जाता है। यह सामाजिक न्याय, समानता और सकारात्मक भेदभाव की अवधारणा से जुड़ा हुआ है।

4.7 सामाजिक नीति के कार्यान्वयन में समस्याएं :

सामाजिक नीति का उद्देश्य समाज की समस्याओं का समाधान और जनकल्याण करना होता है, परंतु इसके निर्माण और प्रभावी क्रियान्वयन में अनेक प्रकार की बाधाएँ आती हैं। ये बाधाएँ सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक तथा प्रशासनिक स्तर पर देखने को मिलती हैं। प्रमुख बाधक तत्व निम्नलिखित हैं।

1) **सामाजिक विविधता और जटिलता** – भारत जैसे बहुजातीय, बहुधार्मिक और बहुसांस्कृतिक समाज में सभी वर्गों की आवश्यकताएँ भिन्न-भिन्न होती हैं। ऐसी स्थिति में सभी के लिए समान रूप से उपयोगी सामाजिक नीति बनाना कठिन हो जाता है।

2) **सामाजिक असमानताएँ** – जाति, वर्ग, लिंग और क्षेत्र के आधार पर व्याप्त असमानताएँ नीति निर्माण में बाधा उत्पन्न करती हैं। शक्तिशाली वर्ग अपनी आवश्यकताओं को अधिक महत्व दिला लेते हैं, जबकि कमजोर वर्गों की समस्याएँ उपेक्षित रह जाती हैं।

3) **आर्थिक संसाधनों की कमी** –सीमित वित्तीय संसाधनों के कारण सभी सामाजिक आवश्यकताओं की पूर्ति संभव नहीं हो पाती। बजट की कमी सामाजिक नीतियों के दायरे और प्रभावशीलता को सीमित कर देती है।

4) **राजनीतिक हस्तक्षेप** – कई बार सामाजिक नीतियाँ जनकल्याण के बजाय राजनीतिक लाभ के उद्देश्य से बनाई जाती हैं। सत्ता परिवर्तन के साथ नीतियों में अस्थिरता भी सामाजिक नीति निर्माण में बाधक बनती है।

5) **वैज्ञानिक अनुसंधान का अभाव** – कई नीतियाँ पर्याप्त समाज वैज्ञानिक अध्ययनों और शोध के बिना बनाई जाती हैं। तथ्य और वास्तविक आँकड़ों के अभाव में बनी नीतियाँ व्यवहारिक नहीं हो पातीं।

6) **प्रशासनिक अक्षमता** – नीति निर्माण और क्रियान्वयन में नौकरशाही की जटिलता, भ्रष्टाचार और समन्वय की कमी एक बड़ी बाधा है। इससे नीतियाँ सही रूप में लागू नहीं हो पातीं।

7) **शिक्षा और जागरूकता की कमी** – लोगों में अपने अधिकारों और सरकारी नीतियों के प्रति जागरूकता का अभाव भी नीति निर्माण और उसकी सफलता में बाधक होता है।

8) **परंपरागत सोच और सामाजिक रूढ़ियाँ**– कई बार सामाजिक परंपराएँ, अंधविश्वास और रूढ़िवादी विचार सामाजिक सुधारों के विरुद्ध खड़े हो जाते हैं, जिससे प्रगतिशील सामाजिक नीतियाँ बनाना कठिन हो जाता है।

4.8 सामाजिक योजना का अर्थ एवं परिभाषा

सामाजिक योजना से तात्पर्य समाज की आवश्यकताओं और समस्याओं को ध्यान में रखते हुए उपलब्ध संसाधनों का वैज्ञानिकए,सुनियोजित और उद्देश्यपूर्ण उपयोग करना है। ताकि समाज में सामाजिक कल्याण, समानता और समग्र विकास को बढ़ावा दिया जा सके। सामाजिक योजना के माध्यम से शिक्षा, स्वास्थ्य, आवास, रोजगार, सामाजिक सुरक्षा और कमजोर वर्गों के कल्याण से संबंधित कार्यक्रमों को निर्धारित लक्ष्यों के साथ लागू किया जाता है। इसका मुख्य उद्देश्य सामाजिक प्रगति और सामाजिक न्याय की स्थापना करना होता है।

डॉ. डी0 आर0 गाडगिल के अनुसार, "सामाजिक योजना वह प्रक्रिया है जिसके द्वारा समाज की आवश्यकताओं को ध्यान में रखते हुए सामाजिक सेवाओं और कार्यक्रमों का संगठित विकास किया जाता है"।

टी0 एच0 मार्शल के अनुसार, "सामाजिक योजना समाज के सदस्यों को न्यूनतम जीवन स्तर प्रदान करने हेतु सामाजिक सेवाओं का योजनाबद्ध विस्तार है"।

संयुक्त राष्ट्र के अनुसार, "सामाजिक योजना वह सचेत प्रयास है जिसके द्वारा सामाजिक कल्याण और सामाजिक विकास के लिए योजनाएँ बनाई और क्रियान्वित की जाती हैं"।

पॉल स्पीकर के अनुसार, "सामाजिक योजना सामाजिक समस्याओं के समाधान और सामाजिक संसाधनों के उचित वितरण की एक नियोजित प्रक्रिया है"।

4.9 सामाजिक योजना की विशेषताएँ

सामाजिक योजना के अर्थ और परिभाषाओं के आधार पर इसकी निम्नलिखित विशेषताएँ सामने आती हैं।

(1) सामाजिक योजना सामाजिक पुनर्निर्माण की वह विशेष पद्धति एवं प्रक्रिया है जो समाज को योजनाबद्ध रूप पुनर्गठित करने का प्रयास करता है।

(2) सामाजिक समरसता में सामाजिक योजना का उद्देश्य रूढ़िगत व्यवहारों तथा सामाजिक सामंजस्य में उत्पन्न होने वाली समस्याओं का निराकरण करना है।

(4) सामाजिक योजना के लक्ष्य प्राथमिकता के आधार पर निर्धारित किए जाते हैं तथा प्रत्येक लक्ष्य को निर्धारित अवधि में प्राप्त करने का प्रयत्न किया जाता है।

(5) सामाजिक योजना द्वारा समाज के परम्परागत मूल्यों तथा प्रथाओं में वांछित परिवर्तन लाया जाता है।

(7) सामाजिक योजना के द्वारा सामाजिक परिवर्तन योजनाबद्ध तरीके से लाया जा सकता है।

4.10 सामाजिक योजना के प्रकार :

सामाजिक योजना समाज की आवश्यकताओं, संसाधनों और प्राथमिकताओं के आधार पर तैयार की जाती है तथा इसके विभिन्न प्रकार समाज की भिन्न.भिन्न परिस्थितियों के अनुरूप विकसित किए गए हैं। सामाजिक योजना के प्रकारों का अध्ययन इसलिए आवश्यक है, क्योंकि इससे यह स्पष्ट होता है कि योजना किस स्तर, किस वर्ग और किस उद्देश्य के लिए अधिक उपयुक्त है। निम्नलिखित प्रकारों के आधार पर योजनाओं का वर्गीकरण करने से योजना निर्माण क्रियान्वयन और मूल्यांकन अधिक प्रभावी बनता है।

1. **व्यापक सामाजिक योजना** – व्यापक सामाजिक योजना वह योजना है जिसमें समाज के सभी प्रमुख क्षेत्रों जैसे शिक्षा, स्वास्थ्य, आवास, रोजगार, सामाजिक सुरक्षा, महिला एवं बाल कल्याण को एक साथ सम्मिलित किया जाता है। इसका उद्देश्य समाज का समग्र और संतुलित विकास करना होता है।
2. **आंशिक सामाजिक योजना** – आंशिक सामाजिक योजना किसी एक विशेष समस्या या क्षेत्र तक सीमित होती है। जैसे केवल शिक्षाए स्वास्थ्य या गरीबी उन्मूलन।
3. **केन्द्रीय सामाजिक योजना** – केन्द्रीय सामाजिक योजनाएँ वे योजनाएँ होती हैं जिन्हें केन्द्र सरकार द्वारा पूरे देश के लिए बनाया और लागू किया जाता है। जिन्हें **केन्द्र सरकार** द्वारा पूरे देश के लिए तैयार किया जाता है और लागू किया जाता है। इन योजनाओं का उद्देश्य राष्ट्रीय स्तर पर सामाजिक

समस्याओं का समाधान करना, न्यूनतम जीवन स्तर सुनिश्चित करना तथा सामाजिक समानता और न्याय को बढ़ावा देना होता है। जैसे- राष्ट्रीय स्वास्थ्य मिशन, समग्र शिक्षा अभियान, प्रधानमंत्री आवास योजना, प्रधानमंत्री मातृ वंदना योजना, राष्ट्रीय सामाजिक सहायता कार्यक्रम आदि

4. **राज्य स्तरीय सामाजिक योजना** – राज्य स्तरीय सामाजिक योजना से तात्पर्य उन सामाजिक योजनाओं से है, जिन्हें राज्य सरकार अपने राज्य की सामाजिक-आर्थिक एवं सांस्कृतिक भौगोलिक परिस्थितियों को ध्यान में रखते हुए तैयार करती है । इन योजनाओं का उद्देश्य राज्य की विशिष्ट सामाजिक समस्याओं का समाधान करना तथा राज्य के नागरिकों के जीवन स्तर में सुधार लाना होता है। जैसे- राज्य वृद्धावस्था पेंशन योजना, राज्य महिला सशक्तिकरण योजना, अनुसूचित जाति-जनजाति कल्याण योजनाएँ, राज्य स्वास्थ्य बीमा योजनाएँ आदि

5. **क्षेत्रीय-स्थानिक सामाजिक योजना** – क्षेत्रीय–स्थानिक सामाजिक योजना से तात्पर्य ऐसी सामाजिक योजना से है, जो किसी विशेष भौगोलिक क्षेत्र—जैसे राज्य का कोई पिछड़ा जिला, आदिवासी क्षेत्र, ग्रामीण अंचल, शहरी बस्ती, नगर या महानगर—की सामाजिक, आर्थिक और सांस्कृतिक आवश्यकताओं को ध्यान में रखकर तैयार की जाती है। इसका उद्देश्य क्षेत्रीय असमानताओं को कम करना और संतुलित क्षेत्रीय विकास को बढ़ावा देना होता है। जैसे- पिछड़ा क्षेत्र विकास कार्यक्रम, आदिवासी क्षेत्र विकास योजना, ग्रामीण विकास योजनाएँ, झुग्गी–झोपड़ी सुधार कार्यक्रम आदि।

6. **लक्षित सामाजिक योजना** – लक्षित सामाजिक योजना समाज के किसी विशेष वर्ग को ध्यान में रखकर बनाई जाती है। जैसे- महिलाएँ, बच्चे, वृद्ध, दिव्यांग या अनुसूचित जाति-जनजाति आदि कप ध्यान मे रखकर इन योजनाओ का निर्माण किया जाता है।

7. **अल्पकालीन सामाजिक योजना** – अल्पकालीन सामाजिक योजना से तात्पर्य उन सामाजिक योजनाओं से है, जिन्हें कम समयावधि के लिए तैयार किया जाता है और जिनका उद्देश्य तात्कालिक, आकस्मिक या आपात सामाजिक समस्याओं का शीघ्र समाधान करना होता है। ये योजनाएँ स्थायी परिवर्तन की अपेक्षा तत्काल राहत और नियंत्रण पर अधिक केंद्रित होती हैं। जैसे- प्राकृतिक आपदा राहत योजनाएँ (बाढ़, भूकंप, सूखा), महामारी नियंत्रण कार्यक्रम, आपात खाद्य वितरण योजना, अस्थायी रोज़गार कार्यक्रम, राहत शिविर एवं पुनर्वास योजनाएँ आदि

8. **स्वैच्छिक सामाजिक योजना** – स्वैच्छिक सामाजिक योजना से तात्पर्य उन सामाजिक योजनाओं से है, जिन्हें सरकार के अतिरिक्त स्वैच्छिक संगठनों, गैर-सरकारी संस्थाओं (NGOs), धार्मिक एवं सामाजिक संगठनों तथा समुदाय स्वयं द्वारा अपनी पहल पर तैयार और क्रियान्वित किया जाता है। इन योजनाओं का मुख्य उद्देश्य समाज की समस्याओं का समाधान जनसहभागिता और सेवा-भावना के माध्यम से करना होता है। जैसे- गैर-सरकारी संस्थाओं द्वारा महिला , सशक्तिकरण कार्यक्रम, बाल संरक्षण एवं शिक्षा कार्यक्रम, नशामुक्ति अभियान आदि

9. **कल्याणकारी सामाजिक योजना** – कल्याणकारी सामाजिक योजना से तात्पर्य उन सामाजिक योजनाओं से है जिनका मुख्य उद्देश्य समाज के कमज़ोर, पिछड़े, निर्धन और वंचित वर्गों के जीवन-स्तर में सुधार करना तथा उन्हें न्यूनतम जीवन-स्तर और सामाजिक सुरक्षा प्रदान करना होता है। इस प्रकार की योजनाएँ राज्य की कल्याणकारी भूमिका को दर्शाती हैं।कल्याणकारी सामाजिक योजनाएँ समाज में सामाजिक सुरक्षा और स्थिरता प्रदान करती हैं। ये योजनाएँ कमजोर वर्गों को मुख्यधारा में लाने, गरीबी घटाने और सामाजिक न्याय को मजबूत करने में सहायक होती हैं।

10. **विकासात्मक सामाजिक योजना** – विकासात्मक सामाजिक योजना वह सामाजिक योजना है जिसका उद्देश्य केवल तात्कालिक राहत या कल्याण तक सीमित न रहकर समाज के दीर्घकालीन, सतत और संरचनात्मक विकास को सुनिश्चित करना होता है। इस प्रकार की योजना में मानव संसाधन विकास, सामाजिक क्षमता निर्माण और आत्मनिर्भरता पर विशेष बल दिया जाता है। जैसे - शिक्षा और साक्षरता, स्वास्थ्य एवं पोषण, कौशल विकास और रोजगार।

4.11 सामाजिक योजना के निर्माणक घटक

सामाजिक योजना निर्माण एक सुनियोजित और बहुआयामी प्रक्रिया है, जिसका उद्देश्य समाज के समग्र विकास को सुनिश्चित करना होता है। सामाजिक योजना निर्माण के लिए विभिन्न घटकों का समन्वय आवश्यक है। सामान्यतः योजना निर्माण के चार प्रमुख घटक माने जाते हैं जिनमें स्थानिक, आर्थिक, सामाजिक तथा प्रशासनिक घटक महत्वपूर्ण है। इन सभी घटकों का संतुलित समावेश ही किसी सामाजिक योजना की सफलता को सुनिश्चित करता है।

4.11.1 स्थानिक घटक

स्थानिक घटक में क्षेत्र के भौतिक संसाधनों, भूमि उपयोग, पर्यावरणीय परिस्थितियों, जनसंख्या वितरण तथा मानव बस्तियों का अध्ययन किया जाता है। स्थानिक सामाजिक योजना विकास कार्यक्रमों को स्पष्ट दिशा प्रदान कर संसाधनों के न्यायपूर्ण वितरण को सुनिश्चित करती है। इसके माध्यम से ग्रामीण-शहरी संतुलन स्थापित होता है और क्षेत्रीय असमानताओं को कम करने में सहायता मिलती है। यह घटक क्षेत्र की समग्र विकास-रूपरेखा तैयार करता है।

4.11.2 आर्थिक घटक

आर्थिक घटक को योजना निर्माण का मूल आधार माना जाता है, क्योंकि किसी भी विकास योजना का प्रमुख उद्देश्य रोज़गार के अवसर बढ़ाना और आय में वृद्धि करना होता है। इसके अंतर्गत संसाधनों की उपलब्धता, कृषि एवं औद्योगिक संरचना, सामाजिक-आर्थिक स्थिति, जनसांख्यिकीय विशेषताएँ, बुनियादी ढाँचा तथा उपखंडीय विशेषताओं का अध्ययन किया जाता है।

4.11.3 सामाजिक घटक

सामाजिक घटक का उद्देश्य सामाजिक असमानताओं को कम कर सामाजिक सेवाओं का विस्तार एवं जनता की सक्रिय भागीदारी सुनिश्चित करना है। सामाजिक योजना प्रक्रिया में जनभागीदारी न केवल एक साधन है, बल्कि विकास का एक प्रमुख लक्ष्य भी है। यह घटक सामाजिक परिवर्तन को गति देता है और सरकार तथा जनता के बीच समन्वय स्थापित करता है।

4.11.4 प्रशासनिक घटक

प्रशासनिक घटक योजना की सफलता या विफलता का निर्णायक तत्व होता है। इसमें योजना के समन्वय, कार्यान्वयन, वित्तीय प्रबंधन, निगरानी तथा मूल्यांकन से संबंधित व्यवस्थाएँ शामिल होती हैं। जिला योजना कार्य समूह (1984) के अनुसार, प्रभावी योजना के लिए स्पष्ट प्रशासनिक तंत्र, निधि वितरण की पारदर्शी प्रक्रिया तथा योजनाओं की निरंतर समीक्षा आवश्यक है।

4.12 सारांश

सामाजिक योजना और सामाजिक नीति समाज के कल्याण, विकास और सामाजिक न्याय की प्राप्ति के प्रमुख साधन हैं। सामाजिक नीति समाज के लिए लक्ष्य, सिद्धांत और दिशा निर्धारित करती है, जबकि सामाजिक योजना उन लक्ष्यों को व्यावहारिक रूप देने की प्रक्रिया है। अतः जिसके फलस्वरूप यह समाज में सकारात्मक परिवर्तन लाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। सामाजिक नीति के अंतर्गत शिक्षा, स्वास्थ्य, आवास, रोजगार, सामाजिक सुरक्षा, महिला एवं बाल कल्याण, वृद्धावस्था सहायता तथा कमजोर वर्गों के संरक्षण से संबंधित नीतियाँ शामिल होती हैं। इसका मुख्य उद्देश्य सामाजिक असमानताओं को कम करना, समान अवसर उपलब्ध कराना और समाज के सभी वर्गों के जीवन स्तर में सुधार करना है। सामाजिक नीति राज्य की विचारधारा, संवैधानिक मूल्यों और सामाजिक आवश्यकताओं पर आधारित होती है। जबकि सामाजिक योजना सामाजिक नीति को लागू करने का माध्यम है। जो जनभागीदारी को प्रोत्साहित कर लोगों की वास्तविक आवश्यकताओं की पूर्ति करती है। आधुनिक समाज में सामाजिक योजना और सामाजिक नीति का महत्व निरंतर बढ़ रहा है। औद्योगीकरण, नगरीकरण, जनसंख्या वृद्धि और सामाजिक विषमताओं के कारण योजनाबद्ध सामाजिक हस्तक्षेप अनिवार्य हो गया है। इस प्रकार सामाजिक योजना और सामाजिक नीति मिलकर समाज के समावेशी, संतुलित और सतत विकास की आधारशिला रखती हैं।

4.13 निबंधनात्मक प्रश्न:

1. सामाजिक नीति एवं सामाजिक योजना से आप क्या समझते है?
2. सामाजिक योजना के अर्थ को समझाते हुए, इसके प्रमुख घटकों की विस्तृत व्याख्या कीजिए।

3. सामाजिक नीति के स्वरूप को समझाइए। सामाजिक नीति के क्रियान्वयन मे प्रमुख समस्याओं की चर्चा कीजिए।

4.14 संदर्भ ग्रंथ सूची

- खान, एल. जे. (1969). " *थ्योरी एंड प्रैक्टिस ऑफ सोशल प्लानिंग"*. न्यूयॉर्क: रसेल सेज फाउंडेशन।
- चक्रवर्ती, सुखमय. (1977). "*डेवलपमेंट प्लानिंग: द इंडियन एक्सपीरियंस"*. ऑक्सफोर्ड: ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस।
- आहूजा, आर. (2014). "भारत में सामाजिक समस्याएँ" , रावत पब्लिकेशन्स।
- आहूजा, आर. (2016). "समाजशास्त्र : संकल्पनाएँ एवं सिद्धांत" रावत पब्लिकेशन्स।
- पाण्डेय, आर. (2011), "सामाजिक नीति एवं सामाजिक नियोजन" साहित्य भवन।
- मिश्रा, बी. डी. (2012), " सामाजिक कार्य एवं सामाजिक नीति" न्यू एकेडमिक पब्लिशर्स।
- शर्मा, आर. ए. (2015), "भारतीय समाज : संस्थाएँ एवं परिवर्तन" रावत पब्लिकेशन्स।
- सिंह, वाई. (1977), "भारत में सामाजिक परिवर्तन एवं स्तरीकरण" मनोहर पब्लिकेशन्स।
- वर्मा, एस. पी. (2013), "भारतीय सामाजिक नीतियाँ" विकास पब्लिशिंग हाउस।
- यादव, एस. एन. (2010), "सामाजिक नियोजन के सिद्धांत" प्रभात प्रकाशन।
- भारत सरकार, योजना आयोग (1951–2017) "पंचवर्षीय योजना दस्तावेज" भारत सरकार।
- कुलकर्णी. (1979). *सोशल पॉलिसी एंड सोशल डेवलपमेंट इन इंडिया*. नई दिल्ली: एसोसिएशन ऑफ स्कूल्स ऑफ सोशल वर्क इन इंडिया।
- रेड्डी, वाई. वेणुगोपाल. (1979). *मल्टी लेवल प्लानिंग इन इंडिया*. नई दिल्ली: विकास पब्लिशिंग हाउस।
- मिश्रा, एस. एन. (1984). *रूरल डेवलपमेंट प्लानिंग: डिजाइन एंड मेथड*. नई दिल्ली: सातवाहन पब्लिकेशन्स।

ईकाई 05 सामाजिक समस्या का समाधान

Solution to Social Problems

ईकाई की रूपरेखा

5.0 प्रस्तावना

5.1 उद्देश्य

5.2 सामाजिक समस्या: अर्थ एवं परिभाषा

5.3 सामाजिक समस्या एवं प्रकार

5.4 सामाजिक समस्या के कारण

5.5 सामाजिक समस्या के मापन के आधार

5.6 सामाजिक समस्या का समाधान

5.7 सामाजिक समस्या के निराकरण में बाधाएं

5.8 सामाजिक समस्याओं के प्रमुख सिद्धांत

5.9 सारांश

5.10 निबंधनात्मक प्रश्न

5.11 संदर्भ ग्रंथ सूची

5.0 प्रस्तावना:

समाजशास्त्र वह विज्ञान है जो मानव समाज की व्यवस्था, अव्यवस्था, उसमें होने वाले बदलावों और समस्याओं का अध्ययन करता है। समाज कैसा चल रहा है—संगठित है या अव्यवस्थित—यह समझने के लिए समाजशास्त्री समाज में मौजूद समानता–असमानता, सहयोग–संघर्ष, व्यवस्था–अव्यवस्था, संगठन–विघटन जैसी स्थितियों का विश्लेषण करते हैं। समाज को समझने का एक महत्वपूर्ण तरीका यह भी है कि उसमें मौजूद सामाजिक समस्याओं का अध्ययन किया जाए। अगर किसी समाज में सामाजिक समस्याएँ कम हैं, तो उसे सुव्यवस्थित, संगठित और स्वस्थ माना जाता है। लेकिन यदि समस्याएँ अधिक हैं, तो इसका मतलब है कि

समाज में असंतुलन और विघटन बढ़ रहा है। सामाजिक समस्याएँ तब पैदा होती हैं जब लोग समाज द्वारा बनाए गए नियमों, मानदंडों और अपेक्षित व्यवहार को नज़रअंदाज़ करते हैं और अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति मनमाने तरीके से करने लगते हैं। जब व्यक्ति और समाज के बीच तालमेल बिगड़ता है, तब समस्याएँ जन्म लेती हैं।

समाज की प्रगति और विकास तभी संभव है जब सामाजिक समस्याओं का वैज्ञानिक तरीके से अध्ययन किया जाए और उनके समाधान के लिए प्रभावी योजनाएँ तैयार की जाएँ। यही काम व्यावहारिक समाजशास्त्र (Applied Sociology) करता है—वह समस्याओं को पहचानता है, उनके कारणों का विश्लेषण करता है और उनसे निपटने के उपाय सुझाता है। आज के समय में समाज अनेक चुनौतियों का सामना कर रहा है—अपराध, बाल-अपराध, तेजी से बढ़ती जनसंख्या, निर्धनता, असमानता, बेरोजगारी, अशिक्षा, मजदूरों और विद्यार्थियों में असंतोष, दलित व कमजोर जातियों की समस्याएँ, जनजातीय मुद्दे, भ्रष्टाचार, नशाखोरी, एड्स जैसी बीमारियाँ आदि। इन समस्याओं को समझने के लिए समाजशास्त्रियों ने विभिन्न दृष्टिकोणों—जैसे संरचनात्मक, सांस्कृतिक, कार्यात्मक, संघर्षवादी आदि—का उपयोग किया है ताकि यह पता लगाया जा सके कि समस्याएँ क्यों पैदा होती हैं, कैसे बढ़ती हैं और उनका समाधान क्या हो सकता है।

5.1 उद्देश्य:

1. इस इकाई के माध्यम से समाज में विद्यमान विभिन्न समस्याओं जैसे गरीबी, बेरोज़गारी, अपराध, नशाखोरी, बाल श्रम, लैंगिक असमानता आदि को स्पष्ट रूप से समझ सकेंगे।
2. इस इकाई के माध्यम से सामाजिक समस्याओं के समाधान द्वारा समाज में व्यवस्था, सामंजस्य और स्थिरता बनाए रखने का भी सामाजिक अध्ययन कर पाएंगे ।
3. इस इकाई मे समाज से संबंधित समस्याओं का अध्ययन कर सकेंगे।

5.2 सामाजिक समस्या : अर्थ एवं परिभाषा

सामाजिक समस्या से तात्पर्य ऐसी स्थिति या व्यवहार से है जिसे समाज का एक बड़ा भाग अवांछनीय, हानिकारक या समाज के मूल्यों, मान्यताओं और नियमों के विरुद्ध मानता है तथा जिसके समाधान के लिए सामूहिक प्रयास करता हैं। इसमे व्यक्तिगत कठिनाई द्वारा समाज के व्यापक वर्ग पर पड़ता है। सामाजिक समस्या वह स्थिति है जो सामाजिक व्यवस्था में बाधा उत्पन्न करती है और समाज के संचालन को प्रभावित करती है। जब कोई समस्या सामाजिक संस्थाओं- जैसे परिवार, शिक्षा, धर्म, अर्थव्यवस्था और शासन को प्रभावित करने लगती है, तब वह सामाजिक समस्या का रूप ले लेती है। अतःसामाजिक समस्या को विभिन्न विद्धानो द्वारा दी गई परिभाषाओं के आधार पर समझने का प्रयास किया हैं।

पाल एच. लैंडिस (Paul H. Landis) के अनुसार, "सामाजिक समस्यायें व्यक्ति की कल्याणकारी अपूर्ण आकांक्षाएँ हैं" ।

अरनोल्ड एम. रोज के अनुसार, "सामाजिक समस्या एक ऐसी अवस्था है जो किसी समूह के द्वारा स्वयं के सदस्यों के लिए असंतोष की उत्तपत्ति के रूप मे पाई जाती है तथा इसमें उन विकल्पों को मान्यता प्रदान

की जाती है जिसके द्वारा कोंई समूह अथवा सदस्य किसी न किसी प्रकार का परिवर्तन लाने के लिए प्रेरित होता है"।

रॉब तथा सेल्जनिक (Roab Earl and G.j. Selznick), के अनुसार, "यह मानवीय सम्बन्धों की एक समस्या है जो समाज के लिए एक गम्भीर खतरा है अथवा जो अनेक व्यक्तियों की आकांक्षाओं की पूर्ति में बाधाएँ पैदा करती है"।

वेलेस वीवर (W Wallace Weaver), के अनुसार, "सामाजिक समस्या एक ऐसी स्थिति है जो चिन्ता, तनाव, संघर्ष या नैराश्य पैदा करती है और एक आवश्यकता की पूर्ति में बाधा डालती है"।

फुलर तथा मायर्स (Fuller and Mayers) के अनुसार, "व्यवहार के जिन प्रतिमानों या परिस्थितियों को किसी समय समाज के बहुत-से सदस्य आपत्तिजनक या अनपेक्षित मानते हों, वे ही सामाजिक समस्याएँ हैं "।

शेपर्ड तथा वॉस (Shepard and Voss) के अनुसार, "एक सामाजिक समस्या समाज की कोई भी ऐसी सामाजिक दशा है जिसे समाज के एक बहुत बड़े भाग या शक्तिशाली भाग द्वारा अनपेक्षित और ध्यान देने लायक समझा जाता है"।

मर्टन और निस्बट (Merton एण्ड Nisbet) के अनुसार, "सामाजिक समस्या व्यवहार का एक ऐसा रूप है जिसे समाज का एक बड़ा भाग व्यापक रूप से स्वीकृत तथा अनुमोदित मानदण्डों का उल्लंघन मानता है"।

फ्रांसिस ई. मेरिल तथा एच. डब्ल्यू एल्डरिज के अनुसार, "सामाजिक समस्याओं की उत्पत्ति के संदर्भ मे लिखते हैं कि सामाजिक समस्याएं उस अवस्था में जन्म लेती है जब गतिहीनता के कारण काफी संख्या मे लोग स्वयं की अपेक्षित भूमिकाओं के निर्वहन में असमर्थ होते हैं"।

उपर्युक्त विद्वानों की परिभाषाओं के आधार पर यह निष्कर्ष निकलता है कि सामाजिक समस्या एक ऐसी सामाजिक या आर्थिक दशा है जो व्यक्ति एवं समाज में बाधक का कार्य करती है। साथ ही जो मनुष्यों की आवश्यकताओं की पूर्ति मे बाधक का कार्य करती है। अतः सामाजिक समस्या को हम उन सामाजिक दशाओं के रूप मे परिभाषित कर सकते है जो सामाजिक कल्याण के लिये घातक एवं समाज विरोधी होती है। जो एक समाज में तनाव एवं संघर्ष पैदा कर समाज के आदर्शों तथा अपेक्षित व्यवहारों का उल्लंघन करती है।

किसी भी सामाजिक दशा को सामाजिक समस्या के रूप में समझने और हल करने के लिए **फुल्लर** ने सामाजिक समस्या के विश्लेषण में तीन तत्वों को प्रधानता प्रदान करते हैं -

1. चेतनता (Awareness / Consciousness)

फुल्लर का मानना है कि किसी भी स्थिति को सामाजिक समस्या तब माना जाता है, जब समाज के बड़े हिस्से के लोग यह समझने लगते हैं कि कोई विशेष परिस्थिति समाज के नियमों, मूल्यों और मानदंडों के खिलाफ जा रही है। इसका अर्थ यह है कि— लोगों में यह सामूहिक जागरूकता बन जाती है कि यह स्थिति

सामान्य या स्वीकार्य नहीं है। यदि इसे अनदेखा किया गया, तो यह समाज की व्यवस्था, संतुलन और एकता को बिगाड़ सकती है। इस प्रकार "चेतनता" वह पहला कदम है जब लोग किसी समस्या को समस्या के रूप में पहचानते और स्वीकार करते हैं।

2. नीति निर्धारण (Policy Formulation)

जब समाज यह मान लेता है कि कोई स्थिति वास्तव में एक सामाजिक समस्या है, तब अगला चरण आता है—समाधान खोजने का। इस स्तर पर- समाज, विशेषज्ञों, समितियों, संगठनों और सरकार से सुझाव लिए जाते हैं। इन सुझावों में से वही सुझाव चुने जाते हैं जो व्यावहारिक, प्रभावी और लागू किए जाने योग्य हों। अंततः एक स्पष्ट नीति बनाई जाती है जिसका उद्देश्य समस्या का समाधान, नियंत्रण या समाप्ति हो। अर्थात् नीति निर्धारण वह चरण है जहाँ समस्या से निपटने के लिए औपचारिक और ठोस दिशा तय की जाती है।

3.सुधार (Remedial Action / Reform)

नीति बन जाने के बाद, उसे व्यवहार में लागू करने का समय आता है। इस चरण में निर्णयों और नीतियों को ज़मीन पर उतारा जाता है। समस्या को दूर करने के लिए शिक्षा, कानून, सामाजिक कार्यक्रम, संस्थाएँ या प्रशासनिक उपाय लागू किए जाते हैं। परिणाम प्राप्त करने के लिए लगातार प्रयास और निगरानी की जाती है। अर्थात "सुधार" वह व्यावहारिक कार्यवाही है जिससे वास्तविक परिवर्तन लाया जाता है और समस्या को कम या समाप्त करने की कोशिश की जाती है।

बोध प्रश्न-01

1– "सामाजिक समस्यायें व्यक्ति की कल्याणकारी अपूर्ण आकांक्षाएँ हैं" निम्नलिखित मे से यह कथं किसका है?

i- फुलर तथा मायर्स ii - मर्टन और निस्बट

iii- पाल एच. लैंडिस iv- वेलेस वीवर

2– फुल्लर ने सामाजिक समस्या के विश्लेषण में निम्नलिखित में कितने तत्वों को प्रधानता दी है?

i- एक ii – दो

iii- तीन iv- चार

5.3 सामाजिक समस्याएं एवं प्रकार

सामाजिक समस्या वह स्थिति है, जिसे समाज का एक बड़ा वर्ग अवांछनीय, हानिकारक एवं सामाजिक मूल्यों के विरुद्ध मानता है तथा जिसके समाधान के लिए सामूहिक प्रयास आवश्यक होते हैं। सामाजिक समस्याएँ

समाज के विभिन्न पक्षों को प्रभावित करती हैं, इसलिए इन्हें उनके स्वरूप के आधार पर कई प्रकारों में वर्गीकृत किया गया है।

1. **जनसंख्या** – जनसंख्या किसी भी समाज की शक्ति होती है, किंतु जब जनसंख्या तेजी से और अनियंत्रित रूप से बढ़ती है, तब वही जनसंख्या एक गंभीर सामाजिक समस्या बन जाती है। भारत जैसे विकासशील देश में जनसंख्या वृद्धि ने अनेक सामाजिक-आर्थिक और सांस्कृतिक समस्याओं को जन्म दिया है, अतः इसे सामाजिक समस्या के रूप में देखा जाता है।

2. **क्षेत्रवाद** – क्षेत्रवाद वह भावना है जिसमें व्यक्ति अपने क्षेत्र, प्रांत या स्थानीय पहचान को राष्ट्र से ऊपर मानने लगता है। जब किसी विशेष क्षेत्र के हितों को लेकर अन्य क्षेत्रों के प्रति द्वेष, भेदभाव या संघर्ष उत्पन्न होता है, तब क्षेत्रवाद एक गंभीर सामाजिक समस्या का रूप ले लेता है। भारत जैसे विविधताओं वाले देश में क्षेत्रवाद ने अनेक सामाजिक और राजनीतिक समस्याएँ पैदा की हैं।

3. **जाति** – जाति भारतीय समाज की एक प्राचीन सामाजिक संस्था है। जिसका प्रारंभ में उद्देश्य समाज में कार्य-विभाजन और सामाजिक व्यवस्था बनाए रखना था। किंतु समय के साथ जाति व्यवस्था कठोर होती गई और इससे जातिवाद का विकास हुआ, जो आज भारतीय समाज की एक गंभीर सामाजिक समस्या बन चुका है। संविधान की धारा 15 (1) में जातिवाद को समाप्त कर दिया गया है लेकिन यह अभी भी एक सामाजिक समस्या है।

4. **अशिक्षा** – अशिक्षा के कारण व्यक्ति में अंधविश्वास, रूढ़िवादी सोच और संकीर्ण दृष्टिकोण विकसित हो जाता है। अशिक्षित व्यक्ति अपने अधिकारों और कर्तव्यों के प्रति जागरूक नहीं होता, जिससे वह शोषण का शिकार बनता है। इससे समाज में गरीबी, बेरोजगारी, स्वास्थ्य समस्याएँ, जनसंख्या वृद्धि और अपराध जैसी समस्याएँ बढ़ती हैं। राष्ट्रीय और अन्तर्राष्ट्रीय स्तर में भी अशिक्षा प्रमुख महत्वपूर्ण कारक है। सामाजिक समस्याओं के निराकरण के लिए अशिक्षा की समस्या का यथाशीघ्र विलोपन किया जाना चाहिए।

5. **पितृसत्तात्मकता** – पितृसत्तात्मकता वह सामाजिक व्यवस्था है जिसमें पुरुष को परिवार और समाज में प्रधान स्थान प्राप्त होता है तथा स्त्री को पुरुष की तुलना में हीन और आश्रित माना जाता है। भारतीय समाज प्राचीन काल से ही पितृसत्तात्मक रहा है, जिसके कारण महिलाओं को अनेक सामाजिक समस्याओं का सामना करना पड़ता है। अतः इसी मानसिकता के कारण पुत्र-प्रेम, लैंगिक असमानता और स्त्री-भ्रूण हत्या जैसी गंभीर समस्याएँ उत्पन्न हुई हैं।

6. **निर्धनता** – निर्धनता वह स्थिति है जिसमें व्यक्ति अपनी मूलभूत आवश्यकताओं भोजन, वस्त्र, आवास, शिक्षा और स्वास्थ्यक को पूरा करने में असमर्थ होता है। भारतीय समाज में निर्धनता एक अत्यंत गंभीर सामाजिक समस्या है और यह अनेक अन्य सामाजिक समस्याओं की जड़ मानी जाती है। भारत में जनसंख्या वृद्धि, अशिक्षा, बेरोजगारी और आर्थिक असमानता के कारण निर्धनता व्यापक रूप से फैली हुई है।

7. **बेरोजगारी** – जब व्यक्ति शारीरिक व मानसिक रूप से कार्य करने के लिए सक्षम व इच्छुक होता है और उस समय भी वह कार्य प्राप्त नहीं कर पाता तब उसे बेरोजगार का नाम दिया जाता है, और कार्य प्राप्त न करने की स्थिति बेरोजगारी कहलाती है। बेरोजगारी आज केवल भारत की नहीं अपितु सम्पूर्ण विश्व की प्रमुख समस्या है।

8. **बालश्रम** – निर्धनता के कारण बच्चे शिक्षा से वंचित रह जाते हैं। और उनका अधिकांश समय श्रम करने मं व्यतीत हो जाता हैं। अतः इस समस्या के निवारण के लिए सरकार द्वारा निर्मित कानूनों का कठोर रूप से पालन किया जाना आवश्यक है।

9. **नगरीकरण एवं औद्योगीकरण** – नगरीकरण से तात्पर्य, जनसंख्या का रोजगार, शिक्षा, स्वास्थ्य और बेहतर जीवन की खोज में नगरों की ओर पलायन करना तथा नगरों के तीव्र विस्तार से है। यद्यपि नगरीकरण को विकास का संकेत माना जाता है, परंतु भारत में इसका असंतुलित और अव्यवस्थित स्वरूप इसे एक गंभीर सामाजिक समस्या बना देता है।

   औद्योगिकरण के जहाँ अनेक सकारात्मक प्रभाव एवं लाभ है, वहाँ इसके हानिकारक प्रभाव भी है। औद्योगीकरण के कारण अनेक सामाजिक समस्यायें उत्पन्न हुई हैं जिनके कारण समाज, परिवार, श्रमिक आदि को अनेक कठिनाईयों का सामना करना पड़ रहा है। औद्योगिकरण के कारण मुख्य समस्यायें- बेरोजगारी, श्रमिकों की समस्याएँ, वायु, पानी एवं ध्वनि प्रदूषण, वेश्यावृत्ति, संयुक्त परिवारों का विघटन, श्रमिक एवं पूँजीपतियों के बीच संघर्ष आदि हैं।

10. **गन्दी बस्तियाँ** – गन्दी बस्तियाँ वे आवासीय क्षेत्र हैं जहाँ लोग अत्यंत अस्वच्छता और अव्यवस्थित परिस्थितियों में जीवन यापन करते हैं। भारत के बड़े नगरों और औद्योगिक केंद्रों में तीव्र नगरीकरण और ग्रामीण-नगरीय पलायन के परिणामस्वरूप गन्दी बस्तियों का तीव्र विकास हुआ है। यह स्थिति एक गंभीर सामाजिक समस्या बन चुकी है। गन्दी बस्तियों का प्रमुख कारण गरीबी, बेरोजगारी, कम आय, सस्ते आवास की कमी और नगर नियोजन की विफलता है।

सामाजिक समस्याओं के लिए उत्तरदायी कारक और भी अनेक हैं जो भारतवर्ष की विभिन्न विविधताओं से सम्बन्धित है जिनका वर्णन भौगोलिक, प्रजातीय, व्यावसायिक, राजनैतिक, सांस्कृतिक आदि के आधार पर किया जा सकता है। भारत एक विविधताओं का देश है इसलिए भारतीय समाज की सामाजिक समयाओं के कारक भी अनेक हैं।

सामाजिक समस्या के प्रकार- समाज में उत्पन्न होने वाली समस्याओं का स्वरूप, क्षेत्र और प्रभाव विभिन्न प्रकार की होता हैं। समाजशास्त्रियों ने सामाजिक समस्याओं को समझने की सुविधा के लिए उन्हें कई श्रेणियों में विभाजित किया है। प्रमुख रूप से सामाजिक समस्याओं के निम्नलिखित प्रकार हैं।

1. **व्यक्तिगत (वैयक्तिक) सामाजिक समस्याएँ** - ये वे समस्याएँ हैं जिनका संबंध मुख्य रूप से व्यक्ति से होता है, परंतु जब ये व्यापक रूप लेती हैं तब यह एक सामाजिक समस्या बन जाती हैं। उदाहरण- नशाखोरी, आत्महत्या, अपराध प्रवृत्ति, मानसिक विकार।

2. **पारिवारिक सामाजिक समस्याएँ -** परिवार समाज की मूल संस्था है। परिवार में उत्पन्न समस्याएँ जैसे- तलाक, घरेलू हिंसा, दहेज प्रथा, पारिवारिक विघटन, आदि समाज को प्रभावित करती हैं। ।

3. **आर्थिक सामाजिक समस्याएँ -** ये समस्याएँ आर्थिक असमानता और संसाधनों के असमान वितरण से जुड़ी होती हैं। जिसमें गरीबी, बेरोज़गारी, श्रम शोषण, बाल श्रम आदि सम्मिलित है।

4. **सामाजिक-सांस्कृतिक समस्याएँ-** इनका संबंध सामाजिक परंपराओं, रूढ़ियों और मूल्यों से होता है। उदाहरण-जातिगत भेदभाव, अस्पृश्यता, लैंगिक असमानता, बाल विवाह, दहेज।

5. **राजनीतिक सामाजिक समस्याएँ -** राजनीतिक व्यवस्था से जुड़ी समस्याएँ समाज के संतुलन को प्रभावित करती हैं। उदाहरण- भ्रष्टाचार, सत्ता का दुरुपयोग, चुनावी हिंसा, प्रशासनिक अक्षमता।

6. **नैतिक एवं व्यवहारिक सामाजिक समस्याएँ-** इस प्रकार की समस्याएँ समाज के नैतिक मानदंडों से विचलन को दर्शाती हैं। जैसे - वेश्यावृत्ति, भ्रष्टाचार, जुआ, अनैतिक व्यवहार आदि समाज में विकलन एवं अपराध में वृद्धि करती है।

7. **राष्ट्रीय एवं वैश्विक सामाजिक समस्याएँ -** किसी भी समाज में राष्ट्रीय एवं वैश्विक समस्याएं उस समाज के निर्माण के लिए आवश्यक होती है जो केवल किसी एक समाज तक सीमित नहीं रहती है अतः समाज के निर्माण के लिये इन समस्याओं का निदान किया जाना आवश्यक होता है। जैसे - आतंकवाद, पर्यावरण प्रदूषण, जनसंख्या विस्फोट आदि।

5.4 सामाजिक समस्याओं के कारण (Cause of Social Problems) :-

सामाजिक समस्याओं के अनेक कारण हैं। विभिन्न विद्वानों ने सामाजिक समस्याओं के कारणों पर अपने विचार प्रकट किए हैं जो निम्न हैं-

(1) रॉब और सेल्जनिक ने 'मेजर सोशियल प्रोब्लम्स' में सामाजिक समस्याओं के निम्नलिखित पाँच कारण बताए हैं-

1. जब समाज के लोगों की पारस्परिक सम्बन्धों को व्यवस्थित करना अत्यंत कठिन हो जाता है, तब सामाजिक समस्या उत्पन्न होती है।

2. समाज में संस्थाओ के विचलन के परिणामस्वरूप भी सामाजिक समस्याएँ उत्पन्न होने लगती हैं।

3. समाज द्वारा परंपरागत नियमों के विरूद्ध अनैतिक व्यवहार किया जाता है, तब सामाजिक समस्याएँ उत्पन्न होती हैं।

4. जब समाज के मूल्यों का हस्तान्तरण एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी को हस्तांतरित न किया जा सके, तब सामाजिक समस्याएँ उत्पन्न होने लगती हैं।

5. जब समाज के सामान्य सदस्यों की आकांक्षाओं तथा अपेक्षाओं की संरचना बिगड़ने लगती है, तब सामाजिक समस्याएँ उत्पन्न होती हैं।

(2) रॉबर्ट ए. निस्बेत ने सामाजिक समस्या की उत्पत्ति के निम्न चार कारण बताए है।

1. संघर्ष
2. सामाजिक गतिशीलता
3. व्यक्तिवादिता
4. व्याधिकीय स्थिति

(3) पॉल लैंडिस ने सामाजिक समस्या के चार कारण बताए हैं-

1. व्यक्ति का समायोजन करने में असफल होना।
2. संस्थात्मक समायोजन में असफल होना।
3. सामाजिक नीतियों में संस्थात्मक विलम्बन का होना ।
4. सामाजिक संरचना का दोषपूर्ण होना।

उपर्युक्त वैज्ञानिकों द्वारा व्यक्त किए गए सामाजिक समस्याओं के कारणों से स्पष्ट होता है कि सामाजिक समस्याओं को मनोविकारी एवं विकृत सामाजिक एवं व्यक्तिगत परिस्थितियाँ जन्म देती हैं। ये ऐसी विकृति परिस्थितियाँ है जो ग्रामीण-नगरीय और महानगरीय आदि सभी छोटे-बड़े समाजों में पैदा होती हैं। वे समाज जो आकार में छोटे होते हैं तथा जिनमें यांत्रिक एकता एवं परिवर्तन की गति धीमी पायी जाती है, उनमें सामाजिक समस्याएँ कम होती हैं, तथा वे समाज जो आकार में बड़े होते हैं जिनमें सावयवी एकता एवं परिवर्तन की गति तीव्र पायी जाती है, उनमें सामाजिक समस्याएँ अधिक होती हैं। इसी प्रकार भिन्न-भिन्न समाजों में सामाजिक समस्याओं के कारणात्मक कारक भी भिन्न-भिन्न होते जिनको समझने के बाद उनके समाधान पर विचार करना आवश्यक है।

5.5 सामाजिक समस्या के मापन के आधार

समाज में किसी भी समाजिक समस्या को मापने के अनेको आधार हो सकते है परंतु उनकी प्रकृति का पता लगाना वास्तव में एक जटिल प्रक्रिया है। इसका कारण यह कि प्रत्येक समाज में सामाजिक समस्या की प्रकृति अलग-अलग समाजों में भिन्न हो सकती है। अर्थात् एक ही समाज के भिन्न-भिन्न लोग किसी दशा को भिन्न-भिन्न दृष्टि से देखते है। इस कठिनाईयों के बावजूद भी इन सामाजिक समस्याओं को मापा जा सकता है। जिसकी निम्नलिखित तीन विधियां है।

1- भावनात्मक आधार - सामाजिक समस्था को मापने में भावनात्मक आधार की महत्त्वपूर्ण भूमिका होती है। जिसमें किसी सामाजिक समस्या को जनसाधारण की भावनाओं के आधार पर समझा जाता है। जनसाधारण की भावनाएं, समस्याओ के प्रति जितनी अधिक प्रतिकूल होगी, सामाजिक समस्याएं भी उतनी ही अधिक गम्भीर होगी। जैसे- वेश्यावृत्ति में शामिल महिलाएं,जिनको विभिन्न अवसरों पर नाचने पर उचित परंतु वेश्यावृत्ति के रूप में असामाजिक समझा जाता है। अतार्थ लोगों की भावनाओं के पीछे वेश्यावृति को उचित-अनुचित समझने का आधार होता है।

2. सांस्कृतिक आधार - यह वह स्थिति एवं दशा जिसमें किसी समाज की सांस्कृतिक विशेषता उसकी परम्पराओं के प्रतिकूल होती है। प्रत्येक समाज के संचालन हेतु कुछ मूल्य, आदर्श एवं नियम होते हैं। यदि समाजों में इन मूल्य, आदर्श एवं नियमों के विपरीत आचरण होने लगे तो वह एक सामाजिक समस्या के रूप में प्रकट होने लगती है। जैसे अस्पृश्यता, बाल-विवाह, दहेज प्रथा तथा विधवा विवाह निषेध आदि

3. सांख्यिकीय आधार - सामाजिक समस्या के मापन का सांख्यिकीय आधार उन संख्यात्मक तथ्यों, आँकड़ों और संकेतकों पर आधारित होता है, जिनके माध्यम से किसी सामाजिक समस्या की प्रकृति, तीव्रता, विस्तार और प्रभाव का वैज्ञानिक अध्ययन किया जाता है। अतः सांख्यिकी आधार किसी भी सामाजिक समस्या समझने का एक महत्त्वपूर्ण साधन है।

5.6 सामाजिक समस्याओं का समाधान

मानव एक सामाजिक प्राणी है जो समाज में विभिन्न की क्रियाओं को करता है। विभिन्न क्रियाओं को प्रकार करने में उसे अनेकों समस्याओं का सामाना भी करना पड़ता है। जिसके लिए मानव उन समस्याओं के समाधान को भी खोजता रहता है। अत: इन समाधानों के अन्तर्गत हम निम्नलिखित तीन महत्वपूर्ण दृष्टिकोणो की चर्चा करेगें,

1- बहुकारकवादी दृष्टिकोण (Multiple-Factor Approach) – समाज एक अत्यधिक जटिल व्यवस्था है, जिसमें अनेकों ईकाईयो का समायोजन होता है। इन इकाईयों को समायोजित करने के लिए व्यवस्था में अनेको समस्याएं आती है। जिस प्रकार जाति व्यवस्था भारतीय समाज की प्रमुख समस्या है। इस समस्या से अनेको कारण सम्बंधित होते है, जैसे- धार्मिक कर्म का सिद्धान्त, निर्धनता, अन्धविश्वास, अशिक्षा, पिछडापन, सामाजिक सांस्कृतिक, राजनीतिक आदि।

2. पारस्परिक संबद्धता (Inter- Relatedness) – सामाजिक समस्याओं में परस्पर संबद्धता पायी जाती है। जो एक दूसरे से परस्पर आश्रित रहते हैं। समाज में कोई भी सामाजिक समस्या पृथ्क एवं स्वतंत्र रूप से विद्यमान नही होती हैं। अतः समस्याओं के समाधान हेतु समस्या से सम्बंधित कारकों एवं कारणों का अध्ययन एवं विश्लेषण किया जाना आवश्यक होता है। जैसे-: बेकारी की समस्या के कारणों में जनसंख्या वृद्धि, दोषपूर्ण शिक्षा, कुटीर एवं लघु उद्योगों का विघटन, भौगोलिक गतिहीनता आदि परस्परपर सम्बंधित रहते है।

3. सापेक्षता (Relativity) – सामाजिक प्रत्येक समाज में सामाजिक समस्याएं समाज एवं स्थान के सापेक्ष होती है जिसके अन्तर्गत एक समय विशेष में एक कार्य सामाजिक समस्या हो सकता है, परंतु उसी समाज में

दूसरे काल में वह मान्यता प्राप्त क्रिया हो सकती है। जैसे -: जनसंख्या वृद्धि भारत में सामाजिक समस्या है परन्तु चीन में नही है।

5.7 सामाजिक समस्याओं के निराकरण में बाधाएं

जॉनसन के अनुसार सामाजिक समस्याओं की निम्नलिखित बाधाएं है।

1- **सुझावों को हानिकारक बताना** – जब सामाजिक समस्याओं के निराकरण करने हेतु सुझावों को दिया जाता है। तो प्रभावशाली लोग उन सुझावों को हानिकारक बताकर उसे सामान्य लोगो तक नही पहुंचने नहीं देते है।

2- **शक्तिशाली भावनाओं तथा निहित स्वार्थो का समर्थन -** जॉनसन के शब्दों में अनेको समस्याओं के समाधान में शक्तिशाली भेदभाव और निहित स्वार्थी के कारण लोग सामाजिक संरचना को समर्थन देते है। जिसमें परिवर्तन किए बिना समस्याओं का समाधान करना कठिन हो जाता है। जैसे -: निर्धनता, भ्रष्टाचार, अशिक्षा आदि।

3- **कार्य की धीमी गति** – सामाजिक समस्यों को निराकरण हेतु अनेकों प्रकार के कार्यक्रमों एवं योजनाओं का निर्माण किया जाता है परन्तु इन कार्यक्रमों और योजनाओं को क्रियान्वयन अत्यधिक धीमी गति से होता है जिससे समस्या का निराकरण एक निश्चित समय पर नही हो पाता है। जैसे बाल विवाह, दहेज निरोधक अधिनियम, विवाह विच्छेद अधिनियम आदि

5.8 सामाजिक समस्याओं के प्रमुख सिद्धान्त:-

समाज वैज्ञानिकों ने सामाजिक समस्याओं के मूल में पाए जाने वाले मूलभूत तत्वों का वैज्ञानिक दृष्टिकोण से अध्ययन कर वस्तुनिष्ठ विश्लेषण एवं सार देने का प्रयास किया है। यद्यपि, भिन्न-भिन्न सामाजिक समस्याओं का अलग-अलग आधार होता, तथापि इसमें परस्पर सम्बन्ध भी पाया जाता है। सामाजिक समस्याओं के संदर्भ में निम्नलिखित सिद्धान्त प्रमुख हैं -

1. सामाजिक विघटन का सिद्धान्त (Theory of Social Disintegration) – समाज में उत्पन्न होने वाली विभिन्न समस्याओं समाज में उत्पन्न होने वाली विभिन्न समस्याओं – जैसे अपराध, गरीबी, नशाखोरी, पारिवारिक विघटन, बाल अपराध आदि को समझाने के लिए अनेक सिद्धांत दिए गए हैं। इन्हीं में से एक महत्वपूर्ण सिद्धांत है सामाजिक विघटन का सिद्धांत। यह सिद्धांत मानता है कि सामाजिक समस्याओं की जड़ व्यक्तिगत दोषों में नहीं, बल्कि समाज की संरचना और संस्थाओं के कमजोर या अव्यवस्थित होने में निहित होती है।

2. सांस्कृतिक विलम्बन का सिद्धान्त (Theory of Cultural Lag) – समाज में भौतिक संस्कृति और अभौतिक संस्कृति के बीच असंतुलन के कारण अनेक सामाजिक समस्याएँ उत्पन्न होती हैं। आँगबर्न **(W.F Ogburn)** के अनुसार जब नई तकनीकें और भौतिक साधन समाज में प्रवेश करते हैं, तो समाज उन्हें तुरंत अपना लेता है, परंतु उनके अनुरूप सामाजिक मूल्य, नियम और संस्थाएँ समय पर विकसित नहीं हो पातीं।

परिणामस्वरूप समाज के सदस्यों को नई परिस्थितियों के अनुरूप आचरण करने में कठिनाई होती है और सामाजिक समस्याएँ उत्पन्न होती हैं।

3. मूल्य संघर्ष का सिद्धान्त (Theory of Value Conflict) – यह सिद्धान्त मानता है कि समाज में विभिन्न समूहों, वर्गों और संस्कृतियों के अपने-अपने मूल्य, मान्यताएँ और हित होते हैं। जब इन मूल्यों में टकराव उत्पन्न होता है, तब सामाजिक समस्याएँ जन्म लेती हैं। कार्ल मार्क्स, मेकाइवर, तथा सेलिन जैसे समाजशास्त्रियों ने इस विचार को विकसित किया। **सेलिन के अनुसार** सामाजिक समस्याएँ तब उत्पन्न होती हैं जब किसी समूह के सांस्कृतिक मूल्य और नियम समाज के प्रभुत्वशाली समूह के मूल्यों से टकरा जाते हैं।

4. वैयक्तिक विचलन का सिद्धान्त (Theory of Individual Deviance) – समाज में पाई जाने वाली अनेक समस्याएँ,जैसे अपराध, नशाखोरी, वेश्यावृत्ति, आत्महत्या आदि ऐसे व्यवहारों से जुड़ी होती हैं जो समाज द्वारा स्वीकृत नियमों और मानदंडों से भिन्न होते हैं। इन समस्याओं की व्याख्या के लिए समाजशास्त्र में वैयक्तिक विचलन का सिद्धान्त प्रस्तुत किया गया है। यह सिद्धान्त सामाजिक समस्याओं की उत्पत्ति को व्यक्ति के विचलित व्यवहार से जोड़कर देखता है। वैयक्तिक विचलन का सिद्धान्त यह मानता है कि सामाजिक समस्याओं का प्रमुख कारण व्यक्ति की मानसिक, जैविक या नैतिक कमजोरी होती है। इस दृष्टिकोण के अनुसार व्यक्ति का गलत चयन, दोषपूर्ण व्यक्तित्व, असामान्य प्रवृत्तियाँ अथवा अनुचित समाजीकरण उसे विचलन की ओर ले जाते हैं। परिणामस्वरूप समाज में अव्यवस्था और समस्याएँ उत्पन्न होती हैं।

5.9 सारांश

इस इकाई में सामाजिक समस्या की अवधारणा को स्पष्ट कर यह समझने का प्रयास किया गया है की, सामाजिक समस्या वह स्थिति है जिसको समाज अवांछनीय एवं हानिकारकमानते हुए उसके समाधान के लिए सामूहिक प्रयास करते है। सामाजिक समस्याओं की उत्पत्ति के कारणों में संस्थागत विघटन, मूल्य-संघर्ष, सामाजिक परिवर्तन, व्यक्तिवादिता तथा समायोजन की असफलता प्रमुख हैं। इनके मापन के लिए भावनात्मक, सांस्कृतिक और सांख्यिकीय आधारों का उपयोग किया जाता है। साथ ही निहित स्वार्थ, भावनात्मक विरोध और क्रियान्वयन की धीमी गति सामाजिक समस्याओं के निराकरण में प्रमुख बाधाएँ हैं। सामाजिक विघटन, सांस्कृतिक विलम्बन, मूल्य संघर्ष और वैयक्तिक विचलन जैसे सिद्धांत सामाजिक समस्याओं की व्याख्या में सहायक हैं। संक्षेप में, यह इकाई सामाजिक समस्याओं को समझने और उनके समाधान हेतु वैज्ञानिक दृष्टिकोण विकसित करने पर बल देती है।

5.10 निबंधनात्मक प्रश्न

1. सामाजिक समस्या से आप क्या समझते हो? इसके प्रमुख प्रकारों एवं कारणों की व्याख्या कीजिए।
2. सामाजिक समस्याओ के समाधान एवं उसके निराकरण हेतु प्रमुख बाधाओं का विस्तृत वर्णन कीजिए।

5.11 संदर्भ ग्रंथ सूची

- आहूजा, आर. (2014), " *भारत में सामाजिक समस्याएँ एवं समाधान"* रावत पब्लिकेशन्स, जयपुर।
- आहूजा, आर. (2016) "*समाजशास्त्र : सामाजिक समस्याएँ"* रावत पब्लिकेशन्स, जयपुर।
- मिश्रा, बी. डी. (2012), "*सामाजिक कार्य एवं सामाजिक समस्या समाधान*" न्यू एकेडमिक पब्लिशर्स, दिल्ली।
- शर्मा, आर. ए. (2015), "*भारतीय समाज : समस्याएँ और समाधान"* रावत पब्लिकेशन्स, जयपुर।
- सिंह, योगेन्द्र. (2007) "*आधुनिक भारत में सामाजिक परिवर्तन"* रावत पब्लिकेशन्स, जयपुर।
- वर्मा, एस. पी. (2013), "*भारतीय सामाजिक नीतियाँ एवं समस्या समाधान"* विकास पब्लिशिंग हाउस, नई दिल्ली।
- यादव, एस. एन. (2010), "*सामाजिक समस्या एवं सामाजिक नियंत्रण"* प्रभात प्रकाशन, दिल्ली।
- नीति आयोग. (2019). *सामाजिक विकास एवं समस्या समाधान दस्तावेज*. भारत सरकार।
- संयुक्त राष्ट्र. (1971). *सामाजिक समस्याएँ एवं उनके समाधान*. संयुक्त राष्ट्र प्रकाशन।
- फुलर, आर. सी., एवं मायर्स, आर. (1941), "*The development of social problems"* American Sociological Review.

इकाई-6 सामाजिक नीति: अवधारणा एवं विशेषताएं

Social Policy: Concept and Charecteristics

इकाई की रूपरेखा

6.0 प्रस्तावना

6.1 उद्देश्य

6.2 भारत एवं सामाजिक नीतियां

6.3 सामाजिक नीति की अवधारणा

6.3.1. सामाजिक नीति का अर्थ

6.3.2 सामाजिक नीति की परिभाषा

6.4 सामाजिक नीति की विशेषताएं

6.5 सारांश

6.6 शब्दावली

6.7 बोध प्रश्नों हेतु उत्तर-संकेत

6.8 निबंधात्मक अभ्यास प्रश्न

6.9 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

6.10 सहायक उपयोगी पाठ्य-सामग्री

6.0 प्रस्तावना (Introduction):

सामाजिक नीतियां किसी समाज के सकारात्मक और निर्देशित सामाजिक परिवर्तन में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाती हैं। किसी भी समाज की सामाजिक एवं राजनीतिक व्यवस्था चाहे जैसी भी रही हो, किंतु प्रत्येक समाज में देश, काल, परिस्थिति के अनुसार शासकों ने अपने समाज के कल्याण एवं नियोजन हेतु, समस्याओं के उन्मूलन हेतु और वांछित सामाजिक परिवर्तन हेतु सामाजिक नीतियों का निर्माण एवं क्रियान्वयन किया है। सामाजिक पुनर्निर्माण हेतु, सामाजिक जीवन के समृद्धि एवं विकास हेतु, जनकल्याण एवं प्रशासन हेतु सामाजिक नीतियों की भूमिका किसी भी समाज में महत्वपूर्ण होती है। किसी समाज की सामाजिक नीतियों का निर्माण उस समाज के नैतिक मूल्यों, आवश्यकतओं, आदर्शों और सामाजिक सुरक्षा को ध्यान में रखते हुए किया जाता है। सामाजिक नीतियां सामाजिक एकता, व्यवस्था एवं सुदृढ़ता में वृद्धि करने के साथ ही वांछित सामाजिक परिवर्तन को प्राप्त करने अथवा रोकने में अपनी महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाती हैं। सटीक सामाजिक नीतियों के द्वारा अनेक सामाजिक क्षेत्रों में समस्याओं के निदान एवं समाधान में सहायता प्राप्त होती है। भारत देश जैसे प्रजातांत्रिक समाज में सामाजिक नीतियां सामाजिक व्यवस्था एवं सुदृढ़ता के लिए प्राणवायु के समान है। सामाजिक नीतियों के द्वारा सामाजिक असमानताओं को कम करने में सहायता तो मिलती ही है इसके साथ ही समय के अनुसार सही सामाजिक नीतियों के द्वारा समाज में विकास, व्यवस्था और प्रगति को निर्दिष्ट समय में प्राप्त किया जा सकता है। इस इकाई में आगे भारत एवं सामाजिक नीतियां विषय के अंतर्गत भारत में सामाजिक नीतियों के सम्बन्ध में ऐतिहासिक पृष्ठभूमि का विवेचन, सामाजिक नीति की अवधारणा, सामाजिक नीति का अर्थ, सामाजिक नीति की परिभाषा इसकी विशेषताओं की विस्तारपूर्वक विवेचना की गई है। इस प्रकार यह इकाई सामाजिक नीतियों के दृष्टिकोण से महत्वपूर्ण है।

6.1 उद्देश्य:

इस इकाई के अध्ययन के बाद आप-

- सामाजिक नीतियों के विषय में समझ सकेंगे।

- सामाजिक नीति की अवधारणा से परिचित हो सकेंगे।
- सामाजिक नीति का अर्थ और इसकी परिभाषा जान सकेंगे।
- सामाजिक नीति की विशेषताओं को समझ सकेंगे।

6.2 भारत एवं सामाजिक नीतियां (India and Social Policies)

स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद से भारत विश्व का सबसे बड़ा लोकतांत्रिक देश है। लोकतांत्रिक देशों में सामाजिक व्यवस्था एवं संगठन का संचालन संवैधानिक मान्यताओं एवं सिद्धांतों के आधार पर होता है। देश के अंदर सामाजिक नीतियों के निर्माण में संवैधानिक एवं वैधानिक व्यवस्था का ध्यान रखा जाता है। भारत का संविधान एक लिखित है संविधान है, जिसमें समाज कल्याण, सामाजिक समृद्धि को प्राप्त करने के लिए विभिन्न तरह की योजनाओं एवं नीतियों के निर्माण का निर्देश दिया गया है। भारत में सामाजिक नीतियों का इतिहास ज्ञात राजतंत्रात्मक शासन (रामायणकालीन एवं महाभारतकालीन समाज) के राजधर्म से सम्बंधित मान सकते हैं, जहाँ राजा को जनता के कल्याण और जवाबदेही के लिए रजा के वनवास और अज्ञातवास जैसे उदहारण देखने को मिलते हैं। अर्थात् उपलब्ध ऐतिहासिक साक्ष्य यह सिद्ध करते हैं कि राजा का जीवन व्यक्तिगत रूप में कुछ भी नहीं था, बल्कि प्रजा के लिए राजा अपने पूरे जीवन काल में समर्पित रहता था। एक राजा के लिए प्रजा के कल्याण और संतुष्टि का अधिक महत्त्व रखता था।

एक लम्बे समय के मुग़ल शासन एवं औपनिवेशिक शासन के बाद जब भारत में स्वतंत्रता की प्राप्ति हुई और स्वशासन का आगमन हुआ तब यहाँ के अपने सांस्कृतिक आदर्शों एवं प्रतिमानों के अनुरूप सामाजिक नीतियों के निर्माण की आवश्यकता पड़ी। तब से लेकर आज स्वतंत्रता 75 वर्ष पूर्ण कर लेने के साथ ही समय-समय पर आवश्यकता के अनुरूप विभिन्न समाज कल्याण के क्षेत्रों में अनेक सामाजिक नीतियों का निर्माण करके एक उत्तम भारत के सृजन को साकार रूप देने का प्रयास किया गया। वस्तुतः सामाजिक नीतियां विश्व के अन्य देशों के साथ ही भारत में शासन और प्रशासन के लक्षित उद्देश्य को प्राप्त करने के लिए एक अनिवार्य शर्त

हैं। सामाजिक नीतियों के अभाव में न केवल विकास कार्य में बाधा पड़ती है बल्कि समाज कल्याण का मार्ग भी अवरुद्ध होता है।

इस प्रकार निर्दिष्ट सामाजिक लक्ष्यों की प्राप्ति हेतु, बाधारहित विकास मार्ग हेतु, समय, श्रम एवं धन के उचित संयोजन हेतु, समय से सामाजिक आवश्यकताओं की पूर्ति हेतु, अनेक प्रकार की सामाजिक एवं आर्थिक समस्याओं से बचने हेतु भारत में पूर्व समय से लेकर अद्यतन समयानुसार विभिन्न सामाजिक क्षेत्रों में सामाजिक नीतियों के निर्माण, पुनर्निर्माण एवं शोधन किया जाता रहा है। भारत जैसे जनसंख्या अतिरेक वाले देश में बिना सामाजिक नीतियों के समाज कल्याण और सामाजिक विकास का प्राप्त करना लगभग असंभव सा कार्य है। अतः देश में सतत विकास के निर्दिष्ट सामाजिक लक्ष्यों को प्राप्त करने के लिए सामाजिक नीतियों की भूमिका सबसे महत्वपूर्ण कही जा सकती है।

भारत में सामाजिक नीतियों के उदहारण- प्राचीन भारत के भारतीय ज्ञान परंपरा में अनेकों ऐसे उदहारण मिलते हैं जो आज भी विभिन्न सामाजिक क्षेत्रों के कल्याण से जुड़े हुए हैं। जैसे- वसुधैव कुटुम्बकम (समाज कल्याण क्षेत्र), वर्ण व्यवस्था (सामाजिक, आर्थिक एवं राजनीतिक व्यवस्था एवं संगठन के क्षेत्र), आश्रम व्यवस्था (व्यक्तिगत विकास एवं उन्नयन के साथ ही शैक्षिक, आर्थिक एवं सामाजिक क्षेत्र), संयुक्त परिवार प्रणाली (पारिवारिक व्यवस्था का क्षेत्र), अनुलोम और प्रतिलोम वैवाहिक प्रणाली, विवाह का संस्करात्मक स्वरुप (वैवाहिक व्यवस्था का क्षेत्र), महिला एवं पुरुष सभी लिंगों के प्रति सम्मान एवं आदर का भाव (पुत्री एवं पत्नी को क्रमशः देवी एवं लक्ष्मी और अर्धांगिनी के रूप में मान्यता) गुरुकुल व्यवस्था (निःशुल्क शैक्षिक क्षेत्र) आदि। सदियों के उथल पुथल और समय परिवर्तन के साथ ही भारत देश ने अनेक उतार-चढ़ाव देखे। वर्तमान भारतीय समाज, संस्कृति और आवश्यकताओं के अनुरूप समाज कल्याण तथा समृद्धि को सुनिश्चित करने के लिए स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद संविधान का निर्माण कर उसे लागू किया गया। जिसमें मौलिक अधिकार, मौलिक कर्तव्यों, नीति निदेशक तत्वों के साथ ही समाज कल्याण के विभिन्न क्षेत्रों में अनेक प्रावधान किये गए हैं। वर्तमान भारत में सामाजिक नीतियों के सफल क्रियावयन के लिए नीति (National Institution for Transforming India) आयोग की स्थापना की गई, जिसका उद्देश्य नीतियों का निर्माण सतत विकास लक्ष्यों

की प्राप्ति एवं निगरानी करना, लक्षित सामाजिक परिवर्तन हेतु उद्यमिता एवं नवाचार को बढ़ावा देना और सभी नीतियों तथा कार्यक्रमों के क्रियान्वयन का सक्रिय मूल्यांकन एवं निगरानी करना आदि प्रमुख हैं।

6.3 सामाजिक नीति की अवधारणा (Concept of Social Policy):

सामाजिक नीति को ऐसे नियमों का संग्रह माना जा सकता है, जिनके द्वारा सामाजिक कल्याण की सुनिश्चितता तय करने की व्यवस्था की जाती है। सामाजिक नीतियां ऐसे नियम हैं जो सामाजिक संरचना एवं व्यवस्था की आवश्यकताओं के अनुरूप सामाजिक विकास तथा परिवर्तन के लक्ष्य को प्राप्त करने के लिए सरकार एवं समाज को प्रेरणा एवं मार्गदर्शन देने का कार्य करती हैं। अधिकांश राष्ट्र-राज्यों में सरकारों द्वारा निर्मित और समर्थित सामाजिक नीतियों को लक्ष्य एवं कार्य उन्मुख क्रिया के रूप में समझ सकते हैं। नीतियां राजनीतिक एवं प्रशासनिक व्यवस्था से प्रत्यक्ष रूप से संबंध रखती हैं इनका उद्देश्य समाज कल्याण, संगठन एवं व्यवस्था को तय करना होता है। किसी भी राजनीतिक एवं प्रशासनिक व्यवस्था के सफल संचालन के लिए, कल्याणकारी राज्य की स्थापना के लिए उत्तम और आवश्यकतानुरूप सामाजिक नीतियों का होना व्यवस्था के प्रारंभिक शर्तों में से एक है। ये नीतियाँ निर्दिष्ट और लक्षित सामाजिक परिवर्तन को प्राप्त करने में अपनी महत्वपूर्ण भूमिका निभाती हैं। दूसरे शब्दों में कहें तो सामाजिक नीतियों के द्वारा नियोजित सामाजिक परिवर्तन की प्रक्रिया को बल मिलता है, नियोजित सामाजिक परिवर्तन समाज के सतत विकास एवं समृद्धि के लिए आवश्यक है। सामाजिक नीतियों का निर्माण कार्यकारी सरकारों के द्वारा समाज के सभी आर्थिक एवं गैर आर्थिक क्षेत्रों के लिए किया जाता है, जिनका मुख्य उद्देश्य मानव के सम्पूर्ण सामाजिक कल्याण में वृद्धि करना, संसाधनों को संरक्षित एवं संवर्धित करना और इनके दुरुपयोग एवं दोहन को रोकना है

6.3.1. सामाजिक नीति का अर्थ (Meaning of Social Policy)

सामाजिक नीति दो प्रमुख शब्दों से मिलकर बना है- जिसमें प्रथम शब्द, सामाजिक अर्थात् Social है और दूसरा निति अर्थात् Policy है। जिसका तात्पर्य क्रमशः समाज संबंधी एवं किसी विशेष उद्देश्य को प्राप्त

करने के लिए सोच समझकर उठाया गया कदम अथवा की गई क्रिया है।

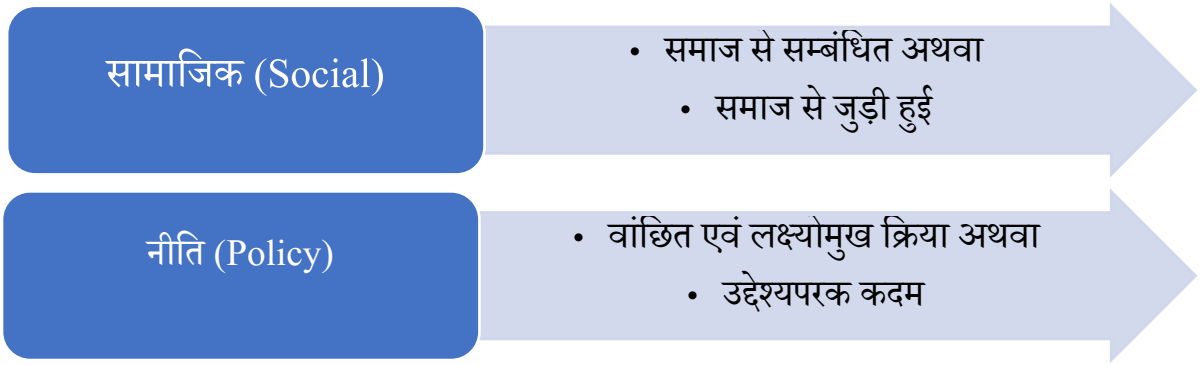

जब किसी वांछित सामाजिक लक्ष्य को ध्यान में रखकर कोई उद्देश्यपरक क्रिया की जाती है तो ऐसी क्रिया को सामाजिक नीतियों के अंतर्गत समझा जा सकता है। सामाजिक नीतियां समाज के विकास, कल्याण एवं समृद्धि को सुनिश्चित करने के लिये, सामाजिक मूल्यों एवं आदर्शों के अनुरूप निर्मित की जाती हैं। इस प्रकार सामाजिक नीतियां सामाजिक उद्देश्यों से अभिप्रेरित ऐसी क्रियाएं हैं, जो समाज के कल्याण समृद्धि एवं विकास के लिये निर्मित की जाती है, जिनका आधार सामाजिक आवश्यकताएँ, समाज के आदर्श मूल्य एवं प्रतिमान होते हैं। सामाजिक नीतियों में नियोजित सामाजिक परिवर्तन को लाने अथवा रोकने की क्षमता होती है।

बोध प्रश्न 1- सामाजिक नीतियों से आप क्या समझते हैं? संक्षेप में बताइये।

.....

.....

.....

.....

.....

6.3.2 सामाजिक नीति की परिभाषाएं (Definitions of Social Policy)-

सामाजिक नीतियों की अवधारणा समय सापेक्ष, संस्कृति सापेक्ष एवं देश काल सापेक्ष होती है। यद्यपि सभी समाज की सामाजिक नीतियों के केंद्रीय तत्वों में समाज कल्याण एवं समाज उत्थान का भाव प्रमुख होता है, तथापि सामाजिक आवश्यकताओं के कारण प्रत्येक कालखंड, देश, समाज एवं संस्कृति की सामाजिक नीतियों में आंशिक भिन्नता पाई जाती है। समय-समय पर विद्वानों ने सामाजिक नीतियों को अपने दृष्टिकोणों के अनुसार परिभाषित किया है। कुछ मुख्य परिभाषाओं को हम निम्नलिखित रूप में स्पष्ट कर सकते हैं-

- कुलकर्णी के अनुसार, "सामाजिक नीतियों को कार्य की उस पद्धति के रूप में जाना जा सकता है, जो तय सामाजिक उद्देश्यों को प्राप्त करने के लिए क्रमिक चरणों, साधनों तथा तरीकों को निर्देशित करती हैं अथवा सुझाती हैं।"

- मार्शल के अनुसार, "सामाजिक नीतियों का अर्थ सरकार की ऐसी क्रियाओं से है, जो नागरिकों को सेवाओं, आय जैसे संसाधनों तक पहुँच प्रदान करके उनके कल्याण को प्रभावित और सुनिश्चित करती है।"

- प्रोफेसर टिटमस कहते हैं, "सामाजिक नीतियां सरकारी कार्यों का ऐसा परिणाम है, जिसका उद्देश्य विशेष रूप से मानव कल्याण में वृद्धि करना है।"

- गोखले का मत है कि 'सामाजिक नीति एक ऐसा साधन है, जिसके माध्यम से आकांक्षाओं एवं प्रेरकों को इस प्रकार विकसित किया जाता है कि सभी के कल्याण में वृद्धि हो सके।'

उपरोक्त परिभाषाओं के आधार पर संक्षेप में कहा जा सकता है कि सामाजिक नीतियों का निर्माण किसी समाज की आवश्यकता एवं उसके मूल्यों, मानदंडो के अनुरूप कुछ निश्चित आर्थिक एवं गैर आर्थिक लक्ष्यों को प्राप्त करने के तथा समाज कल्याण एवं विकास की सुनिश्चितता के लिये किया जाता है। सामाजिक नीतियों का प्रमुख उद्देश्य निर्दिष्ट लक्ष्यों की प्राप्ति, समाज कल्याण की स्थापना, किसी क्षेत्र में निर्दिष्ट और लक्षित

सामाजिक परिवर्तन को बढ़ाने अथवा कम करने से संबंधित है। सामाजिक नीतियां संपूर्ण समाज के कल्याण एवं विकास के लिए प्रतिबद्ध होती है।

बोध प्रश्न 2- सामाजिक नीति को अपने शब्दों में परिभाषित कीजिये।

.....

.....

.....

.....

6.4 सामाजिक नीति की विशेषताएं (Characteristics of Social Policy):

सामाजिक नीतियों के विषय में उपलब्ध ज्ञान एवं विभिन्न विद्वानों के मतों के आधार पर इसकी प्रमुख विशेषताओं को निम्नलिखित रूप में समझा जा सकता है-

1. **सामाजिक न्याय को बढ़ावा (Pramote Social Justice)-** सामाजिक नीतियां किसी विशेष व्यक्ति, वर्ग अथवा समूह को ध्यान में रखकर निर्मित नहीं की जातीं बल्कि इनका निर्माण जनकल्याण को सुनिश्चित करने के लिए होता है। सामाजिक नीतियों के द्वारा समाज में संसाधनों और विभिन्न अवसरों का निष्पक्ष एवं समान वितरण किया जाता है, जिससे सभी व्यक्तियों के अधिकारों, कर्तव्यों एवं अवसरों को तय किया जा सके। इस प्रकार बहुआयामी जनकल्याण की सुनिश्चितता के साथ ही सामाजिक नीतियों के द्वारा सामाजिक न्याय को बढ़ावा मिलता है।

2. **सामाजिक सुरक्षा के लिए कवच (Cover for Social Security)-** सामाजिक नीतियों के द्वारा समाज में सुरक्षात्मक कवच तैयार होता है। सामाजिक नीतियों के द्वारा व्यक्ति एवं उसके परिवारों को आवश्यकता और उपलब्ध संसाधनों के अनुसार जोखिम से सुरक्षा मिलती है, वित्तीय सहायता प्राप्त होती है, लोगों में सामूहिक उत्तरदायित्व का निर्माण होता है। सामाजिक नीतियां निर्दिष्ट करती हैं कि

समाज में असुरक्षा का भाव कम हो एवं प्रत्येक वर्ग की सुरक्षा निश्चित की जा सके। इस प्रकार सामाजिक नीतियां समाज के लिये सुरक्षा कवच की तरह होती है।

3. **समाज कल्याण में सहायक (Assistant in Social Welfare)**- सामाजिक नीतियों का प्रत्यक्ष संबंध समाज कल्याण से होता है। समाज में ऐसे कई वर्ग होते हैं जो मुख्यधारा अलग रहते हैं ऐसे वर्गों के उत्थान हेतु सामाजिक नीतियां वरदान की तरह कार्य करती हैं। सामाजिक नीतियों का प्रमुख उद्देश्य सामाजिक असमानता को कम करना, समाज में लोगों की आधारभूत आवश्यकताओं की पूर्ति सुनिश्चित करना, सामाजिक न्याय आदि को बढ़ावा देकर समाज कल्याण में वृद्धि करना है। इस प्रकार के प्रयासों द्वारा सामाजिक नीतियों के माध्यम से सभी वर्गों को समाज के मुख्यधारा में लाने का प्रयत्न करते हुए समाज कल्याण में वृद्धि करने का प्रयास किया जाता है।

4. **सकारात्मक सामाजिक परिवर्तन को प्रोत्साहन (Promoting Positive Social Change)**- सामाजिक नीतियों के द्वारा समाज में सकारात्मक सामाजिक परिवर्तन को प्रोत्साहित किया जाता है। सकारात्मक सामाजिक परिवर्तन निश्चित समय में तय लक्ष्यों को प्राप्त करने के लिए कार्य करता है। सभी के लिए समान अवसरों की उपलब्धता, समावेशी विकास की प्राप्ति, सामुदायिक विकास एवं भागीदारी की सुनिश्चितता, सामाजिक सुरक्षा आदि के द्वारा सामाजिक नीतियां सकारात्मक सामाजिक परिवर्तन को प्रोत्साहित करती हैं। सकारात्मक सामाजिक परिवर्तन के परिणाम के रूप में सामाजिक आर्थिक विकास एवं समृद्धि में वृद्धि होती है।

5. **सामाजिक समरसता में वृद्धि (Increase in Social Harmony)-** सामाजिक नीतियों के द्वारा समाज के मुख्यधारा एवं वंचित सभी वर्गों के लिये आवश्यकता के अनुसार संसाधन एवं युक्तियाँ उपलब्ध कराई जाती हैं। सामाजिक नीतियों के द्वारा सभी की न्यूनतम आवश्यकताओं को पूर्ण करने पर बल दिया जाता है। इसके साथ ही सामाजिक नीतियां समानता एवं न्याय स्थापित करके सामाजिक समावेशन को बढ़ावा देती हैं। इन सभी उद्देश्यों पर आधारित सामाजिक नीतियों के द्वारा सामाजिक समरसता में वृद्धि होती है।

6. **राष्ट्र निर्माण में भूमिका (Role In Nation Building)-** सामाजिक नीति को राष्ट्रीय निर्माण की आधारशिला कहा कहा जा सकता है। सामाजिक नीतियों के द्वारा समाज के सभी वर्गों की आधारभूत आवश्यकताओं जैसे भोजन, वस्त्र, आवास, शिक्षा और स्वास्थ्य की पूर्ति की व्यवस्था की जाती है। सामाजिक नीतियों के द्वारा सामाजिक न्याय और समानता में वृद्धि होती है, आर्थिक आत्मनिर्भरता, अनुशासन, सुशासन नागरिकों के अधिकारों एवं कर्तव्यों की व्यवस्था आदि जैसे से लक्ष्यों की प्राप्ति सामाजिक नीति के द्वारा संभव हो पाती है। यह सभी संयुक्त रूप से राष्ट्र निर्माण में अपनी भूमिका निभाते हैं।

7. **आर्थिक समृद्धि में सहायक (Helpful in Economic Prosperity)-** सामाजिक नीतियों के द्वारा, शिक्षा, स्वास्थ्य और सामाजिक समानता में वृद्धि करके उन्नत मानव पूंजी का निर्माण होता है। उन्नत मानव पूंजी के निर्माण के साथ ही उत्पादकता और सामाजिक स्थिरता में वृद्धि होती है। समाज में उत्पादकता और सामाजिक स्थिरता, आर्थिक समृद्धि के लिए आधारशिला का कार्य करते हैं। इस प्रकार सामाजिक नीतियां आर्थिक समृद्धि में अपनी महत्वपूर्ण भूमिका निभाती हैं।

8. **निर्धनता उन्मूलन में सहायक (Helpful in Poverty Alleviation)-** सामाजिक नीतियों के द्वारा शिक्षा, स्वास्थ्य और रोजगार के साथ ही समाज के सभी वर्गों के लिये सामाजिक सुरक्षा जैसे पेंशन, सुरक्षा बीमा एवं आवास आदि जैसी व्यवस्थाएँ की जाती हैं। सामाजिक नीतियों के द्वारा रोजगार के नवीन अवसरों का सृजन, लघु उद्योगों को बढ़ावा, सामाजिक समावेशन आदि के माध्यम से सामाजिक नीतियों के द्वारा समाज में निर्धनता का उन्मूलन सुनिश्चित हो पाता है। इस प्रकार सामाजिक नीतियां निर्धनता उन्मूलन में सहायक हैं।

9. **सामाजिक गतिशीलता में वृद्धि (Increased Social Mobility)-** सामाजिक नीतियां सामाजिक गतिशीलता में वृद्धि करती हैं। शिक्षा के प्रत्येक स्तर तक लोगों की समान पहुँच सुनिश्चित करना, स्वास्थ्य देखभाल एवं मानव पूंजी का निर्माण करना, आर्थिक अवसरों का सृजन, रोजगार एवं कौशल के विकास के द्वारा सामाजिक नीतियां सामाजिक गतिशीलता में वृद्धि करती हैं। नई

प्रतिभाओं का विकास, नवाचार को बढ़ावा आदि जैसे नीतिगत उपाय सामाजिक गतिशीलता को बढ़ाते हैं।

10. **बहु-विषयक प्रकृति (Multidisciplinary Nature)-** सामाजिक नीतियों की प्रकृति बहु-विषयक होती है। समाज के सभी विशिष्ट क्षेत्रों में सामाजिक नीतियों के निर्माण की आवश्यकता पड़ती है। समय-समय पर कार्यकारी सरकारों के द्वारा सभी सामाजिक क्षेत्रों में आने वाले विषयों पर सामाजिक नीतियों का निर्माण किया जाता है। इसीलिए कहा जा सकता है कि समाजिक नीतियों की प्रकृति बहु-विषयक होती हैं।

11. **निदानात्मक एवं उपचारात्मक प्रकृति (Diagnostic and Therapeutic Nature)-** सामाजिक नीतियों की प्रकृति निदानात्मक एवं उपचारात्मक दोनों होती है। नीतियों की निदानात्मक प्रकृति के द्वारा समस्या की पहचान और मूल्यांकन में सहायता प्राप्त होती है और उपचारात्मक प्रकृति के द्वारा समस्या का समाधान एवं सामाजिक सुधार जैसे कार्य संपन्न किए जाते हैं। इस प्रकार सामाजिक नीतियों की प्रकृति निदानात्मक एवं उपचारात्मक विशेषता युक्त होती है।

12. **कानूनी एवं विधायी समर्थन (Legal and Legislative Support):-** सामाजिक नीतियों से संबंधित योजनाओं एवं लक्ष्यों को, समाज कल्याण के विभिन्न क्षेत्रों जैसे स्वास्थ्य, शिक्षा, समानता, निर्धनता उन्मूलन आदि से जुड़ी योजनाओं को सरकारी एवं संवैधानिक तंत्र द्वारा कानूनी रूप प्रदान किया जाता है। सामाजिक नीतियां विधायिका एवं न्यायपालिका द्वारा निर्मित एवं क्रियान्वित होती है। इस प्रकार सामाजिक नीतियों को कानूनी एवं विधायी समर्थन प्राप्त होता है, जिससे यह नीतियां समाज में मजबूत बाध्यकारी ढांचा प्राप्त करके जनकल्याण को सुनिश्चित करती हैं।

बोध प्रश्न 3- सामाजिक नीतियों की किन्ही दो विशेषताओं के विषय में संक्षेप में लिखिए।

.....

.....

.....

.....

6.5 सारांश (Conclusion):

संक्षेप में कहा जा सकता है कि सामाजिक नीतियां समाज के सभी वर्गों की आवश्यक आवश्यकताओं में से एक हैं। प्राचीन समय में सामाजिक एवं राजनीतिक व्यवस्था भले ही किसी प्रकार की रही हो, किंतु प्रत्येक कालखंड एवं समय में जन-सामान्य के लिए सामाजिक नीतियों की आवश्यकता पड़ती रही है और इसका निर्माण भी सामाजिक एवं राजनीतिक नीति नियंताओं के द्वारा किया जाता रहा है। वर्तमान भारत में भी समाज के विभिन्न वर्गों के लिए आवश्यकता के अनुसार सामाजिक नीतियों का निर्माण सरकारों द्वारा किया जाता रहा है। उपरोक्त विवेचन में सामाजिक नीतियों के संबंध में विभिन्न पक्षों का विवेचन किया गया है। सामाजिक नीतियां प्रत्येक समाज, देशकाल एवं परिस्थिति की आवश्यकताएँ हैं। सामाजिक नीतियों के द्वारा सामाजिक एकता, अखंडता एवं व्यवस्था को बल मिलता है। इसके साथ ही सामाजिक नीतियां सामाजिक असमानता एवं विघटन को रोकने में सहायक हैं। इस इकाई में शिक्षार्थियों एवं पाठकों को सामाजिक नीतियों के विषय में अवगत कराया गया है। इस इकाई में भारत किस संबंध में सामाजिक नीतियों का परिचय, सामाजिक नीतियों की अवधारणा, सामाजिक नीतियों का अर्थ एवं परिभाषाएं एवं सामाजिक नीतियां की प्रमुख विशेषताओं का विवरण मिलता है।

6.6 शब्दावली (Glossary):

- **सामाजिक नीति (Social Policy)-** सामाजिक नीति का तात्पर्य समाज संबंधी ऐसे नियमों से है, जिनका निर्माण कार्यकारी सरकारों के द्वारा सामाजिक आदर्शों, आवश्यकताओं एवं उद्देश्यों को ध्यान में रखते हुए किया जाता है। सामाजिक नीतियां जनकल्याण को सुनिश्चित करके, सामाजिक असमानता को कम करके समाज में समृद्धि, विकास एवं संगठन को बढ़ावा देती हैं।

- **समाज कल्याण (Social Welfare)-** समाज कल्याण समाज एवं सरकार के संयुक्त उपक्रम में किया जाने वाला ऐसा व्यवस्थित प्रयास है, जिससे सभी सदस्यों विशेषकर कमजोर वर्गों जैसे निर्धन, विकलांग, बेरोजगार, अशक्त सामाजिक समूह वर्ग जैसे महिलाएं, बच्चे एवं वृद्धजन को बेहतर जीवन प्रदान करने के लिए आवश्यक सुविधाएं और संसाधन मुहैया कराए जाते हैं।

- **सामाजिक न्याय (Social Justice)-** सामाजिक न्याय एक ऐसी व्यवस्था है जहाँ समाज के सभी नागरिकों की पहुँच देश के अधिकारों, अवसरों एवं संसाधनों तक समान रूप से बनाई जा सके। सामाजिक न्याय का मुख्य उद्देश्य समाज में व्याप्त सामाजिक एवं आर्थिक असमानताओं को समाप्त करके सभी को सम्मानजनक जीवन शैली प्रदान करना है।

- **सकारात्मक सामाजिक परिवर्तन (Positive Social Change)-** सकारात्मक सामाजिक परिवर्तन सरकार एवं समाज के संयुक्त उपक्रमों द्वारा संचालित ऐसी उद्देश्यपूर्ण प्रक्रिया है, जिसमें सामाजिक परिवर्तन की गति को सकारात्मक और लक्ष्य केंद्रित दिशा की तरफ ले जाने का प्रयत्न किया जाता है। सकारात्मक सामाजिक परिवर्तन के परिणाम व्यापक एवं बेहतर होते हैं।

- **सामाजिक गतिशीलता (Social Mobility)-** सामाजिक गतिशीलता का सामान्य अर्थ निश्चित समय अंतराल में निश्चित समय अंतराल के लिये व्यक्तियों की अथवा समूहों की सामाजिक, शैक्षिक अथवा आर्थिक या जीवन शैली के आधार पर एक सामाजिक स्थिति से दूसरी सामाजिक स्थिति को प्राप्त करना है। सामाजिक गतिशीलता की प्रक्रिया ऊर्ध्वगामी, अधोगामी एवं क्षैतिज प्रकार की हो सकती है।

- **निदान (Diagnosis)-** सामाजिक अर्थ में निदान किसी सामाजिक समस्या अथवा परिस्थिति के मौलिक कारणों का पता लगाने की प्रक्रिया के रूप में जाना जाता है। निदान के द्वारा समस्या के लक्षणों एवं उस के इतिहास की जानकारी प्राप्त होती है।

- **उपचार (Treatment or Therapy)-** सामाजिक अर्थ में उपचार का तात्पर्य किसी सामाजिक समस्या का समाधान करने से है। गरीबी, नशा, हिंसा, अशिक्षा, सामाजिक असमानता आदि जैसी समस्याओं को सामाजिक सहयोग एवं समुदाय आधारित उपचार कार्यक्रमों के द्वारा समाप्त करने का प्रयास किया जाता है।

6.7 बोध प्रश्नों हेतु उत्तर-संकेत (Answer Hints for Comprehension Questions):

- बोध प्रश्न 1- देखें – 6.3.1. को।
- बोध प्रश्न 2- देखें – 6.2.1. को।
- बोध प्रश्न 3- देखें – 6.4.1 से 6.4.12. को।

6.8 निबंधात्मक अभ्यास प्रश्न (Essay Practice Questions):

1. सामाजिक नीतियों से आप क्या समझते हैं? भारत में सामाजिक नीतियां विषय पर निबंध लिखिए।
2. सामाजिक नीतियों को परिभाषित कीजिये सामाजिक , नीतियों की प्रमुख विशेषताएं बताइये।
3. सामाजिक नीतियों का अर्थ बताते हुए सामाजिक नीतियों की समाज कल्याण में भूमिका का विश्लेषण कीजिये।

6.9 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची (References):

1. सामाजिक नीति नियोजन एवं प्रशासन, प्रकाशक दूरवर्ती अध्ययन एवं सतत शिक्षा केंद्र, महात्मा गाँधी चित्रकूट ग्रामोदय विश्वविद्यालय, चित्रकूट मध्यप्रदेश, ई-संस्करण, वर्ष-2023-24,
2. करुणारत्ने, रसिक (2021), इम्पोर्टेंस ऑफ सोशल पॉलिसी इन सोशल वेल्फेयर,

3. शर्मा, डॉ. पी.के. (2018), रामचरित मानस के संदर्भ में सामाजिक नीति, इंटरनेशनल जर्नल ऑफ ह्यूमेनिटीज एंड सोशल साइंस रिसर्च, आईएसएसएन 2455-2070, वॉल्यूम फ़ोर, ईशू थ्री, वर्ष - मई (2018), पृष्ठ संख्या- 17-18,

4. समाज कल्याण: संकल्पना दृष्टिकोण और नीतियां- प्रकाशक, इंदिरा गाँधी राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय, नई दिल्ली,

5. चंद्रा, प्रोफेसर रमेश (2004)- सोशल डेवलपमेंट इन इंडिया, ईशा बुक्स पब्लिशर, वर्ष 2004,

6. गवर्नमेंट ऑफ इंडिया (2018)- इंडिया ईयर बुक, न्यू दिल्ली इंडिया पब्लिकेशन्स डिविज़न,

7. सिंह, श्वेता (2013)- सोशल वर्क एंड सोशल डेवलपमेंट, रावत पब्लिकेशन जयपुर, वर्ष 2013।

6.10 सहायक उपयोगी पाठ्य-सामग्री (Helpful Reading Materials):

- पाठक, शंकर (2013)- सोशल पॉलिसी सोशल वेल्फेयर एंड सोशल डेवलपमेंट, निरूता पब्लिकेशन, वर्ष 2013,
- मिश्रा, रमेश (1981)- सोसाइटी एंड सोशल पॉलिसी थ्योरीज एंड प्रैक्टिस ऑफ वेलफेर, सेकंड एडिशन, रेड ग्लोब प्रेस लंदन, वर्ष 1981,
- क्लिफ, एलकॉक गे डाली, एडविन, ग्रिग्स (2008)- इंट्रोड्यूसिंग सोशल पॉलिसी, सेकंड एडिशन, रूटलेज पब्लिकेशन, लंदन एंड न्यूयॉर्क, वर्ष 2008,
- आर्थर, लिविंगस्टोन (1969), सोशल पॉलिसी इन डेवलपिंग कन्ट्रीज, रूटलेज पब्लिकेशन, लंदन, न्यूयॉर्क 2011 (ओरिजिनल पब्लिश्ड),
- नील, गिल्बर्ट पॉल, टेरेल (2005) डाइमेंशन्स ऑफ सोशल वेलफेयर पॉलिसी, पब्लिशर पियरसन एलेन बेकन, वर्ष 2005।

इकाई -7 सामाजिक नीति का निर्माण एवं सामाजिक नीतियों का क्रियान्वयन, सफलता के परिणाम

Formulation of Social Policy and Implementation of Social Policies, Results of Success

इकाई की रूपरेखा

7.1 प्रस्तावना

7.2 परिचय उद्देश्य

7.3 सामाजिक नीति का निर्माण

7.3 सामाजिक नीति निर्माण का अर्थ

7.3.1. सामाजिक नीति निर्माण प्रक्रिया की विशेषताएं :

7.3.2.सामाजिक नीति निर्माण के प्रमुख चरण

7.3.3. सामाजिक नीति के निर्माण को प्रभावित करने वाले कारक

7.4. सामाजिक नीतियों का क्रियान्वयन

7.4.1 सामाजिक नीति क्रियान्वयन के आवश्यक घटक:

7.5. सामाजिक नीति प्रक्रिया की सफलता के परिणाम

7.6 सारांश

7.7 शब्दावली

7.8 दीर्घ उत्तरीय प्रश्न

7.9 लघु उत्तरीय प्रश्न

7.10 संदर्भ सूची

7.1 उद्देश्य

सामाजिक नीति आधुनिक समाज में सामाजिक समस्याओं के समाधान और मानव कल्याण को सुनिश्चित करने का एक महत्वपूर्ण साधन है। किसी भी समाज में गरीबी, बेरोज़गारी, अशिक्षा, स्वास्थ्य असमानताएँ, लैंगिक भेदभाव, सामाजिक बहिष्कार और असुरक्षा जैसी समस्याएँ विद्यमान रहती हैं, जिनका समाधान केवल

व्यक्तिगत प्रयासों से संभव नहीं होता। ऐसे में राज्य और सार्वजनिक संस्थानों द्वारा बनाई गई सामाजिक नीतियाँ समाज के कमजोर और हाशिए पर पड़े वर्गों के लिए सुरक्षा, अवसर और सम्मानजनक जीवन प्रदान करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती हैं। सामाजिक नीति केवल योजनाओं और कार्यक्रमों का समूह नहीं है, बल्कि यह समाज की प्राथमिकताओं, मूल्यों, सत्ता संबंधों और विकास की दिशा को प्रतिबिंबित करती है।

सामाजिक नीति की प्रक्रिया एक व्यवस्थित और गतिशील प्रक्रिया है, जिसमें नीति निर्माण, क्रियान्वयन, निगरानी और मूल्यांकन जैसे चरण शामिल होते हैं। यह प्रक्रिया सामाजिक समस्याओं की पहचान से शुरू होकर ठोस सरकारी हस्तक्षेपों और उनके परिणामों के आकलन तक विस्तृत होती है। समाजशास्त्रीय दृष्टिकोण से, सामाजिक नीति निर्माण और क्रियान्वयन राजनीतिक, आर्थिक, सामाजिक, सांस्कृतिक और संस्थागत कारकों से प्रभावित होता है।भारतीय संदर्भ में, मनरेगा, राष्ट्रीय स्वास्थ्य मिशन, प्रधानमंत्री आवास योजना, आईसीडीएस और खाद्य सुरक्षा अधिनियम जैसी नीतियाँ यह दर्शाती हैं कि सामाजिक नीति कैसे सामाजिक न्याय, समानता और समावेशी विकास को बढ़ावा देती है। अतः सामाजिक नीति का अध्ययन समाज के संरचनात्मक बदलावों और कल्याणकारी राज्य की भूमिका को समझने के लिए अत्यंत आवश्यक है।

7.2 प्रस्तावना

इस इकाई का अध्ययन करने के निम्न उद्देश्य हैं

1. सामाजिक नीति निर्माण की प्रक्रिया को समझना।
2. सामाजिक नीति निर्माण की प्रक्रिया के प्रमुख चरण को जानना।
3. सामाजिक नीति निर्माण की प्रक्रिया को प्रभावित करने वाले कारक को समझना।
4. सामाजिक नीतियों का क्रियान्वयन की प्रक्रिया को जानना।
5. सामाजिक नीति निर्माण प्रक्रिया की सफलता के परिणाम को जानना।

7.3 सामाजिक नीति का निर्माण:

सामाजिक नीति से तात्पर्य सरकारों और सार्वजनिक संस्थानों द्वारा सामाजिक समस्याओं के समाधान और समाज के समग्र कल्याण को बढ़ाने के लिए विकसित किए गए दिशा-निर्देशों, सिद्धांतों और कार्यों के समूह से है। इसमें शिक्षा, स्वास्थ्य सेवा, आवास, रोजगार, गरीबी उन्मूलन और सामाजिक सुरक्षा जैसे प्रमुख क्षेत्र शामिल हैं, जो सभी लोगों के जीवन की गुणवत्ता को प्रत्यक्ष रूप से प्रभावित करते हैं। सामाजिक नीतियों का उद्देश्य असमानता को कम करना, कमजोर समूहों की रक्षा करना और बुनियादी सेवाओं और अवसरों तक समान पहुंच सुनिश्चित करके सामाजिक न्याय को बढ़ावा देना है।

सामाजिक नीति का निर्माण एक सरल प्रशासनिक कार्य नहीं बल्कि एक जटिल और गतिशील प्रक्रिया है। यह राजनीतिक प्राथमिकताओं, आर्थिक परिस्थितियों, सांस्कृतिक मानदंडों और सामाजिक संरचनाओं सहित कई कारकों से प्रभावित होती है। सरकारों को सीमित संसाधनों और बढ़ती सामाजिक मांगों के बीच संतुलन

बनाए रखना होता है, साथ ही जनमत, दबाव समूहों और संस्थागत बाधाओं का भी ध्यान रखना होता है। परिणामस्वरूप, नीति निर्माण में अक्सर बातचीत, समझौता और रणनीतिक निर्णय लेना शामिल होता है।

समाजशास्त्रीय दृष्टिकोण से, सामाजिक नीति निर्माण समाज में व्याप्त गहरे सत्ता संबंधों और सामाजिक असमानताओं को प्रतिबिंबित करता है। नीतियां अक्सर यह दर्शाती हैं कि किसके हितों को प्राथमिकता दी जाती है और किनकी आवाज़ों को हाशिए पर धकेल दिया जाता है। वर्ग, जाति, लिंग, जातीयता और क्षेत्र जैसे कारक सामाजिक समस्याओं की पहचान और प्रस्तावित समाधानों दोनों को प्रभावित करते हैं। इसलिए, सामाजिक नीति मूल्य-तटस्थ नहीं होती; यह सामूहिक मूल्यों, विचारधाराओं और सामाजिक लक्ष्यों को समाहित करती है। इन समाजशास्त्रीय आयामों को समझने से यह समझने में मदद मिलती है कि कुछ नीतियां क्यों उभरती हैं, उन्हें कैसे तैयार किया जाता है और अंततः उनसे किसे लाभ होता है

7.3.1 सामाजिक नीति निर्माण का अर्थ

सामाजिक नीति निर्माण एक व्यवस्थित और गतिशील प्रक्रिया है जिसके माध्यम से सरकारें और सार्वजनिक संस्थान सामाजिक समस्याओं की पहचान करते हैं, नीति एजेंडा तय करते हैं, नीतिगत उपाय डिज़ाइन करते हैं, राजनीतिक निर्णय लेते हैं, और सामाजिक कल्याण, सामाजिक न्याय और समान विकास को बढ़ावा देने के उद्देश्य से हस्तक्षेपों को लागू और मूल्यांकन करते हैं।

समाजशास्त्रीय दृष्टिकोण से, सामाजिक नीति निर्माण केवल एक प्रशासनिक या तकनीकी गतिविधि नहीं है; बल्कि, यह एक सामाजिक रूप से अंतर्निहित प्रक्रिया है जो शक्ति संबंधों, राजनीतिक विचारधाराओं, संस्थागत संरचनाओं, सांस्कृतिक मूल्यों और सामाजिक असमानताओं से आकार लेती है। यह दर्शाता है कि समाज ज़रूरतों को कैसे प्राथमिकता देते हैं, संसाधनों को कैसे वितरित करते हैं, और विभिन्न सामाजिक समूहों के बीच प्रतिस्पर्धी हितों पर कैसे बातचीत करते हैं।

संक्षेप में, सामाजिक नीति निर्माण में सामाजिक ज़रूरतों और सामूहिक मूल्यों को ठोस सरकारी कार्यों में बदलना शामिल है, साथ ही लगातार बदलते सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक स्थितियों पर प्रतिक्रिया देना भी शामिल है।

7.3.2 सामाजिक नीति निर्माण प्रक्रिया की विशेषताएं :

सामाजिक नीति निर्माण एक व्यवस्थित और बहुआयामी प्रक्रिया है जिसके माध्यम से समाज सामाजिक समस्याओं का समाधान करने और सामूहिक कल्याण को बढ़ावा देने का प्रयास करता है। समाजशास्त्रीय दृष्टिकोण से, इसमें कई विशिष्ट विशेषताएं हैं जो सामाजिक संरचनाओं, संस्थाओं, मूल्यों और शक्ति संबंधों की जटिल परस्पर क्रिया को दर्शाती हैं। सामाजिक नीति निर्माण की प्रमुख विशेषताएं नीचे वर्णित हैं:

1. लक्ष्य-उन्मुख और कल्याण-केंद्रित(Goal-Oriented and Welfare-Centric)

सोशल पॉलिसी बनाने का मुख्य उद्देश्य सामाजिक कल्याण को बढ़ावा देना और लोगों के जीवन की गुणवत्ता को बेहतर बनाना है।योजना विशेष सामाजिक उद्देश्य जैसे गरीबी कम करना, रोज़गार पैदा करना, स्वास्थ्य

सुधार, लैंगिक असमानता और सामाजिक सुरक्षा को ध्यान में रखकर बनाई जाती हैं। आखिरी उद्देश्य लाभ कमाना नहीं, बल्कि मानव विकास और सामाजिक कल्याण है।

उदाहरण:

- MGNREGA का मकसद गांव के परिवारों को गारंटीड रोज़गार देना, रोजी-रोटी की सिक्योरिटी और गरीबी कम करना पक्का करना है।
- नेशनल हेल्थ मिशन (NHM) खास तौर पर गांव और कमजोर आबादी के लिए हेल्थकेयर एक्सेस को बेहतर बनाने पर फोकस करता है।

2. मूल्य-आधारित और मानक(Value-Based and Normative)

सामाजिक नीति सामाजिक मूल्य , नैतिक सिद्धांतों और बराबरी, न्याय, आज़ादी और सम्मान जैसे संवैधानिक आदर्शों में गहराई से जुड़ी होती हैं। सामाजिक नीति बनाना समाज के नैतिक दृष्टिकोण और राज्य के सोच वाले दृष्टिकोण को दिखाता है। समाज किस चीज़ को "पसंद के मुताबिक" या "मंज़ूर नहीं" मानता है, यह नीति की प्राथमिकताओं पर बहुत ज़्यादा असर डालता है। **उदाहरण:**

- SCs, STs और OBCs के लिए आरक्षण नीति सोशल न्याय और बराबरी के लिए संवैधानिक प्रतिबद्धता को दिखाती हैं।
- शिक्षा का अधिकार अधिनियम (2009) इस बात को दिखाता है कि शिक्षा एक बुनियादी अधिकार है, कोई खास अधिकार नहीं।

3. सामाजिक संरचनाओं और सत्ता संबंधों से प्रभावित(Influenced by Social Structures and Power Relations)

सामाजिक नीति-निर्माण मौजूदा सामाजिक संरचनाओं जैसे वर्ग, जाति, लिंग, जातीयता और क्षेत्र द्वारा निर्धारित होता है। सत्ता संबंध यह तय करते हैं कि नीतिगत निर्णयों में किसके हितों को प्राथमिकता दी जाएगी। प्रभावशाली समूहों का अक्सर अधिक प्रभाव होता है, जबकि हाशिए पर स्थित समूहों के लिए संगठित और एकजुट हुए बिना अपनी बात रखना मुश्किल हो सकता है।

उदाहरण:

- बेटी बचाओ बेटी पढ़ाओ जैसी महिला-केंद्रित नीतियां लगातार लैंगिक असमानता के कारण सामने आयी हैं ।
- आदिवासी और आकांक्षी जिलों के लिए विशेष कल्याणकारी योजनाएं क्षेत्रीय और जातीय भेदभाव को दूर करती हैं।

4. गतिशील और सतत प्रक्रिया (Dynamic and Continuous Process)

सामाजिक नीति निर्माण कोई एक बार होने वाली घटना नहीं है, बल्कि एक सतत और विकसित होने वाली प्रक्रिया है। सामाजिक परिस्थितियों, आर्थिक वास्तविकताओं और राजनीतिक प्राथमिकताओं में बदलाव के साथ-साथ नीतियों की समीक्षा, संशोधन, विस्तार या वापसी भी की जाती है। क्रियान्वयन और मूल्यांकन से प्राप्त प्रतिक्रिया नीति को बेहतर बनाने में सहायक होती है।

उदाहरण:

- MGNREGA में कई बदलाव हुए हैं, जिसमें वेतन में बदलाव, डिजिटल मॉनिटरिंग और अनुमत कामों को बढ़ाना शामिल है।
- **कुपोषण को बेहतर ढंग से दूर करने के लिए ICDS को पोषण अभियान में फिर से बनाया गया है।**

5. साक्ष्य-आधारित और अनुसंधान-उन्मुख (Evidence-Based and Research-Oriented)

प्रभावी सामाजिक नीति निर्माण अनुभवजन्य आंकड़ों, समाजशास्त्रीय अनुसंधान और व्यवस्थित विश्लेषण पर निर्भर करता है। सर्वेक्षण, जनगणना के आंकड़े, प्रभाव आकलन और क्षेत्र अध्ययन सामाजिक समस्याओं की पहचान करने और नीतियों की प्रभावशीलता का मूल्यांकन करने में सहायक होते हैं। हालांकि, अनुसंधान को अक्सर वैचारिक दृष्टिकोण से देखा जाता है।

उदाहरण:

राष्ट्रीय परिवार स्वास्थ्य सर्वेक्षण (NFSH) के आंकड़े मातृ एवं शिशु स्वास्थ्य नीतियों को दिशा प्रदान करते हैं।

सामाजिक-आर्थिक एवं जाति जनगणना (SECC) के आंकड़े कल्याणकारी योजनाओं के लाभार्थियों को लक्षित करने में मार्गदर्शन करते हैं।

6. राष्ट्रीय परिवार स्वास्थ्य सर्वेक्षण (National Family Health Survey) के आंकड़े मातृ एवं शिशु स्वास्थ्य नीतियों को निर्धारित करने में सहायक होते हैं।

उदाहरण:

- सामाजिक-आर्थिक एवं जाति जनगणना (Socio-Economic and Caste Census) के आंकड़े कल्याणकारी योजनाओं के लाभार्थियों को लक्षित करने में मार्गदर्शन प्रदान करते हैं।

7. सहभागी और बहु-हितधारक उन्मुख(Participatory and Multi-Stakeholder Oriented)

सामाजिक नीति निर्माण में कई हितधारक शामिल होते हैं, जिनमें सरकारी एजेंसियां, नीति निर्माता, नौकरशाह, गैर सरकारी संगठन, विशेषज्ञ, दबाव समूह, अंतरराष्ट्रीय संगठन और स्थानीय समुदाय शामिल हैं। सहभागितापूर्ण दृष्टिकोण का उद्देश्य लाभार्थियों और नागरिक समाज को शामिल करना है, हालांकि भागीदारी का वास्तविक स्तर भिन्न हो सकता है।

उदाहरण:

- MGNREGA के तहत सोशल ऑडिट में गांव के लोगों को लागू करने की निगरानी में शामिल किया जाता है।
- जल जीवन मिशन के अंतर्गत ग्राम जल एवं स्वच्छता समितियाँ (Village Water and Sanitation Committees) सामुदायिक भागीदारी को बढ़ावा देती हैं।

8. प्रकृति में राजनीतिक और वैचारिक(Political and Ideological in Nature)

सामाजिक नीति बनाना स्वाभाविक रूप से राजनीतिक होता है। यह सत्ताधारी सरकारों की विचारधारा, पार्टी की राजनीति और चुनावी विचारों को दिखाता है। कल्याणकारी, नवउदारवादी, समाजवादी या रूढ़िवादी विचारधाराएँ सभी सामाजिक नीति के स्वरूप, दायरे और दिशा को प्रभावित करती हैं।

उदाहरण:

- मनरेगा (MGNREGA) और खाद्य सुरक्षा अधिनियम जैसे अधिकार-आधारित कानून कल्याणकारी विचारधारा को दर्शाते हैं।
- प्रत्यक्ष लाभ हस्तांतरण (DBT) पर जोर देना एक ऐसी शासन पद्धति को दर्शाता है जो दक्षता और कम लीकेज पर केंद्रित है।

9. संस्थागत और नौकरशाही ढाँचा(Institutional and Bureaucratic Framework)

सामाजिक नीतियाँ विधायिका, मंत्रालयों और नौकरशाही जैसे संस्थागत ढाँचों के भीतर बनाई और लागू की जाती हैं। नियम, प्रक्रियाएँ और प्रशासनिक पदानुक्रम नीति के डिज़ाइन और क्रियान्वयन को आकार देते हैं। नौकरशाही की कठोरता कभी-कभी नवाचार और लचीलेपन में बाधा डाल सकती है।

उदाहरण:

- महिला एवं बाल विकास मंत्रालय जैसे मंत्रालय ICDS को लागू करते हैं।
- नौकरशाही प्रक्रियाएँ कभी-कभी कल्याणकारी योजनाओं में देरी करती हैं, जैसे पेंशन वितरण या MGNREGA के तहत वेतन भुगतान।

10. अधिकार-आधारित और नियामक (Rights-Based and Regulatory)

आधुनिक सामाजिक नीति निर्माण तेजी से अधिकार-आधारित दृष्टिकोण अपना रहा है, जिसमें कल्याण को दान के बजाय नागरिक के अधिकार के रूप में माना जाता है। नीतियाँ अधिकारों, कर्तव्यों और मानकों को परिभाषित करके सामाजिक व्यवहार और संस्थानों को भी विनियमित करती ।

उदाहरण:

- MGNREGA रोजगार को कानूनी अधिकार के रूप में गारंटी देता है।
- खाद्य सुरक्षा अधिनियम (NFSA, 2013) खाद्य सुरक्षा को एक वैधानिक अधिकार के रूप में सुनिश्चित करता है।

11. संदर्भ-विशिष्ट और सांस्कृतिक रूप से अंतर्निहित(Context-Specific and Culturally Embedded)

सामाजिक नीति निर्माण सांस्कृतिक मानदंडों, ऐतिहासिक अनुभवों और क्षेत्रीय संदर्भों से आकार लेता है। जो नीतियाँ एक समाज में काम करती हैं, वे दूसरे समाज में तब तक प्रभावी नहीं हो सकतीं जब तक उन्हें स्थानीय सामाजिक वास्तविकताओं, परंपराओं और जरूरतों के अनुसार अनुकूलित न किया जाए।

उदाहरण:

- उत्तराखंड में वन पंचायतें समुदाय-आधारित वन शासन को दर्शाती हैं।
- मध्य भारत में जनजातीय कल्याण नीतियाँ PMAY के तहत शहरी आवास नीतियों से अलग हैं।

12. संघर्ष और बातचीत की संभावना(Prone to Conflict and Negotiation)

चूंकि सामाजिक नीतियों में संसाधनों और शक्ति का आवंटन शामिल होता है, इसलिए नीति निर्माण अक्सर हित समूहों के बीच संघर्ष पैदा करता है। बातचीत, समझौता और आम सहमति बनाना इस प्रक्रिया की आवश्यक विशेषताएँ हैं।

उदाहरण:

कृषि कानूनों, श्रम संहिताओं और भूमि अधिग्रहण नीतियों पर बहस किसानों, श्रमिकों और कॉर्पोरेट हितों के बीच संघर्ष को दर्शाती है।

7.3.3. सामाजिक नीति निर्माण के प्रमुख चरण

सामाजिक नीति बनाना एक व्यवस्थित, गतिशील और बहुआयामी प्रक्रिया है जिसके माध्यम से सरकारें और सार्वजनिक संस्थान गरीबी, बेरोजगारी, स्वास्थ्य सेवा, शिक्षा, आवास की कमी, लैंगिक असमानता, सामाजिक बहिष्कार और सामाजिक सुरक्षा जैसी गंभीर सामाजिक समस्याओं को हल करने के लिए रणनीतियाँ बनाते हैं। इन नीतियों का उद्देश्य मानव विकास के लिए आवश्यक सेवाओं, संसाधनों और अवसरों तक पहुँच सुनिश्चित करके व्यक्तियों और समुदायों के जीवन की गुणवत्ता में सुधार करना है।

सामाजिक नीतियाँ असमानताओं को कम करके और समाज के कमजोर और हाशिए पर पड़े वर्गों की रक्षा करके सामाजिक न्याय, समानता और समावेशी विकास को बढ़ावा देने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती हैं। आधुनिक कल्याणकारी राज्यों में, सामाजिक नीति को शासन का एक महत्वपूर्ण साधन माना जाता है जो आर्थिक विकास को सामाजिक कल्याण के साथ संतुलित करता है।

सामाजिक नीति का निर्माण कोई एक बार का या अलग-थलग काम नहीं है; बल्कि, यह एक निरंतर और चक्रीय प्रक्रिया है। इसमें सामाजिक समस्याओं की पहचान करना, उनके कारणों और प्रभावों का विश्लेषण करना, हितधारकों को शामिल करना, सोच-समझकर निर्णय लेना, नीतियों को प्रभावी ढंग से लागू करना और परिणामों का मूल्यांकन करना शामिल है। प्रत्येक चरण यह सुनिश्चित करने में महत्वपूर्ण योगदान देता है कि नीतियाँ यथार्थवादी, समावेशी, उत्तरदायी और टिकाऊ हों। यह निबंध सामाजिक नीति निर्माण में शामिल प्रमुख चरणों की जाँच करता है और प्रभावी और सफल नीति परिणामों को प्राप्त करने में उनके महत्व पर प्रकाश डालता है।

1. **सामाजिक समस्या की पहचान**

समस्या की पहचान सामाजिक नीति निर्माण में पहला और सबसे मौलिक कदम है। इसमें एक सामाजिक मुद्दे को पहचानना, परिभाषित करना और प्राथमिकता देना शामिल है जिसके लिए सार्वजनिक हस्तक्षेप की

आवश्यकता है। इस स्तर पर, नीति निर्माता समस्या की प्रकृति, परिमाण और गंभीरता के साथ-साथ इससे प्रभावित होने वाले जनसंख्या समूहों को समझने की कोशिश करते हैं।

सामाजिक समस्याएँ अकेले उत्पन्न नहीं होतीं; वे सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक और सांस्कृतिक कारकों से आकार लेती हैं। इसलिए, समस्या की पहचान के लिए मुद्दे के मूल कारणों और परिणामों दोनों की व्यापक समझ की आवश्यकता होती है। उदाहरण के लिए, गरीबी बेरोजगारी, शिक्षा की कमी, सामाजिक भेदभाव या क्षेत्रीय असमानताओं से जुड़ी हो सकती है।

समस्याओं की पहचान विभिन्न स्रोतों जैसे जनगणना डेटा, राष्ट्रीय सर्वेक्षण, अकादमिक अनुसंधान, सार्वजनिक शिकायतों, मीडिया रिपोर्टों, नागरिक समाज संगठनों, सामाजिक आंदोलनों और जमीनी स्तर के सक्रियता के माध्यम से की जाती है। बढ़ती बेरोजगारी दर, बढ़ते गरीबी स्तर, कुपोषण, निरक्षरता या खराब स्वास्थ्य परिणाम जैसे संकेतक अक्सर नीतिगत हस्तक्षेप की आवश्यकता का संकेत देते हैं।

सटीक और स्पष्ट समस्या की पहचान आवश्यक है क्योंकि खराब परिभाषित समस्याओं से अनुचित नीतियाँ, संसाधनों की बर्बादी और सामाजिक मुद्दों के मूल कारणों को संबोधित करने में विफलता हो सकती है।

2. **सामाजिक नीति विश्लेषण:**

एक बार जब किसी सामाजिक समस्या की पहचान हो जाती है, तो अगला कदम नीति विश्लेषण होता है। इस स्टेज में पहचानी गई समस्या से जुड़ी मौजूदा नीतियों, कार्यक्रमों, कानूनों और संस्थागत ढांचों की सिस्टमैटिक जांच शामिल है। पॉलिसी एनालिसिस का मकसद यह पता लगाना है कि पहले क्या कोशिश की गई है, क्या सफल रहा है, और क्या फेल हुआ है।

पॉलिसी एनालिस्ट नीतियों का मूल्यांकन प्रभावशीलता (लक्ष्यों की प्राप्ति), दक्षता (संसाधनों का सही इस्तेमाल), समानता (लाभों का उचित वितरण), और व्यवहार्यता (प्रशासनिक, राजनीतिक और वित्तीय व्यावहारिकता) जैसे मानदंडों के आधार पर करते हैं। इस स्टेज में मौजूदा हस्तक्षेपों की कमियों, ओवरलैप और अनचाहे परिणामों की पहचान करना भी शामिल है।

इसके अलावा, पॉलिसी एनालिसिस वैकल्पिक पॉलिसी विकल्पों की पड़ताल करता है और उनके संभावित परिणामों की तुलना करता है। इसमें अलग-अलग तरीकों के सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक प्रभावों का पूर्वानुमान लगाना शामिल है। उदाहरण के लिए, हेल्थकेयर पॉलिसी में, एनालिसिस इंफ्रास्ट्रक्चर की उपलब्धता, सर्विस तक पहुंच, सामर्थ्य, कार्यबल क्षमता और देखभाल की गुणवत्ता पर ध्यान केंद्रित कर सकता है।

पॉलिसी एनालिसिस यह सुनिश्चित करता है कि निर्णय केवल विचारधारा या राजनीतिक दबाव के बजाय सबूतों पर आधारित हों, जिससे पॉलिसी की सफलता की संभावना बढ़ जाती है।

3. **पॉलिसी बनाना:**

पॉलिसी बनाना वह स्टेज है जिसमें समस्या की पहचान और पॉलिसी एनालिसिस से मिली जानकारियों के आधार पर ठोस पॉलिसी प्रस्ताव विकसित किए जाते हैं। इस कदम के दौरान, पॉलिसी बनाने वाले पॉलिसी के लक्ष्यों, उद्देश्यों, लक्षित आबादी और रणनीतिक हस्तक्षेपों को स्पष्ट रूप से परिभाषित करते हैं।

इस स्टेज में यह तय करना शामिल है कि कौन से कदम उठाए जाएंगे, उन्हें कैसे लागू किया जाएगा, और कौन सी संस्थाएं उन्हें लागू करने के लिए जिम्मेदार होंगी। पॉलिसी बनाने वाले आवश्यक वित्तीय, मानवीय और तकनीकी संसाधनों का भी निर्धारण करते हैं। इस स्टेज पर अक्सर समय-सीमा, प्रदर्शन संकेतक और निगरानी तंत्र स्थापित किए जाते हैं।

उदाहरण के लिए, यदि पॉलिसी का उद्देश्य शिक्षा के परिणामों में सुधार करना है, तो बनाई गई पॉलिसी में स्कूल में नामांकन बढ़ाना, ड्रॉपआउट दर कम करना, शिक्षक प्रशिक्षण में सुधार करना, इंफ्रास्ट्रक्चर को बढ़ाना और डिजिटल लर्निंग को बढ़ावा देना जैसी रणनीतियाँ शामिल हो सकती हैं।

एक अच्छी तरह से बनाई गई पॉलिसी कार्रवाई के लिए एक स्पष्ट रोडमैप प्रदान करती है, अस्पष्टता को कम करती है, और लक्ष्यों, रणनीतियों और क्रियान्वयन तंत्र के बीच तालमेल सुनिश्चित करती है।

4. **परामर्श और हितधारकों की भागीदारी:**

परामर्श और हितधारकों की भागीदारी सामाजिक नीति निर्माण में एक महत्वपूर्ण कदम है। इसमें प्रभावित समुदायों, नागरिक समाज संगठनों, गैर-सरकारी संगठनों, विशेषज्ञों, शिक्षाविदों, वकालत समूहों और सेवा प्रदाताओं सहित विभिन्न हितधारकों से राय, अनुभव और प्रतिक्रिया लेना शामिल है।

यह भागीदारी वाला दृष्टिकोण यह सुनिश्चित करता है कि विविध दृष्टिकोणों को शामिल किया जाए और नीतियां ऊपर से थोपी गई मान्यताओं के बजाय जमीनी वास्तविकताओं को दर्शाएं। हितधारकों की भागीदारी नीति की प्रासंगिकता, व्यवहार्यता और स्वीकार्यता को बढ़ाती है।

इसके अलावा, हितधारकों को शामिल करने से पारदर्शिता, जवाबदेही और लोकतांत्रिक शासन को बढ़ावा मिलता है। यह संभावित क्रियान्वयन चुनौतियों, सामाजिक प्रतिरोध और अनपेक्षित परिणामों की पहले से पहचान करने में मदद करता है। व्यापक भागीदारी स्वामित्व और सार्वजनिक समर्थन भी बनाती है, जिससे सफल क्रियान्वयन की संभावना बढ़ जाती है।

5. **सामाजिक नीति को अपनाना:**

नीति अपनाने का मतलब विधायिकाओं, सरकारी मंत्रालयों, मंत्रिमंडलों या कार्यकारी प्राधिकरणों जैसे अधिकृत निकायों द्वारा नीति की औपचारिक स्वीकृति और वैधता है। इस स्तर पर, नीति प्रस्तावों पर बहस की जाती है, जांच की जाती है, यदि आवश्यक हो तो संशोधन किया जाता है, और आधिकारिक तौर पर स्वीकृत किया जाता है।

अपनाए जाने की प्रक्रिया में अक्सर राजनीतिक बातचीत, आम सहमति बनाना, वकालत और लॉबिंग शामिल होती है। नीति निर्माताओं को राजनीतिक और सार्वजनिक स्वीकृति प्राप्त करने के लिए नीतिगत विकल्पों को सही ठहराना चाहिए, अनुभवजन्य साक्ष्य प्रस्तुत करना चाहिए और अपेक्षित लाभों को प्रदर्शित करना चाहिए।

नीति अपनाना एक निर्णायक चरण है क्योंकि केवल स्वीकृत नीतियों को ही लागू किया जा सकता है। इस स्तर पर देरी या अस्वीकृति अच्छी तरह से बनाई गई नीतियों को भी साकार होने से रोक सकती है।

6. **सामाजिक नीति का कार्यान्वयन:**

नीति क्रियान्वयन वह चरण है जहां अपनाई गई नीतियों को ठोस कार्यों और कार्यक्रमों में बदला जाता है। इसमें प्रशासनिक संरचनाओं, सेवा वितरण तंत्र और नियामक ढांचे के माध्यम से नीतिगत निर्णयों को लागू करना शामिल है।

सफल क्रियान्वयन के लिए वित्तीय संसाधनों का पर्याप्त आवंटन, प्रशिक्षित कर्मियों, संस्थागत क्षमता और सरकारी एजेंसियों, स्थानीय अधिकारियों और क्रियान्वयन निकायों के बीच प्रभावी समन्वय की आवश्यकता होती है। भ्रम और अक्षमता से बचने के लिए स्पष्ट दिशानिर्देश, नियम और संचार चैनल आवश्यक हैं।

प्रगति को ट्रैक करने, अनुपालन सुनिश्चित करने और उभरती चुनौतियों का समाधान करने के लिए क्रियान्वयन के दौरान अक्सर निगरानी तंत्र स्थापित किए जाते हैं। कमजोर क्रियान्वयन सबसे अच्छी तरह से बनाई गई नीतियों को भी कमजोर कर सकता है।

7. **सामाजिक नीति का मूल्यांकन:**

सामाजिक नीति का मूल्यांकन सामाजिक नीति निर्माण प्रक्रिया में अंतिम और निरंतर चलने वाला कदम है। इसमें यह आकलन करना शामिल है कि क्या नीति ने अपने इच्छित लक्ष्यों और उद्देश्यों को प्राप्त किया है। मूल्यांकन आउटपुट, परिणाम, प्रभाव और अनपेक्षित परिणामों पर केंद्रित होता है।

यह चरण नीति की प्रभावशीलता, दक्षता, समानता और स्थिरता निर्धारित करने में मदद करता है। इवैल्यूएशन के नतीजे मौजूदा पॉलिसी में बदलाव करने, सफल दखलअंदाजी को बढ़ाने या बेकार प्रोग्राम को बंद करने के लिए कीमती फीडबैक देते हैं।

पॉलिसी इवैल्यूएशन जवाबदेही, सीखने और लगातार सुधार को पक्का करता है। यह सबूतों पर आधारित फैसले लेने में मदद करता है और पूरे गवर्नेंस प्रोसेस को मजबूत करता है।

आखिर में, सामाजिक नीति बनाना एक व्यापक, चक्रीय और भागीदारी वाली प्रक्रिया है जिसका मकसद सामाजिक चुनौतियों का सामना करना और व्यक्तियों और समुदायों की भलाई को बढ़ाना है। इसमें शामिल कदम - समस्या की पहचान, पॉलिसी एनालिसिस, पॉलिसी बनाना, सलाह और स्टेकहोल्डर की भागीदारी, पॉलिसी अपनाना, पॉलिसी लागू करना और पॉलिसी इवैल्यूएशन - आपस में जुड़े हुए हैं और मिलकर सोशल पॉलिसी की सफलता या विफलता तय करते हैं।

एक व्यवस्थित, सबूतों पर आधारित और समावेशी तरीका अपनाकर, पॉलिसी बनाने वाले ऐसी सोशल पॉलिसी डिजाइन कर सकते हैं जो समाज की ज़रूरतों के हिसाब से हों, स्वभाव से न्यायसंगत हों, और मनचाहे सामाजिक नतीजे हासिल करने में असरदार हों। अच्छी सोशल पॉलिसी बनाना आखिरकार सामाजिक विकास, सामाजिक समावेश, अच्छे गवर्नेंस और टिकाऊ प्रगति में योगदान देता है।

7.3.4 सामाजिक नीति के निर्माण को प्रभावित करने वाले कारक:

सामाजिक नीति में सार्वजनिक संस्थानों द्वारा अपनाई जाने वाली सक्रिय प्रक्रिया, सिद्धांत और कार्यक्रम शामिल होते हैं, जिन्हें समाज की ज़रूरी समस्याओं का जवाब देने और लोगों की भलाई को आगे बढ़ाने के लिए डिज़ाइन किया गया है। इस विषय में शिक्षा, स्वास्थ्य, आवास, रोज़गार और सामाजिक सुरक्षा, साथ ही गरीबी

और सामाजिक न्याय जैसे कई क्षेत्र शामिल हैं। हालांकि, समाजशास्त्रीय व्याख्या के आधार पर, सामाजिक नीति सिर्फ़ प्रशासनिक या तकनीकी काम का मामला नहीं है, बल्कि यह संरचना और संस्कृति की गहरी जड़ों वाली ताकतों से प्रभावित होती है।

सामाजिक नीति बनाने की प्रक्रिया भी अलग-अलग समाजों और अलग-अलग समय में, उनकी अलग-अलग विशेषताओं के कारण अलग-अलग होती है। सामाजिक नीति बनाने की प्रक्रिया को तय करने वाले कारकों के बारे में ज्ञान, किसी भी राज्य द्वारा समाज की मांगों को पूरा करने के तरीकों और साधनों और नीतियों के समाज के विभिन्न हिस्सों पर पड़ने वाले प्रभाव को समझने में बहुत महत्वपूर्ण हो जाता है। सामाजिक नीति के निर्माण को तय करने वाले मुख्य कारकों पर निम्नलिखित बिंदुओं में चर्चा की गई है।

1- आर्थिक कारक- सामाजिक नीतियां बनाने में आर्थिक बातों का बहुत ज़्यादा असर होता है। असल में, किसी देश की आम आर्थिक स्थिति इस बात पर असर डालती है कि सरकार सामाजिक कल्याण के लिए कितने संसाधन दे सकती है।

- **आर्थिक विकास का स्तर-** आर्थिक विकास का स्तर, जिसे सकल घरेलू उत्पाद, प्रति व्यक्ति आय और वित्तीय क्षमता जैसे इंडिकेटर्स के आधार पर मापा जा सकता है, सामाजिक नीति पर असर डालता है। आर्थिक रूप से विकसित देश के पास हमेशा कुल सामाजिक कल्याण कार्यक्रमों को लागू करने के लिए बेहतर संसाधन होते हैं, जबकि विकासशील देशों को कुल सामाजिक नीतियों को लागू करते समय सीमाओं का सामना करना पड़ सकता है।
- **आय असमानता और गरीबी-** आय असमानता और गरीबी दर में बड़े अंतर सरकारों पर पुनर्वितरण वाली सामाजिक नीतियां बनाने का दबाव डालते हैं। ऐसी नीतियां प्रोग्रेसिव टैक्सेशन, सामाजिक कल्याण सहायता, सब्सिडी कार्यक्रमों और आर्थिक अंतर को पाटने के उद्देश्य से बनाई गई कल्याण योजनाओं के माध्यम से हो सकती हैं। असमानता में बढ़ते अंतर वाले समाज खास तौर पर सामाजिक सुरक्षा और समावेशी विकास से जुड़ी रणनीतियों को ज़्यादा अपनाते हैं।
- **श्रम बाजार की स्थितियां-** श्रम बाजार की गतिशीलता, जैसे बेरोजगारी, कम रोजगार, काम का अनौपचारिक होना और मजदूरी में अस्थिरता, सामाजिक नीति बनाने पर कुछ हद तक असर डालती है। उच्च स्तर की बेरोजगारी सरकारों को बेरोजगारों के लिए लाभ, कौशल उन्नयन और रोजगार गारंटी से संबंधित नीतियां बनाने के लिए प्रेरित कर सकती है। साथ ही, तकनीकी प्रगति के कारण काम की दुनिया में होने वाले बदलावों के लिए गैर-पारंपरिक श्रमिकों के लिए रीस्किलिंग और सामाजिक सुरक्षा से संबंधित नीतियों की आवश्यकता होती है।

इस संबंध में, सामाजिक नीतियों को आर्थिक वास्तविकताओं के साथ तालमेल बिठाकर, सामाजिक क्षेत्र में स्थिरता, आर्थिक विकास के साथ-साथ स्थायी विकास हासिल करना संभव है।

2- **राजनीतिक कारक-** दरअसल, सामाजिक नीतियों को तय करने में राजनीतिक बातों का अहम रोल होता है क्योंकि नीतियां राजनीतिक फैसले होते हैं।

- **राजनीतिक विचारधाराएं-**मौजूदा सरकार की विचारधारा का सामाजिक नीतियों को बनाने पर काफी असर पड़ता है। उदाहरण के लिए, रूढ़िवादी या नवउदारवादी सरकारें कम से कम सरकारी दखल, बाज़ार-आधारित समाधान और सामाजिक सेवाओं के निजीकरण को पसंद कर सकती हैं। इसके उलट, समाजवादी या सामाजिक-लोकतांत्रिक सरकारें शायद कल्याणकारी कार्यक्रमों को बढ़ाने, सरकारी दखल और सामाजिक समानता को पसंद करती हैं।
- **राजनीतिक दलों और नेतृत्व का कार्य-** राजनीति, सभी पेशों की तरह, राजनीतिक दल यह पक्का करते हैं कि सामाजिक नीति एजेंडा पर घोषणापत्रों और चुनावी वादों के आधार पर ध्यान दिया जाए। नेतृत्व की शैलियाँ और राजनीतिक प्रतिबद्धता सामाजिक मुद्दों को गंभीरता से लेने के स्तर को प्रभावित करती हैं। सामाजिक नीति में निरंतरता और बदलाव राजनीति में बदलाव से प्रभावित हो सकते हैं।
- **हित समूह और दबाव समूह-** जैसा कि पहले बताया गया है, ट्रेड यूनियन, व्यावसायिक संगठन और गैर-सरकारी संगठनों जैसे हित समूह लॉबिंग और वकालत के प्रयासों के माध्यम से सामाजिक नीतियों को प्रभावित करते हैं। इन संगठनों में वे शामिल हो सकते हैं जो मज़दूरों के अधिकारों को बढ़ाने या सामाजिक न्याय को बढ़ावा देने के लिए अभियान चलाते हैं।
- **चुनावी राजनीति-** चुनावी राजनीति सामाजिक नीति के निर्माण को प्रभावित करती है। सरकारें लोगों का दिल जीतने के लिए कल्याणकारी उपाय स्थापित और बढ़ा सकती हैं। लोकलुभावन राजनीति को इस तरह से विकसित किया जा सकता है कि वह हाशिए पर पड़े लोगों सहित खास वोटिंग वर्गों को आकर्षित करे।

3- **सामाजिक कारक-** सामाजिक और सांस्कृतिक कारक सामाजिक नीतियों को बनाने में बहुत महत्वपूर्ण होते हैं क्योंकि वे समाज की ज़रूरतों और मूल्यों को परिभाषित करने में शामिल होते हैं।

- **जनसांख्यिकीय कारक-** जनसंख्या वृद्धि, उम्र बढ़ना, प्रवासन और शहरीकरण जैसे जनसांख्यिकीय कारक सामाजिक नीतियों को सीधे प्रभावित करते हैं। उदाहरण के लिए, बढ़ती उम्र की आबादी पेंशन कार्यक्रमों, स्वास्थ्य देखभाल और वरिष्ठ देखभाल नीतियों की मांग करती है, जबकि युवा आबादी शिक्षा और रोज़गार सृजन कार्यक्रमों की मांग करती है।
- **संस्कृति के मूल आदर्श और विश्वास-** सामाजिक मानदंड और मूल्य सामाजिक सुरक्षा, सरकारी भागीदारी और समाज में व्यक्तिगत भूमिकाओं के बारे में धारणाओं को प्रभावित करते हैं। सामूहिकता

या व्यक्तिवाद का स्तर समाजों को प्रमुख सामाजिक सुरक्षा प्रावधान या केवल न्यूनतम सरकारी भागीदारी की ओर ले जा सकता है।

- **सामाजिक मानदंड और असमानताएँ-** लिंग, जाति, नस्ल, जातीयता और धर्म में सामाजिक मानदंडों की समानता और समावेशन के मामलों पर नीतियों को प्रभावित करने में बड़ी भूमिका होती है। लैंगिक न्याय और अल्पसंख्यकों और सामाजिक समावेशन से संबंधित नीतियां बदलते सामाजिक दृष्टिकोण और समाज में सुधार की मांगों के आधार पर उत्पन्न हो सकती हैं।

इस प्रकार, सामाजिक निर्धारकों को ध्यान में रखने से यह सुनिश्चित होता है कि सामाजिक नीतियों की सामाजिक प्रासंगिकता और सांस्कृतिक उपयुक्तता को संबोधित किया जाए।

4- संस्थागत कारक:

संस्थागत कारक नीति निर्माण और क्रियान्वयन में शामिल संगठनों की संरचनाओं और क्षमताओं को संदर्भित करते हैं।

- **कानूनी और संवैधानिक ढाँचा-** कानूनी प्रणाली अधिकारों, कर्तव्यों और राज्य के हस्तक्षेप के दायरे को परिभाषित करके सामाजिक नीति के लिए आधार प्रदान करती है। सामाजिक न्याय, समानता और कल्याण से संबंधित संवैधानिक प्रावधान नीति निर्माण का मार्गदर्शन करते हैं और राज्य की कार्रवाई को वैधता प्रदान करते हैं।
- **प्रशासनिक क्षमता-** सामाजिक नीति निर्माण की प्रभावशीलता संस्थानों की प्रशासनिक क्षमता पर निर्भर करती है। अच्छी तरह से विकसित नौकरशाही संरचनाएं, कुशल कर्मी और कुशल शासन तंत्र बेहतर नीति नियोजन और निष्पादन को सक्षम बनाते हैं।
- **संसाधनों की उपलब्धता-** वित्तीय संसाधनों, मानव पूंजी और विश्वसनीय डेटा की उपलब्धता नीति निर्माण को महत्वपूर्ण रूप से प्रभावित करती है। पर्याप्त संसाधनों के बिना, अच्छी तरह से डिज़ाइन की गई नीतियां भी अपने उद्देश्यों को प्राप्त करने में विफल हो सकती हैं। संस्थागत शक्ति यह सुनिश्चित करती है कि सामाजिक नीतियां न केवल अच्छी तरह से बनाई जाएं बल्कि प्रभावी ढंग से लागू भी की जाएं और समय के साथ बनी रहें।

5- अंतर्राष्ट्रीय कारक :

तेजी से वैश्वीकृत दुनिया में, अंतर्राष्ट्रीय कारक राष्ट्रीय सामाजिक नीतियों को आकार देने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं।

- **अंतर्राष्ट्रीय समझौते और संधियाँ-** अंतर्राष्ट्रीय सम्मेलन और संधियाँ अक्सर देशों को श्रम मानकों, पर्यावरण संरक्षण, मानवाधिकारों और सामाजिक सुरक्षा से संबंधित विशिष्ट सामाजिक नीतियों को अपनाने की आवश्यकता होती है। इन समझौतों का अनुपालन घरेलू नीति ढांचे को प्रभावित करता है।

- **वैश्विक आर्थिक रुझान-** वैश्वीकरण, तकनीकी परिवर्तन और आर्थिक एकीकरण रोजगार पैटर्न, असमानता और सामाजिक जोखिमों को प्रभावित करते हैं। ये रुझान सरकारों को डिजिटल कौशल, गिग अर्थव्यवस्था श्रमिकों और वैश्विक संदर्भ में सामाजिक सुरक्षा जैसे मुद्दों को संबोधित करने वाली नीतियां बनाने के लिए मजबूर करते हैं।
- **अंतर्राष्ट्रीय संगठनों की भूमिका-** संयुक्त राष्ट्र, विश्व बैंक, अंतर्राष्ट्रीय श्रम संगठन और विश्व स्वास्थ्य संगठन जैसे अंतर्राष्ट्रीय संगठन फंडिंग, नीति दिशानिर्देशों और तकनीकी सहायता के माध्यम से सामाजिक नीति को प्रभावित करते हैं। उनकी सिफारिशें अक्सर शिक्षा, स्वास्थ्य, लैंगिक समानता और सतत विकास जैसे क्षेत्रों में राष्ट्रीय प्राथमिकताओं को आकार देती हैं।

अंतर्राष्ट्रीय निर्धारकों के साथ जुड़कर, नीति निर्माता राष्ट्रीय सामाजिक नीतियों को वैश्विक मानकों के साथ संरेखित कर सकते हैं और अंतर्राष्ट्रीय सहयोग को बढ़ावा दे सकते हैं।

सामाजिक नीति निर्माण की विशेषताएं इसकी जटिलता और समाजशास्त्रीय गहराई को उजागर करती हैं। यह मूल्यों पर आधारित, राजनीतिक, सहभागी और गतिशील प्रक्रिया है जो सत्ता संबंधों और सामाजिक संरचनाओं द्वारा आकार लेती है। इन विशेषताओं को समझने से नीति निर्माताओं और विद्वानों को ऐसी सामाजिक नीतियां तैयार करने में मदद मिलती है जो अधिक समावेशी, न्यायसंगत और समाज की बदलती जरूरतों के प्रति संवेदनशील हों।

7.4 सामाजिक नीतियों का क्रियान्वयन:

सामाजिक नीति के क्रियान्वयन को समझने के लिए सबसे पहले इसकी मूल परिभाषा को जानना आवश्यक है। सरल शब्दों में, सामाजिक नीति का क्रियान्वयन वह प्रक्रिया है जिसके माध्यम से समाज की समस्याओं को हल करने के लिए बनाई गई नीतियों को व्यवहार में लागू किया जाता है। सामाजिक नीतियाँ जीवन स्तर को बेहतर बनाने, समाज में समानता बढ़ाने और सामाजिक न्याय को सुनिश्चित करने के उद्देश्य से बनाई जाती हैं। लेकिन जब तक इन नीतियों को ज़मीन पर लागू नहीं किया जाता, तब तक ये केवल कागज़ों तक ही सीमित रहती हैं।

सामाजिक नीतियों को एक बेहतर समाज की रूपरेखा कहा जा सकता है। जैसे किसी घर का नक्शा बनने से घर नहीं बन जाता, वैसे ही नीति बनाने से सामाजिक सुधार अपने आप नहीं हो जाता। घर बनाने के लिए निर्माण कार्य ज़रूरी होता है, उसी तरह सामाजिक नीति को लागू करना आवश्यक होता है। क्रियान्वयन का चरण वह समय होता है जब नीति में लिखी गई योजनाओं को वास्तविक रूप दिया जाता है।

सामाजिक नीति के क्रियान्वयन की प्रक्रिया में कई जुड़े हुए चरण होते हैं। पहला चरण योजना बनाना होता है, जिसमें यह तय किया जाता है कि नीति को कैसे लागू किया जाएगा और किसकी क्या ज़िम्मेदारी होगी। दूसरा चरण संसाधनों का आवंटन होता है, जिसमें धन की व्यवस्था, प्रशिक्षित कर्मचारियों की नियुक्ति और आवश्यक सुविधाओं की उपलब्धता शामिल होती है। तीसरा चरण सेवा या कार्यक्रम वितरण होता है, जहाँ नीति के

अंतर्गत तय की गई सेवाएँ सीधे या अप्रत्यक्ष रूप से ज़रूरतमंद लोगों तक पहुँचाई जाती हैं। अंतिम चरण निगरानी और मूल्यांकन का होता है, जिसमें यह देखा जाता है कि नीति सही ढंग से लागू हो रही है या नहीं, लक्ष्य पूरे हो रहे हैं या नहीं, और यदि कोई कमी है तो उसमें सुधार किया जाता है।

वास्तव में, सामाजिक नीति का क्रियान्वयन समाज में सुधार लाने के लिए बनाई गई योजनाओं को क्रियान्वित करने की प्रक्रिया है। इसके माध्यम से सामाजिक कल्याण, समानता और न्याय जैसे विचारों को रोज़गार, स्वास्थ्य सेवाएँ, आवास, शिक्षा और सामाजिक सुरक्षा जैसी सुविधाओं के रूप में लोगों तक पहुँचाया जाता है।

इसे एक उदाहरण से आसानी से समझा जा सकता है। मान लीजिए सरकार बेघर लोगों की समस्या को कम करने के लिए एक नीति बनाती है। नीति में यह कहा जाता है कि आश्रय स्थल बनाए जाएंगे, किफायती मकान दिए जाएंगे और पुनर्वास सेवाएँ प्रदान की जाएँगी। लेकिन क्रियान्वयन का मतलब केवल इसकी घोषणा करना नहीं होता। इसके अंतर्गत राज्यों और स्थानीय निकायों को धन देना, आश्रय स्थलों का निर्माण या मरम्मत करना, लोगों के लिए आवेदन की प्रक्रिया बनाना, पात्र लोगों की पहचान करना और यह सुनिश्चित करना शामिल होता है कि ये सुविधाएँ बिना भेदभाव और देरी के जरूरतमंदों तक पहुँचें। साथ ही, इन योजनाओं की निगरानी भी की जाती है ताकि धन का दुरुपयोग न हो और दी जा रही सुविधाएँ ठीक हों।

अतः सामाजिक नीति का क्रियान्वयन वह चरण है जहाँ नीति में लिखे गए सिद्धांत वास्तविक जीवन में दिखाई देने लगते हैं। यहीं पर सरकार की योजनाएँ समाज की वास्तविक स्थितियों, प्रशासनिक क्षमता और लोगों की ज़रूरतों से जुड़ती हैं। इसलिए किसी भी सामाजिक नीति की सफलता इस बात पर निर्भर करती है कि उसे कितनी प्रभावी ढंग से लागू किया गया है, न कि केवल इस पर कि वह नीति कितनी अच्छी तरह बनाई गई है।

7.4.1 सामाजिक नीति क्रियान्वयन के आवश्यक घटक:

सामाजिक नीति का क्रियान्वयन नीति प्रक्रिया का एक महत्वपूर्ण चरण है, जहाँ सैद्धांतिक योजनाओं को समाज पर प्रभाव डालने वाले मूर्त परिणामों में परिवर्तित किया जाता है। किसी सामाजिक नीति की सफलता के लिए कुछ आवश्यक घटकों का होना अनिवार्य है, जिनमें से प्रत्येक नीति के उद्देश्यों की पूर्ति और लक्षित जनसंख्या तक लाभ पहुँचाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। इन घटकों को समझने से सामाजिक नीति के क्रियान्वयन की गतिशीलता की व्यापक जानकारी प्राप्त होती है।

1 **योजना एवं क्रियान्वयन-** सामाजिक नीति का क्रियान्वयन नीति प्रक्रिया का एक महत्वपूर्ण चरण है, जहाँ सैद्धांतिक योजनाओं को समाज पर प्रभाव डालने वाले मूर्त परिणामों में परिवर्तित किया जाता है। किसी सामाजिक नीति की सफलता के लिए कुछ आवश्यक घटकों का होना अनिवार्य है, जिनमें से प्रत्येक नीति के उद्देश्यों की पूर्ति और लक्षित जनसंख्या तक लाभ पहुँचाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। इन घटकों को समझने से सामाजिक नीति के क्रियान्वयन की गतिशीलता की व्यापक जानकारी प्राप्त होती है।

2 **संसाधन आवंटन:**

दूसरा आवश्यक घटक संसाधनों का आवंटन है। क्रियान्वयन के लिए नियोजित गतिविधियों को समर्थन देने हेतु पर्याप्त वित्तीय, मानवीय और भौतिक संसाधनों की आवश्यकता होती है। वित्तीय संसाधन यह सुनिश्चित करते हैं कि कार्यक्रमों को पर्याप्त रूप से वित्त पोषित किया जाए और मजदूरी, अवसंरचना विकास और सामग्री की खरीद को उचित रूप से कवर किया जाए। प्रशिक्षित कर्मियों और अग्रिम पंक्ति के कार्यकर्ताओं सहित मानवीय संसाधन, सेवाएं प्रदान करने और कार्यक्रम की पहुंच सुनिश्चित करने के लिए अपरिहार्य हैं। भवन, उपकरण और आपूर्ति जैसे भौतिक संसाधन क्रियान्वयन की परिचालन रीढ़ हैं। अपर्याप्त या कुप्रबंधित संसाधन नीति के क्रियान्वयन में महत्वपूर्ण बाधा उत्पन्न कर सकते हैं, जिससे इसकी प्रभावशीलता कम हो जाती है। उदाहरण के लिए, ICDS कार्यक्रम प्रभावी ढंग से कार्य करने के लिए प्रशिक्षित आंगनवाड़ी कार्यकर्ताओं, पर्याप्त पोषण पूरक और सुसज्जित केंद्रों पर बहुत अधिक निर्भर करता है। इन संसाधनों में किसी भी प्रकार की कमी सेवा वितरण को प्रभावित करती है और कार्यक्रम के प्रभाव को कम करती है। इसी प्रकार, प्रधानमंत्री आवास योजना (PMAY) के तहत आवास पहलों के लिए आर्थिक रूप से कमजोर वर्गों को किफायती आवास की समय पर डिलीवरी सुनिश्चित करने के लिए निर्माण सामग्री, कुशल श्रम और धन का उचित आवंटन आवश्यक है।

सुदृढ़ प्रशासनिक संरचना- तीसरा घटक सुदृढ़ प्रशासनिक संरचनाओं की स्थापना से संबंधित है। सफल नीति क्रियान्वयन कार्यक्रम के प्रबंधन और क्रियान्वयन करने वाली एजेंसियों और संगठनों के सुव्यवस्थित और समन्वित ढांचे पर निर्भर करता है। इन संरचनाओं के भीतर भूमिकाओं, जिम्मेदारियों और जवाबदेही तंत्रों का स्पष्ट निर्धारण भ्रम को रोकने और दक्षता सुनिश्चित करने के लिए महत्वपूर्ण है। प्रशासनिक संरचनाएं केंद्रीय, राज्य और स्थानीय प्राधिकरणों जैसे शासन के विभिन्न स्तरों के बीच समन्वय को सुगम बनाती हैं, जिससे सेवा वितरण के लिए एक व्यवस्थित दृष्टिकोण बनता है। जल जीवन मिशन (जेजेएम) एक उदाहरण है, जहां जल शक्ति मंत्रालय, राज्य सरकारों, स्थानीय पंचायती राज संस्थाओं और सामुदायिक जल समितियों के बीच समन्वय जल आपूर्ति परियोजनाओं की कुशल योजना, निर्माण और निगरानी सुनिश्चित करता है। ऐसे प्रशासनिक ढांचे के बिना, नीतियां खंडित हो सकती हैं और अपने लक्षित लाभार्थियों तक पहुंचने में विफल हो सकती हैं।

सेवा वितरण तंत्र- सेवा वितरण तंत्र सामाजिक नीति क्रियान्वयन का चौथा घटक है। इसका तात्पर्य उन प्रक्रियाओं और माध्यमों से है जिनके द्वारा किसी नीति के लाभ लक्षित जनसंख्या तक पहुँचते हैं। इन तंत्रों की दक्षता, सुलभता और समानता ही किसी नीति के वास्तविक जीवन पर पड़ने वाले प्रभाव को निर्धारित करती है। सेवाएं सरकारी एजेंसियों द्वारा प्रत्यक्ष रूप से, गैर-सरकारी संगठनों के साथ साझेदारी के माध्यम से अप्रत्यक्ष रूप से, या दोनों के संयोजन से प्रदान की जा सकती हैं। सेवा वितरण प्रणाली का डिज़ाइन और क्रियान्वयन यह सुनिश्चित करने में निर्णायक भूमिका निभाते हैं कि नीतियां केवल प्रतीकात्मक न हों, बल्कि उनके व्यावहारिक और मापने योग्य परिणाम हों। उदाहरण के लिए, PMAY के तहत, आवास सहायता राज्य आवास बोर्डों और नगर निगम प्राधिकरणों के माध्यम से प्रदान की जाती है, साथ ही डिजिटल लाभार्थी सत्यापन प्रणालियों द्वारा यह सुनिश्चित किया जाता है कि सहायता जरूरतमंदों तक पहुंचे। इसी प्रकार, आईसीडीएस स्थानीय स्तर पर

पोषण, स्वास्थ्य देखभाल और प्रारंभिक बाल्यावस्था शिक्षा सेवाएं प्रदान करने के लिए आंगनवाड़ी केंद्रों पर निर्भर करता है, जिससे सुलभता और समानता में वृद्धि होती है।.

निगरानी और मूल्यांकन- पांचवां और अंतिम घटक निगरानी और मूल्यांकन है। क्रियान्वयन एक बार की घटना नहीं है; यह एक सतत प्रक्रिया है जिसके लिए निरंतर अवलोकन, आकलन और प्रतिक्रिया की आवश्यकता होती है। निगरानी नीति के क्रियान्वयन की प्रगति पर नज़र रखती है, बाधाओं की पहचान करती है और संसाधनों के उचित उपयोग को सुनिश्चित करती है। मूल्यांकन यह आकलन करता है कि क्या नीति अपने इच्छित परिणामों को प्राप्त कर रही है और उन क्षेत्रों में अंतर्दृष्टि प्रदान करता है जिनमें समायोजन या सुधार की आवश्यकता है। प्रतिक्रिया तंत्र सीखने और अनुकूलन को सुगम बनाते हैं, जिससे नीति निर्माताओं और कार्यान्वयनकर्ताओं को प्रभावशीलता बढ़ाने के लिए सूचित परिवर्तन करने में मदद मिलती है। भारत में, एमजीएनआरईजीए के तहत सामाजिक लेखापरीक्षाएं समुदायों को कार्य पूर्णता को सत्यापित करने, मजदूरी भुगतान पर नज़र रखने और निधि उपयोग की निगरानी करने में सक्षम बनाती हैं, जिससे पारदर्शिता और जवाबदेही सुनिश्चित होती है। इसी प्रकार, राष्ट्रीय पोषण पहल, पोषण अभियान, कार्यक्रम कवरेज का आकलन करने, पोषण संबंधी परिणामों पर नज़र रखने और नीतिगत समायोजन के लिए निरंतर निगरानी और मूल्यांकन का उपयोग करता है। उदाहरण: MGNREGA में सामाजिक लेखापरीक्षा को एकीकृत किया गया है, जो कार्य की गुणवत्ता, मजदूरी भुगतान और संसाधन उपयोग की जाँच करने की एक विधि है ताकि जवाबदेही और पारदर्शिता बनाए रखी जा सके।

यह समझना महत्वपूर्ण है कि सामाजिक नीति का क्रियान्वयन एक गतिशील और निरंतर चलने वाली प्रक्रिया है, न कि एक रेखीय या यांत्रिक प्रक्रिया। इसमें वास्तविक परिस्थितियों के अनुरूप ढलना, अप्रत्याशित चुनौतियों का सामना करना और व्यावहारिक अनुभवों से सीखना आवश्यक है। प्रभावी क्रियान्वयन के लिए स्थानीय वास्तविकताओं के प्रति संवेदनशीलता, सामाजिक असमानताओं के प्रति सहानुभूति और परिस्थितियों के अनुसार समायोजन करने की क्षमता आवश्यक है। इस अनुकूलनशील और निरंतर चलने वाली प्रक्रिया के माध्यम से ही नीति के मूल उद्देश्य साकार होते हैं और समाज के सुधार एवं कल्याण के लक्ष्य प्राप्त होते हैं।

सामाजिक नीति क्रियान्वयन के आवश्यक घटक-नीति निर्माण, संसाधन आवंटन, प्रशासनिक संरचनाएँ, सेवा वितरण तंत्र और निगरानी एवं मूल्यांकन-एक परस्पर निर्भर ढाँचा बनाते हैं। प्रत्येक तत्व नीतिगत उद्देश्यों को ठोस सामाजिक लाभों में सफलतापूर्वक परिवर्तित करने में योगदान देता है। एमजीएनआरईजीए, आईसीडीएस, पीएमएवाई, जल जीवन मिशन और पोषण अभियान जैसे भारतीय कार्यक्रम व्यवहार में इन घटकों के महत्व को दर्शाते हैं, यह उजागर करते हुए कि सामाजिक नीति केवल एक सैद्धांतिक योजना नहीं है, बल्कि मानव कल्याण में सुधार और सामाजिक न्याय को बढ़ावा देने के उद्देश्य से एक व्यावहारिक, उत्तरदायी और परिवर्तनकारी प्रक्रिया है।

7.5 सामाजिक नीति प्रक्रिया की सफलता के परिणाम

सामाजिक नीति प्रक्रिया एक संरचित और लक्ष्य-उन्मुख तंत्र है जो सामाजिक समस्याओं की पहचान से शुरू होकर नीति निर्माण, कार्यान्वयन, निगरानी और मूल्यांकन तक आगे बढ़ती है। इस प्रक्रिया का अंतिम उद्देश्य समाज में सार्थक, मापने योग्य और स्थायी सुधार लाना है। जब सामाजिक नीतियां प्रभावी ढंग से तैयार और कार्यान्वित की जाती हैं, तो उनके परिणाम कई स्तरों पर देखे जा सकते हैं—सामाजिक, आर्थिक, संस्थागत और व्यक्तिगत। ये परिणाम आपस में जुड़े हुए हैं और सामूहिक रूप से सामाजिक परिवर्तन में योगदान करते हैं

सामाजिक कल्याण में सुधार

सामाजिक नीति प्रक्रिया के सबसे मूलभूत परिणामों में से एक समग्र सामाजिक कल्याण में सुधार है। स्वास्थ्य, शिक्षा, आवास, स्वच्छता और सामाजिक सुरक्षा से संबंधित नीतियां आवश्यक सेवाओं और बुनियादी जरूरतों तक पहुंच सुनिश्चित करके नागरिकों के जीवन की गुणवत्ता को बढ़ाती हैं। भारतीय संदर्भ में, सामाजिक नीतियों ने स्वास्थ्य संकेतकों, साक्षरता स्तर और सामाजिक सुरक्षा में सुधार लाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है, विशेष रूप से कमजोर और हाशिए पर रहने वाली आबादी के बीच। उदाहरण के लिए, राष्ट्रीय स्वास्थ्य मिशन (एनएचएम) ने संस्थागत प्रसव, टीकाकरण और ग्रामीण स्वास्थ्य अवसंरचना के माध्यम से मातृ एवं शिशु स्वास्थ्य देखभाल को मजबूत किया है, जबकि आयुष्मान भारत-पीएमजेएवाई ने आर्थिक रूप से कमजोर वर्गों को स्वास्थ्य बीमा कवरेज प्रदान करके वित्तीय कठिनाई को कम किया है।

सामाजिक असमानताओं में कमी

सामाजिक नीति प्रक्रिया का एक और प्रमुख परिणाम जाति, वर्ग, लिंग, क्षेत्र और विकलांगता से उत्पन्न सामाजिक असमानताओं में कमी है। भारत में सामाजिक नीतियां पुनर्वितरण उपायों, सकारात्मक कार्रवाई और समावेशी कल्याणकारी योजनाओं के माध्यम से समानता और सामाजिक न्याय को बढ़ावा देने का सक्रिय रूप से प्रयास करती हैं। शिक्षा और सार्वजनिक रोजगार में आरक्षण नीतियों ने अनुसूचित जाति, अनुसूचित जनजाति और अन्य पिछड़ा वर्ग के लिए अवसरों को बढ़ाया है, जबकि बेटी बचाओ बेटी पढ़ाओ जैसी पहलों का उद्देश्य लिंगभेद को दूर करना और बाल लिंग अनुपात में सुधार करना है। ये उपाय संरचनात्मक अंतरों को पाटने और सामाजिक समावेश को बढ़ावा देने में सहायक हैं।

हाशिए पर पड़े समूहों का सशक्तिकरण

सामाजिक नीति प्रक्रिया हाशिए पर पड़े और वंचित समुदायों को शिक्षा, रोजगार, स्वास्थ्य सेवा और वित्तीय संसाधनों तक बेहतर पहुंच प्रदान करके उन्हें सशक्त बनाने में भी सहायक होती है। सशक्तिकरण व्यक्तियों और समूहों को सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक जीवन में अधिक सक्रिय रूप से भाग लेने में सक्षम बनाता है। भारत में, राष्ट्रीय ग्रामीण आजीविका मिशन (एनआरएलएम) के अंतर्गत स्वयं सहायता समूह (एसएचजी) आंदोलन जैसे कार्यक्रमों ने ग्रामीण महिलाओं को आर्थिक और सामाजिक रूप से सशक्त बनाया है, जबकि स्टैंड-अप इंडिया महिलाओं और अनुसूचित जाति/अनुसूचित जनजाति समुदायों के बीच उद्यमिता को बढ़ावा देता है। ऐसी नीतियां आत्मनिर्भरता और सामाजिक सक्रियता को मजबूत करती हैं।

संस्थागत क्षमता में सुदृढ़ीकरण

प्रभावी सामाजिक नीतियां शासन और सेवा वितरण के लिए जिम्मेदार संस्थानों को मजबूत बनाने में योगदान देती हैं। नीति प्रक्रिया से प्रशासनिक दक्षता, पारदर्शिता, जवाबदेही और विभिन्न एजेंसियों के बीच समन्वय में सुधार होता है। भारत में, प्रत्यक्ष लाभ हस्तांतरण (डीबीटी) जैसी पहलों ने यह सुनिश्चित करके भ्रष्टाचार और धन की हेराफेरी को कम किया है कि लाभ सीधे लक्षित लाभार्थियों तक पहुंचे, जबकि डिजिटल इंडिया ने प्रौद्योगिकी आधारित शासन के माध्यम से सेवाओं तक पहुंच को बढ़ाया है। इन संस्थागत परिणामों से सार्वजनिक सेवा वितरण और शासन की विश्वसनीयता में सुधार होता है।

व्यवहारिक और सामाजिक परिवर्तन

कई सामाजिक नीतियों का उद्देश्य न केवल भौतिक सुधार होता है, बल्कि सामाजिक व्यवहार और दृष्टिकोण में परिवर्तन लाना भी होता है। स्वच्छता, स्वास्थ्य, शिक्षा और लैंगिक समानता से संबंधित नीतियां रोजमर्रा की प्रथाओं और सामाजिक मानदंडों को प्रभावित करने का प्रयास करती हैं। भारत के संदर्भ में, स्वच्छ भारत मिशन ने स्वच्छतापूर्ण व्यवहार को प्रोत्साहित किया है और खुले में शौच को कम किया है, जबकि जननी सुरक्षा योजना ने ग्रामीण और आर्थिक रूप से कमजोर महिलाओं में संस्थागत प्रसव को बढ़ावा दिया है। इस प्रकार के व्यवहारिक परिवर्तन दीर्घकालिक सामाजिक परिवर्तन में योगदान करते हैं।

आर्थिक सुरक्षा और आजीविका में सुधार

रोजगार सृजन, कौशल विकास, खाद्य सुरक्षा और सामाजिक बीमा से संबंधित सामाजिक नीतियां आर्थिक सुरक्षा को बढ़ावा देती हैं और आजीविका में सुधार लाती हैं। ये नीतियां गरीबी कम करने, आय को स्थिर करने और आर्थिक झटकों से निपटने की क्षमता बढ़ाने में सहायक होती हैं। भारत में, एमजीएनआरईजीए मजदूरी आधारित रोजगार प्रदान करता है और संकटग्रस्त पलायन को कम करता है, जबकि सार्वजनिक वितरण प्रणाली (पीडीएस) रियायती अनाज के माध्यम से खाद्य सुरक्षा सुनिश्चित करती है। ये सभी पहलें मिलकर परिवारों की आर्थिक स्थिरता को मजबूत करती हैं।

साक्ष्य-आधारित नीतिगत सीख और अनुकूलन

सामाजिक नीति प्रक्रिया निरंतर निगरानी और मूल्यांकन के माध्यम से मूल्यवान डेटा उत्पन्न करती है, जिससे साक्ष्य-आधारित सीख और अनुकूलन संभव हो पाता है। नीति निर्माता इस प्रतिक्रिया का उपयोग मौजूदा कार्यक्रमों को परिष्कृत करने और भविष्य में अधिक प्रभावी हस्तक्षेपों की योजना बनाने के लिए करते हैं। भारतीय उदाहरणों में आधार सीडिंग के माध्यम से सार्वजनिक वितरण प्रणाली (पीडीएस) में सुधार और एक राष्ट्र एक राशन कार्ड योजना, साथ ही जल जीवन मिशन के तहत अनुकूलन रणनीतियाँ शामिल हैं, जो अब सामुदायिक भागीदारी और स्थिरता पर जोर देती हैं।

जनविश्वास और सहभागिता में वृद्धि

नीति निर्माण में पारदर्शिता, समावेशिता और जवाबदेही राज्य में जनविश्वास को बढ़ाती है और नागरिक सहभागिता को प्रोत्साहित करती है। जब हितधारक योजना, कार्यान्वयन और निगरानी में सक्रिय रूप से शामिल होते हैं, तो लोकतांत्रिक शासन मजबूत होता है। भारत में, सूचना का अधिकार (आरटीआई) अधिनियम, 2005, एमजीएनआरईजीए के तहत सामाजिक लेखापरीक्षा, पंचायती राज संस्थाएं, डीबीटी-जेएएम त्रिमूर्ति और जल जीवन मिशन के तहत सहभागी योजना इस बात का उदाहरण हैं कि कैसे नागरिक सहभागिता सामाजिक विकास में जवाबदेही और साझा जिम्मेदारी को बढ़ावा देती है।

संक्षेप में, सामाजिक नीति प्रक्रिया के परिणाम केवल कल्याणकारी कार्यक्रमों के कार्यान्वयन तक ही सीमित नहीं हैं। भारतीय संदर्भ में, प्रभावी सामाजिक नीतियां सामाजिक कल्याण, समानता, सशक्तिकरण, संस्थागत मजबूती, व्यवहार परिवर्तन, आर्थिक सुरक्षा, नीतिगत ज्ञान और लोकतांत्रिक भागीदारी को बढ़ावा देती हैं। ये सभी परिणाम मिलकर समावेशी विकास, सामाजिक न्याय और नागरिकों के जीवन में सतत सुधार में योगदान करते हैं।

7.6 सारांश:

सामाजिक नीति आधुनिक समाज में सामाजिक समस्याओं के समाधान और मानव कल्याण को सुनिश्चित करने का एक प्रमुख साधन है। गरीबी, बेरोज़गारी, अशिक्षा, स्वास्थ्य असमानता, लैंगिक भेदभाव और सामाजिक बहिष्कार जैसी समस्याओं का समाधान केवल व्यक्तिगत प्रयासों से संभव नहीं होता, बल्कि इसके लिए राज्य और सार्वजनिक संस्थानों द्वारा प्रभावी सामाजिक नीतियों की आवश्यकता होती है। सामाजिक नीति केवल योजनाओं का समूह नहीं है, बल्कि यह समाज के मूल्यों, प्राथमिकताओं, सत्ता संबंधों और विकास की दिशा को प्रतिबिंबित करती है।

सामाजिक नीति निर्माण एक जटिल, गतिशील और बहुआयामी प्रक्रिया है, जिसमें समस्या की पहचान, नीति विश्लेषण, नीति निर्माण, हितधारकों की भागीदारी, नीति को अपनाना, क्रियान्वयन और मूल्यांकन जैसे चरण शामिल होते हैं। यह प्रक्रिया राजनीतिक, आर्थिक, सामाजिक, सांस्कृतिक और संस्थागत कारकों से प्रभावित होती है तथा मूल्य-आधारित और अधिकार-आधारित दृष्टिकोण पर आधारित होती है।

नीति का प्रभावी क्रियान्वयन संसाधन आवंटन, प्रशासनिक संरचना, सेवा वितरण तंत्र और निरंतर निगरानी पर निर्भर करता है। भारतीय संदर्भ में मनरेगा, राष्ट्रीय स्वास्थ्य मिशन, आईसीडीएस, पीएमएवाई और जल जीवन मिशन जैसी योजनाएँ सामाजिक न्याय, समानता और समावेशी विकास को बढ़ावा देती हैं।

सफल सामाजिक नीति प्रक्रिया के परिणामस्वरूप सामाजिक कल्याण में सुधार, असमानताओं में कमी, हाशिए पर पड़े वर्गों का सशक्तिकरण, संस्थागत मजबूती, व्यवहार परिवर्तन, आर्थिक सुरक्षा और लोकतांत्रिक सहभागिता में वृद्धि होती है। इस प्रकार सामाजिक नीति समाज में सतत और समावेशी विकास की आधारशिला है।

7.7 शब्दावली

1. सामाजिक नीति- समाज कल्याण हेतु राज्य द्वारा बनाई गई योजनाएँ और कार्यक्रम।

2. कल्याणकारी राज्य- नागरिकों के सामाजिक-आर्थिक कल्याण की जिम्मेदारी लेने वाला राज्य।

3. सामाजिक समस्या- समाज को प्रभावित करने वाली ऐसी स्थिति जो हस्तक्षेप की माँग करे।

4. नीति निर्माण- समस्याओं के समाधान हेतु नीतियों को तैयार करने की प्रक्रिया।

5. नीति क्रियान्वयन- स्वीकृत नीतियों को व्यवहार में लागू करना।

6. नीति विश्लेषण- नीति की प्रभावशीलता और उपयोगिता का अध्ययन।

7. निगरानी- नीति की प्रगति पर सतत अवलोकन।

8. मूल्यांकन- नीति के लक्ष्यों की प्राप्ति का आकलन।

9. सामाजिक न्याय- समाज में समान अधिकार और अवसर की स्थापना।

10. समावेशी विकास- विकास जिसमें सभी वर्गों की भागीदारी और लाभ हो।

11. हाशिए पर पड़े वर्ग- सामाजिक-आर्थिक रूप से वंचित समूह।

12. अधिकार-आधारित दृष्टिकोण- कल्याण को नागरिक का अधिकार मानने की सोच।

13. साक्ष्यआधारित नीति- शोध और आँकड़ों पर आधारित नीति।

7.8 दीर्घ उत्तरीय प्रश्न

1) सामाजिक नीति निर्माण की प्रक्रिया का विस्तार से वर्णन कीजिए।
2) समस्या की पहचान से लेकर नीति के मूल्यांकन तक के सभी चरणों को उपयुक्त उदाहरणों सहित समझाइए।
3) सामाजिक नीति के निर्माण और क्रियान्वयन को प्रभावित करने वाले प्रमुख कारकों की चर्चा कीजिए।
4) राजनीतिक, आर्थिक, सामाजिक, सांस्कृतिक एवं संस्थागत कारकों का विश्लेषण कीजिए।
5) भारत में सामाजिक नीति के क्रियान्वयन की समस्याओं का आलोचनात्मक विश्लेषण कीजिए।
6) भारत की प्रमुख सामाजिक नीतियों का समाज पर प्रभाव स्पष्ट कीजिए।

7.9 लघु उत्तरीय प्रश्न

1) सामाजिक नीति निर्माण को समाजशास्त्रीय दृष्टिकोण से क्यों समझना आवश्यक है?
2) सामाजिक नीति निर्माण को प्रभावित करने वाले किसी दो प्रमुख कारकों का उल्लेख कीजिए।

3) सामाजिक नीति निर्माण प्रक्रिया को गतिशील प्रक्रिया क्यों कहा जाता है?
4) साक्ष्य-आधारित सामाजिक नीति से आप क्या समझते हैं?
5) अधिकार-आधारित सामाजिक नीतियों का क्या महत्व है?
6) सामाजिक नीति के क्रियान्वयन का क्या अर्थ है?
7) सामाजिक नीति क्रियान्वयन में संसाधन आवंटन क्यों आवश्यक है?
8) निगरानी और मूल्यांकन सामाजिक नीति प्रक्रिया में क्यों महत्वपूर्ण हैं?
9) सामाजिक नीति प्रक्रिया के दो सामाजिक परिणाम लिखिए।
10) भारतीय संदर्भ में सामाजिक नीति की सफलता का कोई एक उदाहरण दीजिए।

7.10 संदर्भ सूची

Agarwal, O. P., & Somanathan, T. V. (2005). *Public policy making in India: Issues and remedies*. New Delhi, India: Centre for Policy Research (Occasional Paper).

Andrews, C. J. (2017). Rationality in policy decision making. In *Handbook of public policy analysis* (pp. 187–198). Routledge.

Dubey, S., Deshpande, S., Krishna, L., & Zadey, S. (2023). Evolution of government-funded health insurance for universal health coverage in India. *The Lancet Regional Health – Southeast Asia*, 13.

Jain, R. B. (2001). *Public administration in India: 21st century challenges for good governance*. New Delhi: Deep and Deep Publications.

Kumar, A., & Narain, V. (2014). Public policy and governance in India. *Vision*, 18(4), 257–260.

Mathur, N., & Mathur, K. (2017). Policy analysis in India: Research bases and discursive practices. In *Handbook of public policy analysis* (pp. 629–642). Routledge.

Mooij, J. (2007). Is there an Indian policy process? An investigation into two social policy processes. *Social Administration*, 41(4), 323–338.

Osman, F. A. (2002). Public policy making: Theories and their implications in developing countries. *Asian Affairs*, 24(3), 37–52.

Pülzl, H., & Treib, O. (2017). Implementing public policy. In *Handbook of public policy analysis* (pp. 115–134). Routledge.

Sengupta, S., & Jha, M. K. (2020). Social policy, COVID-19 and impoverished migrants: Challenges and prospects in locked down India. *The International Journal of Community and Social Development*, 2(2), 152–172.

Singh, R., Sharma, N. N., & Jha, U. (2014). Think tanks, research influence and public policy in India. *Vision*, 18(4), 289–297.

Yadav, S. (2010). Public policy and governance in India: The politics of implementation. *The Indian Journal of Political Science*, 439–457.

इकाई- 8 बाल, महिला और श्रम कल्याण

Child, Women and Labour Welfare

इकाई की रुपरेखा

8.1 प्रस्तावना

8.2 उद्देश्य

8.3 बाल श्रम

8.4 बाल श्रम का अर्थ

8.5 भारत में बाल श्रम

8.6 भारतीय उद्योगो में बाल श्रम

8.7 बाल श्रमिकों की समस्याएँ

8.8 बाल श्रमिकों की अवस्था में सुधार के राजकीय प्रयास

8.9 महिला श्रम

8.10 महिला श्रमिकों की समस्याएँ

8.11 महिला श्रमिकों की सुरक्षा के लिए राजकीय प्रयास

8.12 श्रम कल्याण का अर्थ एवं परिभाषा

8.13 श्रम कल्याण का महत्व अथवा भारत में श्रम कल्याण कार्य की आवश्यकता

8.14 सारांश

8.15 संदर्भ ग्रन्थ सूची

816 निबंधात्मक प्रश्न

8.1 प्रस्तावना

किसी भी राष्ट्र की प्रगति का वास्तविक आधार उसके नागरिकों का कल्याण होता है। विशेष रूप से बच्चे, महिलाएँ और श्रमिक समाज के वे वर्ग हैं जिन्हें सामाजिक, आर्थिक और संरचनात्मक चुनौतियों का सामना करना पड़ता है। इसलिए इनके संरक्षण, विकास और सशक्तिकरण के लिए कल्याणकारी नीतियों और कार्यक्रमों का निर्माण अत्यंत आवश्यक है। बाल, महिला और श्रम कल्याण न केवल सामाजिक न्याय का सिद्धांत है, बल्कि समावेशी विकास की अनिवार्य शर्त भी है।

8.2 उद्देश्य

1. इस इकाई में बाल श्रम का अर्थ एवं भारत में बाल श्रम को जान पाएगें।
2. इस इकाई में बाल श्रमिकों की समस्याएँ व बाल श्रमिकों की अवस्था में सुधार के राजकीय प्रयास का अध्ययन कर पाएगें।
3. महिला श्रम और महिला श्रमिकों की समस्याओं को जान सकेंगे।
4. श्रम कल्याण का अर्थ एवं परिभाषा एवं श्रम कल्याण के महत्व अथवा भारत में श्रम कल्याण कार्य की आवश्यकता का समझ सकेगे।

8.2 बाल श्रम

वर्तमान में बाल श्रम भारत के लिए नही अपितु सम्पूर्ण विश्व के लिए एक गंभीर समस्या बन गई है। वैश्विक स्तर पर बच्चों की स्थिति का आंकलन करें तो हम पाते है कि विश्व के कुल बच्चों में से लगभग 19 प्रतिशत बच्चें भारत में है। भारत का प्रत्येक तीसरा व्यक्ति 14 वर्ष से कम उम्र का है। हम सभी का यह दायित्व बनता है कि हम प्रत्येक बच्चे के परिपक्व होने तथा उसकी शारीरिक व आत्मिक ऊर्जा को पूर्ण रुप से विकसित होने में सहयोग दें। उसकी बौद्धिक, भावनात्मक और आध्यात्मिक प्रवृत्तियों को उत्कृष्ट बनाने में सहायता प्रदान करें, जिससे राष्ट्र का समुचित विकास हो सके।

परन्तु वर्तमान में बच्चों की स्थिति अत्यन्त दुःखद है, देश में लाखों-करोड़ों बच्चे ऐसे हैं, जिन्हें ऐसा वातावरण प्राप्त ही नहीं होता, जिसमें वे बड़े होकर समाज के सार्थक सदस्य बनें और समाज के प्रति अपने कत्तव्यों का निर्वहन कर सकें। प्रत्येक बच्चे का पूर्ण विकास होता है, उन्हें गरिमा के साथ जीवन जीने का अवसर प्राप्त होता है, लेकिन देश में कुछ बच्चों को शिक्षा प्राप्त करने के अवसरों से वंचित कर परम्परागत कार्यों, व्यावसायिक गतिविधियों एवं जोखिमपूर्ण कार्यों में लगाया जा रहा है।

8.4 बाल श्रम का अर्थ

बाल श्रमिक के अर्थ को निम्नलिखित दो रूपों में समझा जा सकता है-

(1) वैधानिक बाल श्रमिक- वैधानिक रूप से बाल श्रमिकों के अन्तर्गत उन श्रमिकों को सम्मिलित किया जाता है जो न्यूनतम आयु से अधिक है तथा व्यस्क नहीं है। कारखाना अधिनियम 1948 के अनुसार 14 से 15 वर्ष के श्रमिकों को बालक माना गया है। 14 वर्ष से कम आयु के इयों की विभिन्न उद्योगों में नियुक्ति पर निषेध है। अर्थात् उन बालकों को उद्योगों में कार्य करने के लिए नियुक्त नहीं किया जा सकता है। 15 से 18 वर्ष की आयु के व्यक्तियों को किशोर कहा जाता है। खादानों में 15 से 16 इयं तक के श्रमिकों को बाल श्रमिक कहा जाता है। बागानों में 12 से 15 वर्ष तक बच्चों को बाल श्रमिक कहा जाता है।

(2) अवैधानिक बाल श्रमिक- अवैधानिक बाल श्रमिक के अन्तर्गत असंगठित उद्योगों में कार्यरत बच्चे, खेतिहर मजदूर तथा उन सभी बच्चों को सम्मिलित किया जाता है जो अवैधानिक रूप से कारखानों, खदानों और बागानों आदि में अधिक आयु दिखाकर भर्ती कर लिए जाते हैं। श्रम विज्ञान में मुख्यतः वैधानिक बाल श्रमिकों की प्रमुख समस्याओं पर ही विचार एवं अध्ययन किया जाता है।

बाल श्रम क्या है?- कारखाना अधिनियम के अनुसार किसी भी उद्योग, खदान, कारखाने आदि में 14 वर्ष से कम आयु के बच्चे जिनसे मानसिक एवं शारीरिक श्रम कराया जाता बाल श्रमिक कहलाते हैं। भारतीय संविधान के अनुच्छेद 24 में स्पष्ट रूप से लिखा है कि 14 वर्ष से कम आयु के बच्चों से खदानों, कारखानों, खानों में कार्य नहीं कराया जायेगा, विशेष कर ऐसा कार्य जो बच्चों के स्वास्थ्य पर विपरीत प्रभाव डालता हो बिल्कुल नहीं कराया जायेगा। किन्तु आज इस नियम का खुलेआम उल्लंघन किया जा रहा है। अन्तर्राष्ट्रीय श्रम संगठन के निदेशक ने बाल श्रम पर अपनी रिपोर्ट में बाल श्रमिकों को निम्न रूप में परिभाषित किया गया है। 'यह वे किशोर नहीं है जो दिन में कुछ घण्टे खेल और पढ़ाई से निकाल कर खर्च के लिए काम करते हैं यह वे बच्चे भी नहीं है जो पारिवारिक जमीन पर खेती में सहायता करते हैं अथवा घरेलू कार्यों में मदद करते हैं, बल्कि यह वे मासूम बच्चे हैं जो वयस्कों की जिन्दगी बिताने को मजबूर है, यह बच्चे 10 से 18 घण्टे तक कार्य करते हैं, कम पैसों पर अपना श्रम बेचते हैं, बुनियादी शिक्षा और खेल से वंचित और कभी-कभी अपने परिवारों से अलग होकर रहते हैं।' भारतीय श्रम मन्त्रालय इस बात से अनभिज्ञ नहीं है कि जब समस्त संसार के लोग सो रहे होते हैं तब उस सुबह की ठिठुरती सर्दी में 7 से 14 वर्ष के बच्चों को उनकी माताओं द्वारा उन्हें जगाकर जलती हुई भट्टियों या पत्थर एवं बालू के ढेर में कार्य करने के लिए भेज दिया जाता है।

8.5 भारत में बाल श्रम

भारत में चाय बागानों तथा अन्य उद्योगों में अधिक संख्या में बच्चों को कार्य पर लगाया जाता है। इसका मुख्य कारण यह है कि बालकों को कम वेतन देना पड़ता है। उनसे अधिक काम लिय जा सकता है। वे किसी भी प्रकार का झगड़ा या हड़ताल नहीं कर सकते। वहीं गरीब माता-पिता अपनी मजबूरी के कारण अपने बालकों को कार्य करने के लिए मजबूरी में भेजते हैं।

मार्च 1985 में 14 वर्ष की आयु के बाल श्रमिकों की संख्या 1.715 करोड़ थी। अन्तर्राष्ट्रीय श्रम संगठन के अनुसार वर्तमान में विश्व में 10 करोड़ बच्चों को अपनी आजीविका के लिए विभिन्न उद्योगों एवं संस्थाओं में श्रमिक के रूप में कार्य करते हैं। भारत में 4.44 करोड़ बालक बाल श्रमिक के रूप में कार्य करते हैं। अन्तर्राष्ट्रीय श्रम संगठन के अनुसार विश्व का प्रत्येक चैथा बाल श्रमिक भारत में है। बाल श्रमिकों को अधिकतर संख्या कृषि से सम्बन्धित कार्यों में संलग्न है। घरों में कैन्टीनों और छोटी दुकानों में कार्य करने वाले घरेलू नौकरों, माल ढ़ोने वाले और बेचने वालों तथा जूतों पर पॉलिश करने वालों के रूप में बवाल श्रमिकों को बड़ी संख्या विद्यमान है। बोड़ी, गलीचा उद्योग, दिदासलाई, काँच की चूड़ी उद्योग, खिलौना आदि क्षेत्रों में अनियन्त्रित उद्योगों में बाल श्रमिकों की संख्या अधिक पायी जाती है।

8.6 भारतीय उद्योगो में बाल श्रम

भारत में विभिन्न उद्योगों में कार्यरत बाल श्रमिकों को निम्नलिखित वर्गों में बांटा गया है-

1. कारखानों में बाल-श्रम- देश में उद्योगो का विकास होता गया वैसे ही बाल श्रमिकों की करखानों में मांग बढ़ती गई। औद्योगिक विकास के प्रारम्भिक चरण में बाल-श्रम के उपयोग के सम्बन्ध में श्रम अधिनियमों के अभाव के कारण बाल-श्रमिकों का तेजी से शोषण होने लगा तथा यह शोषण् तब तक चलता रहा जब तक 1881 में प्रथम कारखाना अधिनियम पास नहीं हुआ। इस अधिनियम के अन्तर्गत उनकी कार्य दशाओं के सम्बन्ध में नियम बना दिये गये जिसमें समय-समय पर संशोधन भी किये गये।

2. अनियन्त्रित उद्योगों में बाल-श्रम- देश में अनियन्त्रित उद्योगों में बाल-श्रम का अधिक शोषण होता है। श्रम ब्यूरो के सर्वेक्षण के अनुसार ‘‘असम में बोड़ी एवं कपड़ा बुनाई उद्योग में बिहार में बीड़ी, चमड़ा, अभ्रक एवं कांच उद्योग में, पश्चिम बंगाल में कपड़ा बुनाई एवं माचिस उद्योग में, केरल में क्वायर उद्योग में तथा उत्तर प्रदेश में ताला उद्योग, खिलौना उद्योग, कपड़ा, बुनाई, जूता एवं चमड़े का उद्योग, चूड़ी उद्योग, कालीन उद्योग, चीनी मिट्टी उद्योग में बड़ी मात्रा में बाल-श्रम कार्यरत हैं।’’

3. कृषि उद्योगों में बाल -श्रम- ग्रामीण क्षेत्रों में बच्चे कृषि कार्यों में अपने बड़ों को सहायता करते हैं। तराई एवं धान उत्पादन के क्षेत्रों में बच्चे धान की चैपाई, गेहूँ की कटाई आदि कार्य अपने परिवार को जीविका के लिए करते हैं। इसके कारण वह अप्रैल में गेहूँ की कटाई एवं जुलाई में धान की रोपाई के कारण स्कूलों में भी नहीं आ पाते हैं। इससे ग्रामीण क्षेत्रों में शिक्षा का स्तर लगातार गिर रहा है।

4. बागानों में बाल-श्रम- भारत के बागानों में भी काफी संख्या में बाल श्रमिक कार्य करते हैं। 1948 में बागान अधिनियम के अनुसार, ष्बागानों के काम में 12 वर्ष से कम आयु के बच्चों को कार्य पर नहीं लगाया जा सकता है। किन्तु झूठे प्रमाण-पत्रों के आधार पर अभी भी 8 से 9 वर्ष के बच्चे काम करते हैं।

5. खनिज उद्योगों में बाल श्रम- प्रारम्भ में खनन उद्योग में बाल श्रम का अधिक उपयोग किया जाता था। 1901 में खनन उद्योग में काम करने वाले 12 वर्ष से कम आयु के बच्चों की संख्या 5147 थी। भारतीय खनिज अधिनियम एक्ट 1901 के पारित होने के पश्चात् भी बाल श्रम का प्रयोग बंद नहीं हुआ है।

8.7 बाल श्रमिकों की समस्याएँ

कारखानों एवं विभिन्न उद्योगों में कार्य करने वाले बाल श्रमिकों की मुख्य समस्याएँ निम्नलिखित है-

1. शिक्षा से वंचित-कम आयु में विभिन्न उद्योगों में रोजगार में लगे रहने के कारण ये बच्चे अनिवार्य शिक्षा से वंचित रह जाते हैं। उद्योगों में कार्य करने के कारण इन बच्चों के पास पढ़ने के लिए समय नहीं बचता इससे ये बच्चे अशिक्षित रह जाते हैं। इन बच्चों का सामाजिक एवं बौद्धिक विकास रुक जाता है। इस प्रकार शिक्षा में वंचित बच्चे राष्ट्र की प्रगति में बाधा बनते हैं। ये बच्चे अधिकतर गरीबी एवं मजबूरी में जीते हैं।

2. स्वास्थ्य पर बुरा प्रभाव- उद्योगों में अधिक समय तक तथा प्रतिदिन अधिक घण्टों तक कार्य करने के कारण स्वास्थ्य पर बुरा प्रभाव पड़ता है। इन बच्चों की वृद्धि रुक जाती है और उन्हें शारीरिक एवं मानसिक वृद्धि का अवसर ही नहीं मिल पाता है। उद्योगों में कार्य की दशाएँ स्वास्थ्यप्रद नहीं होती है। बाल श्रमिकों को मनोरंजन के जवसर नहीं मिल पाते हैं।

3. अधिनियम का पालन न होना- यद्यपि सरकार ने श्रम सन्नियों (श्रम कानून) को पारित करके समय-समय पर उसमें संशोधन कर बाल श्रम के शोषण पर प्रतिबन्ध लगाया है। यद्यपि इन श्रम कानूनों का पालन कठोरता से न होने के कारण बाल श्रमिकों के शाषण में कमी नहीं आयी है। इससे बाल श्रमिकों की दशा और भी दयनीय एवं शोचनीय हो गयी है। कारखाना अधिनियम के द्वारा निर्धारित कार्य के घण्टे, मध्यकालीन विश्राम, अवकाश आदि से इनको वंचित रखा जाता हैं।

4. अनिश्चित काम के घण्टे एवं कम मजदूरी- बाल श्रमिकों के काम करने के घण्टों वेतन तथा अवकाश के सम्बन्ध में कोई स्थिति नहीं है। अधिकतर बाल श्रमिकों से 12 से 14 घण्टे तक कार्य लिया जाता है। उन्हें कम मदद है। उन्हें व्यस्क मजदूरों की तुलना में आधी ही मजदूरी दी जाती है।

5. दोषपूर्ण दशाओं में काम करना-तमहप की सभी उद्योगों में अत्यन्त दयनीय दशाओं में कार्य करना पड़ता है। इससे वे शीघ्र ही रोगग्रस्त हो जाते हैं। बच्हें को अन्धकारपूर्ण गन्दे वातावरण एवं भीड़-भाड़ वाले स्थानों पर कार्य करना पड़ता है। उचित चिकित्सा के अभाव के कारण वे सदैव के लिए अपना स्वास्थ्य खराब कर लेते हैं। दिल्ली के लेदर उद्योग में आग लगने पर मरने वालों में बच्चे अधिक थे।

6. कम आयु में कार्य करना- बच्चों को कम आयु में ही काम पर लगा दिया जाता है तथा उनसे उनकी क्षमता से अधिक काम लिया जाता है। इससे उनका शारीरिक एवं मानसिक विकास रुक जाता है। गरीबी के कारण परिवार के निर्वाह के लिए मजदूरी करने की मजबूरी उन बच् को शिक्षा, खेलकूद एवं मनोरंजन के अवसरों से वंचित कर देती है। उनका शारीरिक एवं बौद्धिक विकास क जाता है। इससे उनके व्यक्तित्व के विकास में कठिनाई होती है तथा व्यस्क का उत्तरदायित्व के लिए उसे तैया होने में बाधा डालती है।

7. व्यक्तित्व के विकास में बाधा- उद्योगों में कार्य करने के कारण बच्चों के स्वास्थ्य में कमी, शिक्षा से वंचित रहना एवं अनिवार्य शिक्षा भी प्राप्त न कर पाना, धन को चिन्ता पड़ जाने से उनके विकास में बाधा उत्पन्न होती है। उद्योगों में गन्दे एवं बुरे परिवेश में रहने के कारण माल श्रमिकों का व्यक्तित्व अविकसित रह जाता है और उसे विकास का अवसर नहीं मिलता है। इस कारण वह कभी-कभी अपराधी प्रवृत्तियों में भी पड़ जाते हैं।

8. सरकारी नियमों का लाभ न मिलना- जब तक सरकार बाल श्रमिकों के लिए अलग से कोई कानून न बनाये तब तक उनको वेतन, अवकाश, काम करने के घण्टे आदि श्रम अधिनियों का लाभ नहीं मिल पद है। मालिक कानून की गिरफ्त में आये बिना उनका अधिक शोषण करते रहते हैं।

9. उत्पादन की मात्रा और गुण का ह्रास- कम उम्र में बालकों को कार्य पर लगाने से केवल अके स्वास्थ्य पर ही बुरा प्रभाव नहीं पड़ता अपितु देश की उत्पादन क्षमता को अधिक हानि होती है। इससे उत्पादन की मात्रा घटने लगती है एवं उत्पादित वस्तुएँ भी उतनी अच्छी नहीं होतीं जितनी कि व्यस्क बना सकते हैं।

10. झूठे एवं असत्य प्रमाण- पत्र कुछ उद्योगों में एक विशेष आयु से कम आयु के बच्चों को कार्य पर रखने पर निषेध है। उद्योगों पर फर्जी यह लिख दिया जाता है कि यहाँ 14 वर्ष से कम उम्र के बालकों के कार्य करने पर रोक है। किन्तु झूठे प्रमाण-पत्र तैयार कर जालसाजी की जाती है, जिसमें बच्चों के माता-पिता का पी सहयोग होता है।

8.8 बाल श्रमिकों की अवस्था में सुधार के राजकीय प्रयास

भारत में बाल-श्रमिकों की अवस्था में सुधार के लिए सरकार द्वारा अनेक प्रयत्न किये गये है। जो निम्न प्रकार है-

1. बाल-श्रम अनुबन्ध अधिनियम 1933 में यह नियम बनाया गया कि जिसके अन्तर्गत 15 वर्ष से कम आयु कें बच्चों का श्रम अनुबन्धित करना गैर कानूनी कर दिया।

2. खान अधिनियम 1952 के तहत खानों में रोजगार सम्बन्धी न्यूनतम आयु 15 वर्ष निर्धारित की गयी है।

3. बागान अधिनियम 1951 के तहत 12 वर्ष से कम आयु के बच्चों का कार्य पर रखना निषेध है।

4. संविधान के 24 वें अनुच्छेद के अनुसार 14 वर्ष से कम आयु के बच्चों को किसी भी कारखाने या खान में नौकर नहीं रखा जा सकता है।

8.9 महिला श्रम

महिलाएँ आर्थिक क्रियाओं में प्रारम्भ से ही भाग लेती रही है। भारतीय अर्थव्यवस्था में महिलाओं का योगदान किसी-न-किसी रूप में अवश्य रहा है। महिलाएँ उत्पादन क्रियाएँ जैसे- कृषि, हाथ के काम, पशुचलन तथा घरेलु कार्यों में पुरुषों की सहायता करती थीं। औद्योगीकरण के कारण स्त्रियों की शिक्षा व बड़े पैमाने पर उत्पादन प्रारम्भ होने से महिलाओं ने उद्योगों में रोजगार प्राप्त करने के प्रयास किये हैं और आवश्यकता पड़ने पर महिलाएँ पुरुषों की तरह सभी कार्य कर सकती हैं। पूर्व राष्ट्रपति वी. बी. गिरि के अनुसार, 'यदि उद्योगों में काम करने वाली स्त्रियों की संख्या कम है तो इसका कारण यह नहीं है कि भारत की महिलाएँ उद्योगों में काम करना नहीं चाहती है चल्कि इसका कारण है कि देश में औद्योगीकरण में अभी अधिक प्रगति नहीं हुई है। अभी भी लाखों पुरुपों को रोजगार की आवश्यकता है। महिलाओं में भी श्रम शक्ति अधिक पायी जाती है और उनमें कार्य करने को इच्छा एवं कुशलता दोनों ही विद्यमान है।'

8.10 महिला श्रमिकों की समस्याएँ

प्रायः सभी देशों में महिलाओं द्वारा आर्थिक क्रियाओं में सक्रिय भूमिका निभाई जाती है। विकासशील देशों एवं अल्प विकसित देशों में आय का स्तर बहुत ही निम्न है। जिसके परिणामस्वरूप अतिरिक्त आय कमाने वालों की आवश्यकता होती है। कारखाना अधिनियम के अन्तर्गत आने वाले बड़े-बड़े उद्योगों में भी कार्य अत्यन्त शोचनीय है और इसका प्रभाव महिलाओं के स्वास्थ्य पर पड़ता है। महिलाओं को श्रमिक के में कार्य कराने वाले उद्योगों एवं कारखानों में अनेक समस्याएँ है। जो निम्नलिखित है-

1. कम मजदूरी- महिला श्रमिकों को पुरुषों की तुलना में समान कार्य करने पर भी वेतन दिया जाता है। जबकि भारतीय संविधान को धारा 39 (द) के अनुसार समान कार्य के लिए महिलाओं पुरुषों को समान मजदूरी दी जानी चाहिए, किन्तु महिलाओं को कम ही वेतन दिया जाता है।

2. कार्य शक्ति में कमी- महिलाओं की शारीरिक कार्यक्षमता पुरुषों की में कम होती है। जिसके कारण उनकी उत्पादक शक्ति भी कम पायी जाती है। इस कारण उन्हें कम बदरी दी जाती है।

3. संगठन का अभाव- विभिन्न उद्योगों एवं कारखानों में पुरुषों की तरह वियों में श्रमिक संघ न होने के कारण उनमें मोल-भाव करने की शक्ति का अभाव पाया जाता है। इस कारण संलाओं को निम्न वेतन दिया जाता है।

4. बेरोजगारी- बेरोजगारी एक सबसे गम्भीर समस्या है। 1948 में न्यूनतम हुरों अधिनियम लागू हुआ इसके अनुसार समान कार्य के लिए समान वेतन लागू हुआ और न्यूनतम इधिनियम लागू किया गया। जिसके अनुसार उन्हें भी पुरुषों के समान मजदूरी दी जानी चाहिए। इसके काराण संताओं को कार्य मिलने में समस्या प्रारम्भ हो गयी। बेरोजगारी के कारण महिलाओं को उन कार्यों पर रखा गया प्रशिक्षण की आवश्यकता नहीं होती है। भारत में महिलाएँ अधिक अशिक्षित है।

5. मातृत्व काल की समस्या- मातृत्व काल के समय में महिलाएँ कठोर श्रम नहीं कर सकती हैं तथा प्रसव के दौरान लगभग दो माह तक महिलाएँ कोई भी कठोर कार्य बनने में असमर्थ होती हैं। इसके साथ ही उस समय में उनका स्वास्थ्य भी खराब हो जाता है तथा इलाज एवं वास्थ्य के लिए उन्हें अधिक धन की आवश्यकता होती है। भारत के संगठित उद्योगों में यह सहायता उपलब्ध देश के एक विशाल क्षेत्र में महिलाएँ इस सुविधा से वंचित है।

6. श्रम परिवर्तन एवं अनुपस्थिति- महिलाओं में यह देष पुरुषों की तुलना में अधिक पाया जाता है। जिसका मुख्य कारण बीमारी पारिवारिक उत्तरदायित्व एवं पसव गादे है। विवाह के पश्चात् लड़कियाँ काम छोड़कर या तो अपनी ससुराल चली जाती है या अन्य स्थान पर कार्य करने लगती है जो उनके पास होता है। पारिवारिक कलह आदि के कारण उनकी अनुपस्थिति को दर भी पुरुषों घे अपेक्षा अधिक होती है।

7. प्रशिक्षण का अभाव- महिलाओं में शिक्षा एवं प्रशिक्षण का अभाव एया जाता है। जिससे उन्हें पुरुषों की अपेक्षा कम मजदूरी प्राप्त होती है।

8. स्वास्थ्य की समस्या- महिलाओं का स्वास्थ्य भी एक गम्भीर समस्या है। उद्योगों में काम एवं घर के संचालन का कार्य अक्सर दोनों कार्य महिला श्रमिकों को एक साथ करने पड़ते है। इस दोहरी मेहनत से महिलाओं का स्वास्थ्य खराब हो जाता है और वे शारीरिक रूप से कमजोर हो जाती हैं।

9. पारिवारिक उत्तरदायित्व- महिलाओं का प्रमुख कार्य बच्चों का ब्लन-पोषण करना एवं परिवार का संचालन करना है। महिला श्रमिकों के बच्चे तथा परिवार बहुधा उपेक्षित हो।

10. दुव्र्यवहार- भारतीय उद्योग एवं कारखानों में महिला श्रमिकों के साथ आदर या सम्मान का व्यवहन नहीं किया जाता है। बल्कि उन्हें बुरी तरह से डाँट फटकार से काम लिया जाता है। मध्यस्थों द्वारा उनको तरह-तरह से मजबूर करके कुमार्ग पर ले जाने का प्रयास किया जाता है। महिला श्रमिकों की मजबूरी एवं लाचारी का लाभ उठाकर उनसे अधिक काम लेकर उन्हें कम मजदूरी दी जाती है।

8.11 महिला श्रमिकों की सुरक्षा के लिए राजकीय प्रयास

भारत में महिलाओं की सुविधा के लिए निम्न प्रयास किये गये है-

1. कार्य के घण्टे निश्चित- कारखाना अधिनियम 1948, 1952 और बागान श्रम अधिनियम 1951 के अनुसार महिला श्रमिकों को शाम 7 बसे से प्रातः काल 6 बजे तक काम पर नहीं लगाया जा सकता। कारखाना अधिनियम के अनुसार महिला श्रमिकों के कार्य की समय सीमा 48 घण्टे प्रति सप्ताह और बागानों में 55 पटे प्रति सप्ताह रखी गयी है। अधिनियम के अनुसार 5 घण्टे कार्य करने के पश्चात् उन्हें आधे घण्टे का विग्राम (अवकाश) की व्यवस्था की गयी है। महिला श्रमिकों को खानों के अन्दर जमीन के नीचे कार्य करने की मनाही (निषेध) है।

2. स्वास्थ्य और सुरक्षा- बोझा उठाने के लिए महिला श्रमिकों के लिए देश के सभी राज्यों में एक सीमा निर्धारित कर दी गयी है। प्रौढ़ स्त्रियों के लिए 30 किलो, वयस्क स्त्रियों को 31 किलोग्राम तथा बालिकाओं के लिए 12 किलोग्राम तक वजन उठाने की अनुमति है। इससे अधिक वजन उठाने के लिए उन्हें बाध्य न किया जाय।

3. मातृत्व लाभ- विभिन्न राज्यों ने अपने क्षेत्र के उद्योगों में कार्य करने वाली महिला श्रमिकों को गर्भधारण के समय से अनेक सुविधाएँ प्रदान करने के लिए अधिनियम बनाए हैं। (1) श्रमिक क्षतिपूर्ति अधिनियम (2) कर्मचारी राज्य बीमा अधिनियम 1948, (3) मातृत्व लाभ अवकाश, (4) मृत्यु सहायता कोष, (5) परिवार पेंशन योजना (6) कोयला खान भविष्य निधि एवं विधि व्यवस्था अधिनियम, (7) जमा सम्बद्ध बोमा योजना, (8) सामाजिक सुरक्षा प्रमाण पत्र, (9) व्यक्तिगत दुर्घटना बोमा योजना, (10) बेरोजगारी भत्ता, (11) अनुग्रह भुगतान संशोधित अधिनियम, (12) विक्रय संवर्द्धन सेवा शर्ते अधिनियम।

4. श्रम कल्याण- राज्यों की सरकारों ने अपने-अपने राज्यों में एक औद्योगिक नगरों में मातृत्व एवं शिशु कल्याण केन्द्र खोले गये हैं। जहाँ महिला श्रमिकों की चिकित्सा, मनोरंजन और प्रशिक्षण आदि की व्यवस्था होती है।

5. कठोर एवं हानिप्रद कार्यों पर प्रतिबन्ध- कारखाना अधिनियम 1948 में महिला श्रमिकों को कठिन एवं जोखिम वाले कार्यों पर नहीं लगाया जा सकता। महिला श्रमिकों को ऐसे भारी कार्यों पर नहीं लगाया जा एकता जिसके कारण उनके स्वास्थ्य, सुरक्षा एवं जीवन पर बुरा प्रभाव पड़ता है।

6. स्नान गृह एवं शौचालय की व्यवस्था- कारखानों, खानों, बागानों आदि में यह प्रावधान किया गया है कि ये महिला श्रमिकों के लिए शौचालय, स्नानागार, विश्राम घर आदि की व्यवस्था करें जिससे महिला श्रमिकों को कोई असुविधा न हो सके।

7. खतरनाक कार्यों पर प्रतिबन्ध- कारखाना अधिनियम 1948 में महिला श्रमिकों को जोखिम वाले कार्यों पर नहीं लगाया जा सकता। ऐसी खानों में भी कार्यों पर नहीं लगाया जा सकता जहाँ उनके स्वास्थ्य, सुरक्षा और जीवन पर बुरा प्रभाव पड़ता है।

8. शिशु गृह की व्यवस्था- कारखाना अधिनियम 1948 के अनुसार जिन उद्योगों में 50 या इससे अधिक महिलाएँ कार्य करती हैं, वहाँ पर एक शिशु गृह होना आवश्यक है। खादानों एवं खानों में भी शिशु गृह का होना आवश्यक है।

श्रम मन्त्रालय भारत सरकार द्वारा 'महिला श्रम प्रकोष्ठ' नामक महिला सेल महिला श्रमिकों तथा महिलाओं के लिए उपलब्ध रोजगार के अवसरों के बारे में सूचना एकत्र करता है तथा महिला श्रमिकों के कल्याणार्थ नीतियाँ बनाता है। इसका मुख्य उद्देश्य में रोजगार के अवसरों के मामलों में महिलाओं के प्रति भेदभाव को रोकना तथा महिला श्रमिकों को समान पारिश्रमिक का भुगतान कराना है। यह महिला सेल महिला श्रमिकों के हितों की रक्षा करता है।

8.12 श्रम कल्याण का अर्थ एवं परिभाषा

श्रम कल्याण का अर्थ विभिन्न व्यक्तियों द्वारा विभिन्न अर्थों में लगाया जाता है, यद्यपि इसकी महत्ता एवं उद्देश्य विभिन्न देशों में समान है। आर्थर जेक्स टार्ड ने उपयुक्त ही लिखा है, कल्याण कार्य के समप्रेरकों एवं योग्यताओं के विषय में तीव्र भिन्नता वाले विचारों की एक श्रृंखला पायी जाती है। इस विविधता को उपयुक्त ठहराते हुए शाही आयोग ने लिखा है, श्रम कल्याण एक ऐसा शब्द है, जो बहुत ही लचीला है। इसका अर्थ एक देश में दूसरे देश की तुलना में उसकी विभिन्न सामाजिक नौतियों, औद्योगीकरण की स्थिति व श्रमिकों की शिक्षा

सम्बन्धी प्रगति के अनुसार भिन्न-भिन्न लगाया जाता है।ष् राष्ट्रीय श्रम आयोग 1969 के विचार में भी, 'श्रम कल्याण का विचार आवश्यक रूप से प्रगतिशील है, जिसका अर्थ देश में समय-समय पर यहाँ तक कि एक देश में ही उसके मूल्यांकन, सामाजिक संस्थाओं, औद्योगीकरण की मात्रा व सामाजिक तथा आर्थिक विकास के स्तर से भिन्न-भिन्न होता है।' इस प्रकार श्रम कल्याण को एक निश्चित सीमा के अन्दर बाँधना असम्भव तो नहीं, कठिन अवश्य ही है, क्योंकि इसका अर्थ बहुत लचीला है। फिर भी व्यवस्थित अध्ययन के लिए निम्न परिभाषाओं को दिया जा सकता है-

(1) कु. ई. टी. कैली के अनुसार, 'श्रम कल्याण से तात्पर्य किसी फर्म द्वारा श्रमिकों के व्यवहार और कार्य के लिए कुछ नियमों को अपनाया जाता है।'

(2) सर एडवर्ड पेंटन के अनुसार, 'श्रम कल्याण का अर्थ श्रमिकों को सुख, स्वास्थ्य और समृद्धि के लिए उपलब्ध की जाने वाली दशाओं से है।'

(3) अन्तर्राष्ट्रीय श्रम संघ के अनुसार, 'श्रम कल्याण से आशय ऐसी सेवाओं और सुविधाओं से समझना चाहिए जो कारखाने के अन्दर या निकटवर्ती स्थानों में स्थापित की गयी हों, ताकि उनमें काम करने वाले श्रमिक स्वस्थ और शक्तिपूर्ण परिस्थितियों में अपना कार्य कर सकें और अपने स्वास्थ्य तथा नैतिक स्तर को ऊँचा उठाने वाली सुविधाओं का लाभ उठा सकें।'

8.13 श्रम कल्याण का महत्व भारत में श्रम कल्याण अथवा भारत में श्रम कल्याण कार्य की आवश्यकता

प्राचीन भारत में जब श्रमिक एवं कारीगर, पूँजीपति व सब कुछ था, कल्याणकारी कार्यों की कोई महत्ता हीं थी। पर आज जबकि श्रमिक केदल मजदूरी कमाने वाले के रूप में रह गया है और जब यहाँ के श्रमिक नौद्योगिक आजीविका को एक आवश्यक बुराई मानकर सदैव इससे छुटकारा पाने के लिए प्रयास कर रहा है. बम कल्याण कार्य बहुत ही महत्वपूर्ण व आवश्यक हो गया है। श्रम कल्याण श्रमिकों के माध्यम से हम न केवल श्रमिकों के मानवीय जीवन के लिए उचित एवं आवश्यक सुख-सुविधाएँ जुटा सकते हैं, बल्कि उनमें नागरिक त्तरदायित्व की भावना भी विकसित कर सकते हैं।

भारतीय परिस्थितियों के सन्दर्भ में श्रम कल्याण कार्यों का विशेष महत्व है, जिसको निम्न तथ्यों के आधार पर समझा जा सकता है-

(1) औद्योगिक शान्ति- श्रम कल्याण औद्योगिक कल्याण को व्यवस्था में हायक होते हैं, क्योंकि जब श्रमिकों को इस बात का अनुभव होने लगता है कि वे सेवायोजक और राज्य उनके कल्याण के लिए अनेक योजनाएँ

क्रियान्वित कर रहे हैं तो उनके मन में एक स्वस्थ भावना पैदा हो जाती है, जो औद्योगिक सम्बन्धों को मधुर बनाये रखती है।

(2) श्रमिक के उत्तरदायित्व में वृद्धि- श्रम कल्याण के कार्य की व्यवस्था से श्रमिकों को यह अनुभव होने लगता है कि वे उद्योग के एक हिस्सेदार हैं, इसलिए वे उस संस्था के कार्य में विशेष रुचि लेने लगते हैं।

(3) कुशलता में वृद्धि- कल्याण कार्य से श्रमिकों की कार्यक्षमता में वृद्धि होती है, क्योंकि अनेक प्रकार से उनका मानसिक और बौद्धिक विकास होता है तथा उनकी कई परेशानियाँ दूर हो जाती हैं।

(4) कल्याण कार्यों का सामाजिक महत्व- श्रम कल्याण कार्यों के द्वारा सामाजिक लाभ भी होते हैं, जैसे कैंटीन की व्यवस्था, जहाँ श्रमिकों को स्वच्छ और सन्तुलित भोजन मिल सकता है, श्रमिकों के स्वास्थ्य में सुधार करती है। स्वस्थ मनोरंजन के द्वारा उनकी बुरी आदतें, जैसे- मदिरापान, जुआ, खेलना आदि दूर हो जाती हैं तथा उनमें स्वस्थ आदर्श चारित्रिक विकास होता है।

(5) श्रमिकों की समस्याओं का निवारण- भारतीय श्रमिकों की प्रवासी प्रवृत्ति का मूल कारण यह है कि उन्हें शहरों में अनेक असुविधाओं का सामना करना पड़ता हैय जैसे-बुरी आवास व्यवस्था, खुले वातावरण का अभाव व खाने-पीने का कष्ट आदि। श्रम कल्याण कार्यों के - फलस्वरूप श्रमिकों के रहने के लिए मकान, स्वास्थ्यप्रद सस्ता भोजन तथा बीमारी में दवा मिल सकेगी और - सपरिवार खुशी से रह सकेंगे।

(6) सेवाओं को आकर्षक बनाना- जिस औद्योगिक संस्था में कल्याण कार्य की योजना लागू होती है, वहाँ की सेवाएँ अपेक्षाकृत अधिक आकर्षक हो जाती हैं और अधिकांश श्रमिक वही कार्य करना पसन्द करते हैं। इससे स्थायो श्रम शक्ति को वृद्धि होती है।

(7) शक्तिशाली श्रम संगठन के लिए- पश्चिमी देशों में श्रम संघों का संगठन अत्यन्त दृढ़ और विकसित है। यही कारण है कि पाश्चात्य श्रमिक संघ अपने श्रमिकों के लिए श्रम कल्याण की पर्याप्त सुविधाएँ प्रदान करते हैं, परन्तु भारत के श्रमिक न तो संगठित हैं और न उनके श्रम संघों की वित्तीय स्थिति ही सन्तोषजनक है। अतः ऐसी परिस्थितियों में भारतीय श्रमिकों के लिए उचित जीवन-स्तर के लिए श्रम कल्याण कार्यों का करना आवश्यक है।

(8) श्रमिकों को शिक्षित करने के लिए- भारत के अधिकांश श्रमिक अशिक्षित हैं और अपनी स्थिति तथा अधिकारों के प्रति जागरूक नहीं हैं। श्रम कल्याण कार्य के अन्तर्गत श्रमिकों को जो शिक्षा मिलेगी उससे उनकी पारिवारिक और आर्थिक समस्याओं का समाधान सरल होगा जो कि प्रजातान्त्रिक देश के लिए आवश्यक है।

(9) राष्ट्रीय समृद्धि- देश की आर्थिक व सामाजिक समस्याओं के समाधान के उद्देश्य से हमारी राष्ट्रीय सरकार ने पंचवर्षीय योजनाओं का कार्यक्रम अपनाया है। प्रत्येक योजना को सफलता कठोर श्रम पर निर्भर है। अतः श्रमिक ही हमारी योजना के आधार स्तम्भ हैं। श्रमिक उसी समय पूर्ण सहयोग और सद्भावना से कार्य करेंगे, जब वे समझ लेंगे कि उद्यर्योगपति और सरकार दोनों ही उनके वर्तमान या भावी जीवन को उन्नत बनाने में क्रियाशील हैं।

(10) श्रम कल्याण औद्योगिक प्रशासन का अंग- प्रगतिशील देशों में श्रम कल्याण को औद्योगिक प्रशासन का एक अंग स्वीकार किया गया है। अब श्रम कल्याण कार्यों का आयोजन करना उद्योगपति का उत्तरदायित्व बन गया है। इससे श्रमिक वर्ग में एक नवीन स्वाभिमान की भावना जाग्रत होती है।

उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट है कि भारत में श्रम कल्याण कार्यों का महत्व और आवश्यकता पाश्चात्य देशों की तुलना में कहीं अधिक है। श्रम कल्याण कार्यों के लाभों से प्रभावित होकर वस्त्र श्रम अनुसन्धान समिति कहा था- 'कार्यक्षमता का उन्नत स्तर केवल उसी समय हो सकता है, जबकि श्रमिक शारीरिक दृष्टि से स्वस्थ व मानसिक दृष्टि से सन्तुष्ट हो। इसका तात्पर्य यह है कि केवल वही श्रमिक कुशल हो सकते हैं जिनके लिए शिक्षा, आवास योजना तथा वस्त्र आदि का उचित प्रबन्ध हो।'

8.14 सारांश

महिला श्रमिकों तथा बाल श्रमिकों की स्थिति को यदि देखा जाय तो आज कुल श्रमिकों की संख्या में महिला एवं बाल श्रमिकों की संख्या जधिक है। महिलाएँ जहाँ घर एवं कारखानों (कार्यस्थल) दोनों ही स्थानों पर अपनी भूमिका एवं कार्यों का निर्वाहन कर रही हैं। वहीं खदानों तथा कारखानों में बढ़ती हुई अवैधानिक महिला श्रमिकों एवं बाल श्रमिकों को संख्या भी देश में चिन्ता का विषय बन रही है। अतः महिला एवं बाल श्रमिकों की खराब स्थिति के लिए तथा उनके कल्याण हेतु कोई भी ठोस कदम उठाना आवश्यक है।

8.15 संदर्भ ग्रन्थ सूची

1. डॉ. रविन्द्रनाथ मुकर्जी एवं डॉ. भारत अग्रवाल, औद्योगिक समाजशास्त्र

2. बघेल, डी एस, औद्योगिक समाजशास्त्र, विवेक प्रकाशन, जवाहर नगर दिल्ली

3. सक्सेना आर सी, श्रम समस्याएं एवं श्रम कल्याण, के नाथ एण्ड कम्पनी, मेरठ

8.16 निबंधात्मक

1. बाल श्रम का अर्थ एवं भारत में बाल श्रम को विस्तार से समझाइये।

2. बाल श्रमिकों की अवस्था में सुधार के राजकीय प्रयासों का वर्णन कीजिए।

3. महिला श्रमिकों की समस्याएँ एवं सरकार द्वारा किए जा रहे प्रयासों को विस्तार से समझाइये।

4. श्रम कल्याण से आप क्या समझते है? भारत में इसकी क्या आवश्यकता है?

इकाई -9 अनुसूचित जाति, अनुसूचित जनजातियाँ अन्य पिछड़ी जाति

Welfare of Scheduled Castes, Scheduled Tribes and Other Backward Classes

इकाई की रुपरेखा

9.1 प्रस्तावना

9.2 उद्देश्य

9.3 अनुसूचित जाति

9.4 अनुसूचित जातियों के लिए संवैधानिक प्रावधान

9.5 अनुसूचित जातियों के सशक्तिकरण के लिए उपाय

9.6 अनुसूचित जनजाति

9.7 अनुसूचित जनजातियों के लिए संवैधानिक प्रावधान

9.8 अन्य पिछड़ी जाति

9.9 अन्य पिछड़े वर्गों का कल्याण

9.10 सारांश

9.11 संदर्भ ग्रन्थ सूची

9.12 निबंधात्मक प्रश्न

9.1 प्रस्तावना

भारत एक कल्याणकारी राज्य है, जहाँ लागू की जाने वाली नीतियों और कार्यक्रमों का मुख्य उद्देश्य नागरिकों के विकास और समग्र कल्याण को बढ़ावा देना है, विशेष रूप से वंचित और हाशिए पर पड़े वर्गों के लिए। भारतीय संविधान की प्रस्तावना, राज्य नीति के निर्देशक सिद्धांत, मौलिक अधिकार तथा विशेष रूप से अनुच्छेद 38, 39 और 46 राज्य की अपने नागरिकों के प्रति प्रतिबद्धता को दर्शाते हैं। अनुसूचित जाति (SC), अनुसूचित जनजाति (ST) और अन्य पिछड़ा वर्ग (OBC) जैसे सामाजिक रूप से पिछड़े वर्गों को सामाजिक एवं आर्थिक उन्नति के लिए विशेष महत्व दिया गया है। सरकार ने इन समुदायों के तीव्र सामाजिक-आर्थिक विकास के लिए अनुकूल परिस्थितियाँ बनाने हेतु विभिन्न नीतियाँ और कल्याणकारी योजनाएँ तैयार कर उन्हें

लागू किया है। इन वर्गों के कल्याण के लिए धन आवंटन, सब्सिडी, रोजगार के अवसरों में आरक्षण, शैक्षणिक संस्थानों तथा प्रशिक्षण केंद्रों में विशेष प्रावधान जैसे लक्ष्य-आधारित कार्यक्रम संचालित किए जा रहे हैं।

9 .2 उद्देश्य

1. अनुसूचित जाति व इसके लिए संवैधानिक प्रावधान को जान पाएगें।

2. इस इकाई में अनुसूचित जातियों के सशक्तिकरण के लिए उपाय का अध्ययन कर पाएगें।

3. अनुसूचित जनजातियों के लिए संवैधानिक प्रावधान के बारें में विस्तार से चर्चा कर सकेंगे ।

4. इस इकाई में अन्य पिछड़ी जाति को जान पाएगें।

9.3 अनुसूचित जाति

'अनुसूचित जाति' शब्द उन जाति समूहों को संदर्भित करता है जो ऐतिहासिक रूप से भारतीय समाज की जाति व्यवस्था में सबसे निचले पायदान पर रहे हैं। सदियों तक अस्पृश्यता जैसी अमानवीय प्रथाओं के कारण ये समुदाय अत्यधिक सामाजिक उत्पीड़न, गरीबी और वंचना का सामना करते रहे, जो जाति व्यवस्था की सबसे क्रूर विशेषताओं में से एक मानी जाती है और जिसे कई विद्वान विश्व में नस्लवाद के सबसे कठोर रूपों में से एक मानते हैं। स्वतंत्रता आंदोलन के दौरान राष्ट्रीय नेताओं के लिए इन समुदायों की सामाजिक-आर्थिक स्थिति में सुधार एक गंभीर मानवीय और सामाजिक चिंता का विषय बन गया। स्वतंत्रता के बाद, संविधान ने अस्पृश्यता सहित सभी प्रकार के भेदभाव को समाप्त कर दिया तथा इन जातियों को 'अनुसूचित जाति' के रूप में संवैधानिक मान्यता प्रदान करते हुए उनके संरक्षण और उत्थान के लिए विशेष प्रावधान किए।

जाति व्यवस्था भारतीय समाज की एक प्रमुख और विशिष्ट विशेषता रही है। यह शुद्धता और प्रदूषण की अवधारणा पर आधारित समाज के पदानुक्रमित विभाजन को दर्शाती है, जिसे धार्मिक मान्यताओं, प्रतिबंधों और विचारधाराओं के माध्यम से वैधता प्रदान की गई है। वास्तव में, जाति व्यवस्था सामाजिक समूहों अथवा जातियों के बीच संरचित असमानता की एक प्रणाली है, जिसमें व्यक्तियों को जन्म के आधार पर उच्च या निम्न सामाजिक दर्जा प्राप्त होता है। इस व्यवस्था में 'जाति' उसकी मूल इकाई या आधारभूत घटक होती है।

प्राचीन भारत में समाज को प्रारंभ में चार वर्णों—ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र—में विभाजित किया गया था। कालांतर में यह वर्ण-विभाजन जन्म-आधारित एक पदानुक्रमित सामाजिक संरचना में परिवर्तित हो गया। ज्ञान और धार्मिक कार्यों से जुड़े ब्राह्मणों को इस पदानुक्रम में सर्वोच्च स्थान प्राप्त था। उनके बाद क्षत्रिय वर्ग आता था, जो शासन व्यवस्था तथा समाज की रक्षा का कार्य करता था। तीसरे स्थान पर वैश्य थे, जिनकी भूमिका कृषि, व्यापार और आर्थिक गतिविधियों से संबंधित थी। शूद्रों को सबसे निम्न स्थान दिया गया और वे प्रायः खेतिहर मजदूर या दास के रूप में कार्य करते थे; इनमें कारीगर, शिल्पकार, कलाकार, नर्तक और संगीतकार भी सम्मिलित थे। समय के साथ इस वर्ण-आधारित पदानुक्रम की गतिशीलता से अनेक जातियों का विकास

हुआ, जो आगे चलकर हजारों जातियों के एक जटिल पदानुक्रम में परिवर्तित हो गई। यद्यपि ऐतिहासिक रूप से भारतीय समाज में वास्तविक सामाजिक इकाई जाति रही है, न कि वर्ण, फिर भी जाति व्यवस्था की विशिष्टताओं और जटिलताओं को समझने तथा उन्हें पदानुक्रमित रूप में विश्लेषित करने के लिए विद्वानों द्वारा वर्ण-व्यवस्था का उपयोग एक वैचारिक ढाँचे के रूप में किया गया है।

9.4 अनुसूचित जातियों के लिए संवैधानिक प्रावधान

संविधान अनुसूचित जातियों के हितों के लिए सुरक्षा प्रदान करता है। प्रमुख प्रावधान इस प्रकार है:

राज्य के नीति निर्देशक सिद्धांत

संविधान में, राज्य नीति के निर्देशक सिद्धांतों के तहत अनुच्छेद 46 व्यापक रूप से विकासात्मक और नियामक दोनों तरह के निर्देशों का पालन करता है। इसमें लिखा है. "राज्य लोगों के कमजोर वर्गों और विशेष रूप से अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों के शैक्षिक और आर्थिक हितों को विशेष सावधनी के साथ बढ़ावा देगा, और उन्हें सामाजिक अन्याय और सभी प्रकार के शोषण से बचाएगा।

सामाजिक सुरक्षा उपाय

1- संविधान का अनुच्छेद 17 अस्पृश्यता का पूर्ण रूप से उन्मूलन करता है तथा किसी भी रूप में इसके अभ्यास को निषिद्ध घोषित करता है।

2- अनुच्छेद 23 मानव तस्करी, जबरन श्रम तथा 'बेगार' पर प्रतिबंध लगाता है। बंधुआ मजदूरी जबरन श्रम का सबसे गंभीर रूप मानी जाती है, और इसके शिकार अधिकांशतः अनुसूचित जातियों से संबंधित होते हैं।

3- अनुच्छेद 25(2)(ख) अनुसूचित जातियों को सभी संप्रदायों के मंदिरों में प्रवेश का अधिकार प्रदान करता है।

4- अनुच्छेद 15(ए) दुकानों, भोजनालयों, सार्वजनिक जलस्रोतों, स्नान घाटों, सड़कों तथा अन्य सार्वजनिक स्थलों तक पहुँच के संबंध में किसी भी प्रकार के भेदभाव, प्रतिबंध या शर्त को समाप्त करने का प्रावधान करता है।

शैक्षिक सुरक्षा उपाय

1- अनुच्छेद 15(4) अनुसूचित जातियों की शैक्षिक उन्नति को बढ़ावा देने के लिए शैक्षणिक संस्थानों में सीटों के आरक्षण, छात्रवृत्तियों तथा अन्य विशेष प्रावधानों की अनुमति देता है।

2- अनुच्छेद 29(2) सामान्य रूप से यह सुनिश्चित करता है कि राज्य द्वारा संचालित या राज्य निधियों से सहायता प्राप्त शैक्षणिक संस्थानों तक सभी नागरिकों की समान पहुँच बनी रहे और इस संबंध में किसी भी प्रकार का भेदभाव न किया जाए।

आर्थिक सुरक्षा उपाय

संविधान राज्य को अनुसूचित जातियों के आर्थिक हितों को विशेष सावधानी के साथ बढ़ावा देने और सामाजिक अन्याय और सभी प्रकार के शोषण से बचाने का आदेश देता है।

राजनीतिक सुरक्षा उपाय

संविधान के अनुच्छेद 330, 332 और 334 लोकसभा तथा राज्य विधानसभाओं में अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति के लिए विशेष प्रतिनिधित्व का प्रावधान करते हैं। प्रारंभ में राजनीतिक आरक्षण की यह व्यवस्था दस वर्षों की अवधि के लिए निर्धारित की गई थी, किंतु समय-समय पर इसकी अवधि को प्रत्येक दस वर्ष के अंतराल पर बढ़ाया जाता रहा है।

सेवा सुरक्षा उपाय

अनुच्छेद 16(4) पिछड़े वर्गों के व्यक्तियों के पक्ष में सेवाओं में आरक्षण प्रदान करता है जिनका उनमें अपर्याप्त प्रतिनिधित्व उनमें अपर्याप्त है। यह ध्यान दिया जा सकता है कि पिछडा वर्ग संविधान में अपनाया गया एक सामान्य शब्द है, जिसमें एससी और एसटी भी शामिल हैं। अनुच्छेद 335 में प्रावधान है कि सरकारी सेवाओं और पदों पर नियुक्तियां करने में अनुसूचित जातियों (अनुसूचित जनजातियों पर भी लागू) के सदस्यों के दावों को लगातार प्रशासन की दक्षता बनाए रखने के साथ ध्यान में रखा जाएगा।

अन्य सुरक्षा उपाय

संविधान के अनुच्छेद 338 में कहा गया है कि "अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति के लिए राष्ट्रपति द्वारा नियुक्त किया जाने वाला एक विशेष अधिकारी होगा। इसके अनुसरण में, केंद्र सरकार द्वारा अनुसूचित जाति और अनुसूचितजनजाति के लिए एक आयुक्त नियुक्त किया जाना आवश्यक है। आयुक्त संविधान के तहत उनके लिए प्रदान किए गए सुरक्षा उपायों से संबंधित सभी मामलों की जांच करता है।

9.5 अनुसूचित जातियों के सशक्तिकरण के लिए उपाय

अनुसूचित जाति अपने सामाजिक-आर्थिक पिछडेपन के कारण बाकी समाज से पिछड़ गई है। इसलिए उनका आर्थिक, सामाजिक और राजनीतिक सशक्तिकरण देश के विकास एजेंडे पर प्राथमिकता बना हुआ है। ये कुल आबादी का एक बढ़ा हिस्सा बनाते हैं. यानी 20,13,78,086 करोड़ या 16.6 प्रतिशत (जनगणना 2011)। अनुसूचित जाति की कुल आबादी में से 18.5 प्रतिशत ग्रामीण क्षेत्रों में रहते हैं। अकेले उत्तर प्रदेश में भारत की कुल अनुसूचित जाति आबादी का 20 प्रतिशत से अधिक है।

सामाजिक न्याय और अधिकारिता मंत्रालय, भारत सरकार, अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों के हितों की देखरेख करने के लिए नोडल मंत्रालय है। यह शैक्षिक, आर्थिक और सामाजिक सशक्तिकरण के प्रयासों को पूरा करने के लिए कार्यक्रमों को लागू करने के अलावा अनुसूचित जातियों के हितों के संरक्षण और संवर्धन के लिए राज्यकेंद्र शासित प्रदेश की सरकारों और अन्य केंद्रीय मंत्रालयों द्वारा की गई कार्रवाई की निगरानी करता है। कुछ विकासात्मक योजनाएँ नीचे दी गई हैं।

शैक्षिक विकास

अनुसूचित जाति के छात्रों के लिए मैट्रिकोत्तर छात्रवृत्ति (पीएमएस) अनुसूचित जातियों के बीच उच्च शिक्षा को बढ़ावा देने के लिए देश में अपनी तरह की सबसे बड़ी शैक्षिक योजना है। अन्य योजनाओं में अस्वच्छ व्यवसायों के काम करने वाले लोगो के बच्चों के लिए प्री-मैट्रिक छात्रवृत्ति, अनुसूचित जाति के लड़कों और लड़कियों के लिए छात्रावास बुक बैंक, मेरिट का उन्नयन और अनुसूचित जाति के छात्रों के लिए कोचिग और संबद्ध योजनाएं हैं। इसके अलावा, कमजोर वर्गो के मेधावी विद्यार्थियों को उच्चतर अध्ययन करने के लिए पहचानने, बढ़ावा देने और सहायता प्रदान करने के लिए वर्ष 2002-03 से मेधवी अनुसूचित जाति/नुसूचित जनजाति के छात्रों के लिए डॉ. अम्बेडकर राष्ट्रीय छात्रवृत्ति शुरु की गई है।

आर्थिक विकास

राष्ट्रीय अनुसूचित जाति वित्त एवं विकास निगम (एनएसएफडीसी) और राष्ट्रय सफाइ कर्मचारी वित्त एवं विकास निगम (एनएसएफडीसी) तथा राज्य अनुसूचित जाति विकास निगम अनुसूचित जातियों से संबंधित के लिए क्रमशः राष्ट्रीय और राज्य स्तर पर महत्वपूर्ण भूमिका निभा रहे हैं।

इसके अलावा, अनुसूचित जातियों के लिए अन्य महत्वपूर्ण आर्थिक विकास योजनाए निम्नलिखित है

अनुसूचित जातियों के लिए ऋण वृदधि गारटी योजना (सीईजीएसएससी)

अनुसूचित जाति उप-योजना के लिए विशेष केंद्रीय सहायता (एससीएसपी को एससीए)

अनुसूचित जाति विकास निगमों (एससीएसपी को सहायता की योजना मैला ढोने वालों के पुन वीस के लिए स्वररोजगना (एसआरएमएस)

सुरक्षात्मक उपाय

नागरिक अधिकारों का संरक्षण अधिनियम 1955 और अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति (अत्याचार निवारण) अधिनियम 1989 अस्पृश्यता को समाप्त करने और अनुसूचित जाति पर अत्याचार को रोकने के लिए उठाए गए विधायी उपाय हैं। मैला ढोने वालों के रोजगार का निषेध और उनका पुनर्वास अधिनियम, 2013 अस्वच्छ शौचालयों और मैला ढोने की प्रथा को खत्म करने और वैकल्पिक व्यवसायों में मैला ढोने वालों का पुनर्वास करने के लिए एक कड़ा कानून है जो सरकार की उच्च प्राथमिकता वाले क्षेत्र रहे है। इसके अलावा,

सरकार ने सामान्य रूप से अनुसूचित जाति और विशेष रूप से मैला ढोने वालों के हितों की रक्षा के लिए निम्नलिखित विशेष कल्याणकारी उपाय किए है और विशेष एजेंसियों का गठन किया है।

9.6 अनुसूचित जनजाति

जनजाति, जिसे भारत में एनिमिस्ट आदिवासी और आदिवासी भी कहा जाता है. को पहाड़ियों और जंगलों में रहने वाले अर्ध-सभ्य लोगों के रूप में माना जाता है या कृषकों के एक विशेष समूह के रूप में माना जाता है। जनजाति लोगों का एक क्षेत्रीय समूह है, जिनकी अपनी भाषा, धर्म, संस्कृति और एकीकृत सामाजिक संगठन है। इसमें आमतौर पर कई सिब, बैड, गांव या अन्य विशेष समूह शामिल होते हैं।

आदिवासियों को भारत का मूल निवासी माना जाता है, जो विदेशी समुदायों के आक्रमणों और अधिक शक्तिशाली पड़ोसी समुदायों के लगातार दबाव के कारण जंगलों, पहाडियों और अन्य दुर्गम क्षेत्रों में ले जाया गया था। अलग-थलग अस्तित्व में उन्होंने अपनी विशिष्ट संस्कृति परंपराओं, भाषाओं और प्रशासनिक संरचना का विकास किया। जबकि उनमें से कुछ बसे हुए कृषक हैं. कई अन्य अभी भी झूम खेती, शिकार, भोजन एकत्र करने आदि पर निर्भर रहें।

भारत सरकार अधिनियम 1935 ने आदिवासियों द्वारा बसाए गए अधिकांश क्षेत्रों को बहिष्कृत या आंशिक रूप से बहिष्कृत क्षेत्र घोषित किया था। स्वतंत्रता के बाद, ऐसे क्षेत्रों का नाम बदलकर अनुसूचित क्षेत्र कर दिया गया और उन्हें संविधान की अनुसूची V और VI में शामिल किया गया। अनुसूचित जनजाति के रूप में गान्यता के लिए आवश्यक विशेषताएं आदिम लक्षण, भौगोलिक अलगाव, विशिष्ट संस्कृति, बाहरी लोगों के संपर्क में शर्म और आर्थिक पिछड़ापन हैं।

'अनुसूचित जनजाति मुख्य रूप से एक प्रशासनिक और संवैधानिक शब्द है जो संविधान के अनुच्छेद 342 के तहत सूचीबद्ध एक आदिवासी समुदाय को संदर्भित करता है। यह अनुसूचित जनजाति के रूप में 'जनजाति" को निर्दिष्ट करने के लिए अपनाए जाने वाले सिद्धांतों या नीतियों के बारे में मौन है। अनुच्छेद 342 में कहा गया है. "राष्ट्रपति, किसी भी राज्य या केंद्र शासित प्रदेश के संबंध में और जहां यह एक राज्य है, वहां के राज्यपाल से परामर्श के बाद, सार्वजनिक अधिसूचना द्वारा जनजातियों या जनजातीय समुदायों या उनके भीतर के हिस्सों या समूहों को निर्दिष्ट कर सकता है। जनजातियों या जनजातीय समुदायों. जो, इस संविधान के प्रयोजन के लिए, उस राज्य या केंद्र शासित प्रदेश के संबंध में अनुसूचित जनजातियों के रूप में समझी जाएगी,

अनुसूचित जनजातियों के रूप में जनजातियों की पहचान में कठिनाइयों के बावजूद. भारत में नीति निर्माताओं, योजनाकारों और प्रशासकों के बीच जनजातीय समुदायों के अत्यधिक सामाजिक, शैक्षिक और आर्थिक पिछडेपन के बारे में पूरी जागरूकता रही है। लेकिन ऐसे जनजातीय समुदायों को उनकी वृद्धि और विकास के लिए आवश्यक देखभाल और सुरक्षा के रूप में पहले से ही सूचीबद्ध करने के लिए आवश्यक किसी भी सुरक्षात्मक और सुधारात्मक उपायों की शुरूआत। उनके पहले 1931 में आदिम जनजातियों के नाम से सूची तैयार की गई थी। इसके बाद, भारत सरकार अधिनियम, 1935 के तहत, भारत के प्रांतों के लिए "पिछड़ी

जनजातियों की एक सूची निर्दिष्ट की गई थी। वास्तव में, संविधान (अनुसूचित जनजाति) आदेश 1950 के तहत निर्दिष्ट जनजातियों की सूची 1935 के अधिनियम के तहत पिछड़ी जनजाति" की सूची में जोड़ कर तैयार की गई थी।

अनुसूचित जनजाति के रूप में अर्हता प्राप्त करने वाली जनजातियों की पहचान करने के लिए, अनुसूचित जनजाति आयोग ने अपनी प्रश्नावली की प्रस्तावना में देखा है.

"अनुसूचित जनजातियों को आम तौर पर इस तथ्य से भी पता लगाया जा सकता है कि वे पहाड़ियों में अलग रहते हैं और यहां तक कि जहां वे मैदानों में रहते हैं, ये एक अलग और बहिष्कृत अस्तित्व का नेतृत्व करते हैं और लोगों के मुख्य निकाय में पूरी तरह से आत्मसात नहीं होते हैं। अनुसूचित जनजातियां किसी भी धर्म की हो सकती हैं। वे जिस तरह का जीवन जी रहे हैं, उसके कारण उन्हें अनुसूचित जनजाति के रूप में सूचीबद्ध किया गया है।

इसी प्रकार, अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों की सूचियों के संशोधन पर सलाहकार समिति, लोकप्रिय रूप से 'लोकुर समिति ने अनुसूचित जनजाति के रूप में एक जनजाति के पात्रता के परीक्षण के लिए आदिम लक्षणें, विशिष्ट संस्कृति, भौगोलिक अलगाव, बड़े पैमाने पर समाज के साथ संपर्क की शर्मिंदगी और पिछड़ेपन को महत्वपूर्ण मानदंड के रूप में लिया है।

9.7 अनुसूचित जनजातियों के लिए संवैधानिक प्रावधान

यद्यपि अनुसूचित जनजातियों के लिए कई संवैधानिक प्रावधान अनुसूचित जातियों के समान है कुछ प्रावधान विशेष रूप से अनुसूचित जनजातियों के लिए हैं ये इस प्रकार

संवैधानिक सुरक्षा उपाय

अनुच्छेद 15 और 18 में जो नागरिकों के मौलिक अधिकारों का उल्लेख करता है. यह सुनिश्चित करने के लिए अपवाद बनाए गए हैं कि अनुसूचित जनजातियों के लिए जो किया जाना आवश्यक है वह किया जाए। उदाहरण के लिए, यद्यपि अवसर की 'समानता राज्य की नीति है. आरक्षण को अपवाद बनाया गया है।

अनुच्छेद 244 राज्य को अनुसूचित जनजातियों के विकास के लिए विशेष व्यवस्था करने में सक्षम बनाता है।

अनुच्छेद 275 (1) राज्य को जनजातीय विकास के लिए उपयोग किए जाने वाले वित्तीय प्रावधानों को अलग रखने में सक्षम बनाता है।

संविधान की पांचवीं अनुसूची किसी राज्य के राज्यपाल को संसद या राज्य विधानमंडल के किसी भी अधिनियम को निलंबित करने का अधिकार देती है यदि उन्हें लगता है कि यह एसटी के हित में नहीं है। वह पूर्वव्यापी प्रभाव से भी ऐसा कर सकता है।

छठी अनुसूची एक स्वायत्त जिला स्तरीय निकाय को उन क्षेत्रों में गठित करने में सक्षम बनाती है जहां जनजातीय लोग बड़े प्रतिशत का गठन करते हैं। यह विशेष रूप से पूर्वोत्तर क्षेत्र के लिए तैयार किया गया है जो कई मामलों में अद्वितीय है। क्षेत्र के जिले मिनी-स्टेट के रूप में कार्य कर सकते हैं क्योंकि उनके पास बहुत सारी वित्तीय विधायी, कार्यकारी और न्यायिक शक्तियों हैं।

संविधान मुख्य रूप से अनुच्छेद 46 में निहित निदेशक सिद्धांतों के कार्यान्वयन की सुविधा के लिए अनुसूचित जनजातियों के लिए कई सुरक्षा उपाय प्रदान करता है, जो पढ़ता हैः राज्य विशेष रूप से लोगों के कमजोर वर्गों के शैक्षिक और आर्थिक हितों को बढ़ावा देगा और विशेष रूप से, अनुसूचित जनजातियों की सामाजिक अन्याय और शोषण के सभी रूप से उनकी रक्षा करेंगे।

महत्वपूर्ण संवैधानिक सुरक्षा उपायों में अनुच्छेद 46 (अनुसूचित जातियों, अनुसूचित जनजातियों और अन्य कमजोर वर्गों के शैक्षिक और आर्थिक हितों को बढ़ावा देना), 330 (लोगों के सदन में अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों के लिए सीटों का आरक्षण), 332 (लोगों के लिए सीटों का आरक्षण) शामिल हैं। राज्यों की विधानसभाओं में अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति), 335 (सेवाओं और पदों पर अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति के दावे) और 339 (अनुसूचित क्षेत्रों के प्रशासन और अनुसूचित जनजाति के कल्याण पर संघ का नियंत्रण)।

अनुच्छेद 164 बिहार, मध्य प्रदेश और ओडिशा के प्रत्येक राज्य में जनजातीय कल्याण मंत्रालय का प्रावधान करता है जहां अनुसूचित जनजाति की आबादी बड़े पैमाने पर केंद्रित है। अपने अपने राज्य में अनुसूचित जनजातियों के कल्याण पर संघ का नियंत्रण।

अनुच्छेद 244 उन राज्यों के अनुसूचित क्षेत्रों और जनजातियों के प्रशासन के प्रावधानों को शामिल करने के लिए संविधान में पांचवीं अनुसूची को शामिल करने का प्रावधान करता है, जिनकी जनजातीय आबादी काफी अधिक है (असम को छोडकर)।

अनुच्छेद 275 अनुसूचित जनजातियों के कल्याण को बढ़ावा देने और उन्हें बेहतर प्रशासन प्रदान करने के लिए केंद्र सरकार द्वारा राज्य सरकारों को विशेष धनराशि प्रदान करने का प्रावधान करता है।

9.8 अन्य पिछड़ी जाति

अन्य पिछड़ा वर्ग (OBC) एक प्रशासनिक श्रेणी है, जिसे औपचारिक रूप से 1991 में लागू किया गया, हालाँकि इसमें शामिल जातियाँ लंबे समय से सामाजिक, शैक्षिक और आर्थिक रूप से पिछड़ी रही हैं। यह भारत सरकार द्वारा जातियों के वर्गीकरण हेतु प्रयुक्त एक सामूहिक शब्द है और यह अनुसूचित जातियों (SC) तथा अनुसूचित जनजातियों (ST) के साथ भारत की जनसंख्या के प्रमुख सरकारी वर्गीकरणों में से एक है। भारतीय संविधान में ओबीसी को सामाजिक एवं शैक्षणिक रूप से पिछड़ा वर्ग (SEBC) के रूप में मान्यता दी गई है। इनके सामाजिक और शैक्षिक विकास को सुनिश्चित करने के लिए सरकार द्वारा विशेष प्रावधान किए गए हैं, जिनमें सार्वजनिक क्षेत्र के रोजगार और उच्च शिक्षा में आरक्षण शामिल है। ओबीसी की सूची सामाजिक,

शैक्षिक और आर्थिक मानदंडों के आधार पर समय-समय पर संशोधित की जाती है और इसका रखरखाव सामाजिक न्याय एवं अधिकारिता मंत्रालय द्वारा किया जाता है, जिससे यह सूची एक गतिशील प्रकृति की बनी रहती है। वर्ष 1985 तक पिछड़ा वर्ग से संबंधित मामलों की देखरेख गृह मंत्रालय के अंतर्गत की जाती थी, किंतु उसी वर्ष अनुसूचित जाति, अनुसूचित जनजाति और अन्य पिछड़ा वर्ग के कल्याण हेतु एक पृथक मंत्रालय—सामाजिक न्याय एवं अधिकारिता मंत्रालय—की स्थापना की गई। अन्य पिछड़ा वर्गों के सामाजिक और आर्थिक सशक्तिकरण से जुड़े कार्यक्रमों के क्रियान्वयन तथा उनसे संबंधित मामलों के लिए राष्ट्रीय पिछड़ा वर्ग वित्त एवं विकास निगम और राष्ट्रीय पिछड़ा वर्ग आयोग जैसे संस्थानों की स्थापना की गई है। दिसंबर 2018 में ओबीसी उप-जातियों के उप-वर्गीकरण से संबंधित आयोग की रिपोर्ट के अनुसार, ओबीसी के अंतर्गत आने वाली लगभग 25 प्रतिशत जातियाँ ही आरक्षण के लगभग 97 प्रतिशत लाभ प्राप्त कर रही हैं, जबकि कुल ओबीसी जातियों में से लगभग 37 प्रतिशत जातियों का प्रतिनिधित्व नगण्य या शून्य है।

9.9 अन्य पिछड़े वर्गों का कल्याण

अनुच्छेद 16(4) पिछड़े वर्गों के व्यक्तियों के पक्ष में सेवाओं में आरक्षण प्रदान करता है जिनका उनमें अपर्याप्त प्रतिनिधित्व उनमें अपर्याप्त है। यह ध्यान दिया जा सकता है कि पिछडा वर्ग संविधान में अपनाया गया एक सामान्य शब्द है, जिसमें एससी और एसटी भी शामिल हैं। अनुच्छेद 335 में प्रावधान है कि सरकारी सेवाओं और पदों पर नियुक्तियां करने में अनुसूचित जातियों (अनुसूचित जनजातियों पर भी लागू) के सदस्यों के दावों को लगातार प्रशासन की दक्षता बनाए रखने के साथ ध्यान में रखा जाएगा।

9.10 सारांश

अनुसूचित जातियाँ वे सामाजिक समूह हैं जो ऐतिहासिक रूप से जाति व्यवस्था में सबसे निचले पायदान पर रहे हैं और जिन्हें अस्पृश्यता, सामाजिक भेदभाव तथा गंभीर वंचना का सामना करना पड़ा। भारतीय संविधान ने अस्पृश्यता को समाप्त कर इन वर्गों को मौलिक अधिकारों, आरक्षण तथा विशेष कल्याणकारी योजनाओं के माध्यम से संरक्षण और उत्थान प्रदान किया है। शिक्षा, रोजगार और राजनीतिक प्रतिनिधित्व में इन्हें विशेष सुविधाएँ दी गई हैं। अनुसूचित जनजातियाँ वे समुदाय हैं जो प्रायः भौगोलिक रूप से पृथक क्षेत्रों में निवास करते हैं और जिनकी सामाजिक, आर्थिक एवं सांस्कृतिक संरचना विशिष्ट होती है। ऐतिहासिक रूप से ये विकास की मुख्यधारा से अलग-थलग रहे हैं। संविधान ने इनके सामाजिक, आर्थिक और शैक्षिक विकास तथा उनकी संस्कृति और पहचान की रक्षा के लिए विशेष प्रावधान किए हैं, जिनमें आरक्षण और कल्याणकारी योजनाएँ शामिल हैं। अन्य पिछड़ा वर्ग वे सामाजिक एवं शैक्षिक रूप से पिछड़े समुदाय हैं, जो अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति में शामिल नहीं हैं, लेकिन सामाजिक और शैक्षिक दृष्टि से वंचित रहे हैं। संविधान में इन्हें सामाजिक एवं शैक्षिक रूप से पिछड़ा वर्ग (SEBC) के रूप में मान्यता दी गई है। इनके विकास के लिए शिक्षा और सार्वजनिक रोजगार में आरक्षण तथा विभिन्न कल्याणकारी कार्यक्रम लागू किए गए हैं।

9.11 संदर्भ ग्रन्थ सूची

ठाकुर, विमला (1991) "कमजोर वर्गों के सामाजिक आर्थिक विश्लेषण" दिल्ली : दया पब्लिकैशन हाउस।

Bose, A.B. (1987). Encyclopaedia of Social Work, Ministry of Welfare. New Delhi, India: Government of India.

Friedlander, W. (1967). Introduction to Social Welfare. New Delhi, India: PrenticeHall.

Gore, M.S. & Khadelkar, M. (1975). Quarter Century of Welfare in India. Bombay, India: Asia Publishing House.

Government of India. (2018). India Year Book. New Delhi, India: Publications Division.

Government of India. (1951). First Five Year Plan, Planning Commission, New Delhi.

9.12 निबंधात्मक प्रश्न

1. अनुसूचित जाति व इसके लिए संवैधानिक प्रावधान का वर्णन कीजिए।

2. अनुसूचित जातियों के सशक्तिकरण के लिए उपाय को स्पष्ट कीजिए।

3. अनुसूचित जनजातियों के लिए संवैधानिक प्रावधान के बारें में विस्तार से चर्चा कीजिए।

इकाई 10 प्रभावी योजना का सामाजिक पुर्न निर्माण, सामाजिक योजना की सीमाऐं

Social Reconstruction through effective planning and limitations of Social Planning

इकाई की रूपरेखा

10.0 प्रस्तावना

10.1 उद्देश्य

10.2 सामाजिक पुर्ननिर्माण क्या है?

10.3 सामाजिक पुर्ननिर्माण की आवश्यकता

10.4 पुर्ननिर्माण और सामाजिक विकास का संबंध

10.5 प्रभावी योजना का अर्थ एवं आवश्यकता

10.6 प्रभावी योजना के प्रमुख घटक

10.7 भारत में सामाजिक पुर्ननिर्माण हेतु प्रमुख योजनाएँ

10.8 सामाजिक योजना क्या है?

10.9 सामाजिक योजना का महत्व

10.10 सामाजिक योजना की सीमाएँ

10.11 प्रशासनिक जटिलताएँ

10.12 राजनैतिक हस्तक्षेप

10.13 सामाजिक और सांस्कृतिक बाधांऐं

10.14 संसाधनों एवं बजट की कमी

10.15 निगरानी और मूल्यांकन की कमजोर व्यवस्था

10.16 सामाजिक योजनाओं की सीमाओं को दूर करने के उपाय।

10.17 संसाधनों का सुचारू प्रबंधन

10.18 सहभागी योजना मॉडल

10.19 पारदर्शिता और जवाबदेही

10.20 मजबूत निगरानी और मूल्यांकन व्यवस्था

10.21 सामाजिक और व्यवाहारिक परिवर्तन पर जोर

10.22 सारांश

10.23 पारिभाषिक शब्दावली

10.24 संदर्भ ग्रंथ सूची

10.25 निबंधात्मक प्रश्न

10.0 प्रस्तावना (Introduction)

समाज के विकास एवं परिवर्तन के लिए सरकारी योजनाएं बहुत महत्वपूर्ण होती हैं। सरकारी योजनाएं समाज के समस्त वर्गों को ध्यान में रखकर ही सरकार के द्वारा बनाई जाती है। सरकारी योजना समाज के लोगों की आवश्यकताओं के अनुरूप बनती हैं। योजनाएं जब प्रभावी तरीके से लोगों तक पहुंचती हैं तब इससे समाज में सकारात्मक परिवर्तन आते हैं। सामाजिक परिवर्तन की यह व्यवस्था सामाजिक पुर्ननिर्माण की आधारशिला होती है यानी मतलब साफ है कि सरकारी योजनाएं समाज में मौजूद सामाजिक-आर्थिक, सामाजिक-राजनीतिक

और सामाजिक-शैक्षणिक असमानताओं को समाप्त करके, समाज को एक संतुलित और समता मूलक समाज के रूप में परिवर्तित करती है। भारत जनसंख्या की दृष्टि से एक बड़ा देश है। जिसमें अलग-अलग जाति, धर्म, लिंग और अलग-अलग आयु समूह के लोग रहते हैं। यह आवश्यक नहीं है कि यहां रहने वाले प्रत्येक मनुष्य की सामाजिक आर्थिक स्थिति एक समान हो। किसी व्यक्ति की सामाजिक आर्थिक स्थिति ठीक-ठाक है वही दूसरे व्यक्ति की सामाजिक आर्थिक स्थिति संतोषजनक नहीं है। ऐसी स्थिति में समाज के सभी व्यक्तियों की सामाजिक आर्थिक स्थिति को संतोष जनक बनाने के लिए सरकार द्वारा चलाई जाने वाली विभिन्न योजनाएं समाज की सामाजिक आर्थिक असमानताओं की खाई को भरने का कार्य करती है। इस प्रक्रिया को सामाजिक पुर्ननिर्माण के रूप में जाना जाता है।

10.1 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के उपरांत आप समझ पायेगें-

- समाजिक पुर्ननिर्माण और उसकी आवश्यकता।
- पुर्ननिर्माण से सामाजिक विकास की प्रक्रिया।
- प्रभावी योजना, प्रभावी योजना की आवश्कता और प्रभावी योजना के प्रमुख घटक भारत में सामाजिक पुर्ननिर्माण के लिए चलाई जाने वाली योजनाऐं, सामाजिक योजनाओं का महत्व। सामाजिक योजनाओं की सीमाएँ और सामाजिक योजनाओं की सीमाओं को दूर करने के उपायों के विषय में जानकारी प्राप्त कर पायेंगे।

10.2 सामाजिक पुर्ननिर्माण क्या है?

जब किसी समाज में सामाजिक-आर्थिक, सामाजिक-शैक्षणिक, सामाजिक-राजनीतिक असमानताएं एवं इनसे संबंधित समस्याएं मौजूद होती हैं। इन असमानताओं एवं समस्याओं के परिणामस्वरुप समाज के सभी व्यक्तियों

को एक समान अवसर प्राप्त नहीं हो पाते हैं। तब समाज से ऐसी स्थिति को दूर करने के लिए सरकार के द्वारा लोगों की आवश्यकता के अनुरूप कुछ सरकारी योजनाएं बनाई जाती हैं। ये योजनाएं समाज में व्याप्त असमानताओं और समस्याओं को दूर करने का कार्य करती हैं। इस प्रकार ये सरकारी योजनाएं समाज के लोगों को केवल आर्थिक लाभ ही नहीं पहुंचती हैं बल्कि ये संपूर्ण समाज के लोगों की सोच, व्यवहार और अवसरों में भी सकारात्मक परिवर्तन लाने का कार्य करती हैं। उदाहरण के तौर पर हम देख सकते हैं की लड़कियों की शिक्षा को बढ़ाने के लिए "बेटी बचाओ बेटी पढ़ाओ" योजना लड़कियों को स्कूल भेजने में मदद करती है, जिससे समाज में लड़कियों की निरक्षरता घटती है।

10.3 सामाजिक पुर्ननिर्माण की आवश्यकता

जब किसी समाज में सब लोगों की सामाजिक आर्थिक स्थिति एक समान नहीं हो पाती है, तब उस समय में सामाजिक पुर्ननिर्माण की आवश्यकता पड़ती है। सामाजिक पुर्ननिर्माण के अंतर्गत समाज को इस तरह आगे ले जाया जाता है कि जिससे समाज में रहने वाले प्रत्येक व्यक्ति को बराबर अवसर, सम्मान और सुरक्षा प्राप्त हो सके। सामाजिक पुर्ननिर्माण समाज की कमजोरीयों को दूर करके समाज को व्यवस्थित और विकसित करने का कार्य करता है। सामाजिक पुर्ननिर्माण समाज की सामाजिक-आर्थिक असमानताओं को दूर करने, सामाजिक समस्याओं से निजात दिलाने, समाज को समता मूलक न्याय संगत तथा वर्ग विभेद को दूर करने के लिए नितांत आवश्यक हो जाता है। इसको एक उदाहरण के रूप में समझा जा सकता है जैसे पहले भारतीय समाज में दहेज प्रथा और बाल-विवाह जैसी समस्याएं व्याप्त थी। इन सामाजिक समस्याओं को दूर करने के लिए सरकार ने दहेज प्रथा और बाल विवाह को रोकने के लिए कानून बनाये। इसके साथ ही लोगों में जन जागरूकता कार्यक्रम चलकर इन समस्याओं को समाज से दूर करने का कार्य किया। जिसके परिणाम स्वरुप दहेज प्रथा और बाल विवाह के प्रति समाज की सोच बदलने लगी, जिससे समाज का पुर्ननिर्माण हुआ।

10.4 पुर्ननिर्माण एवं सामाजिक विकास का संबंध

सामाजिक पुर्ननिर्माण से आशय उस प्रक्रिया से है जिसमें समाज की कमजोरियों, असमानताओं को कुप्रथाओं और अवांछनीय स्थितियों को समाज से समाप्त करके के समाज को व्यवस्थित और संतुलित किया जाता है। दूसरी ओर सामाजिक विकास में समाज के व्यक्तियों और सामाजिक समूहों के जीवन स्तर में सुधार लाने का कार्य किया जाता है। जिसमें शिक्षा, स्वास्थ्य, सुरक्षा, रोजगार और लैंगिक समानता के क्षेत्र में उन कार्यों को प्रमुखता दी जाती है, जिनसे समाज का विकास होता है। पुर्ननिर्माण एवं सामाजिक विकास एक दूसरे से गहराई से जुड़े हैं। क्योंकि पुर्ननिर्माण के बिना विकास संभव नहीं है और विकास के बिना पुर्ननिर्माण अधूरा है। पुर्ननिर्माण सामाजिक असमानताओं को कम करता हैं। जिससे सामाजिक विकास के लिए रास्ता तैयार होता है। उदाहरण के तौर पर यदि समाज में जाति, लिंग और वर्ग के आधार पर समाज से भेदभाव कम हो जाए, तब शिक्षा और रोजगार के अवसर समाज के सभी लोगों के लिए एक समान रूप में उपलब्ध हो जाते हैं। जिससे परिणामस्वरुप सामाजिक विकास तेजी से बढ़ता है। इस प्रकार कहा जा सकता है कि पुर्ननिर्माण समाज की संरचना में परिवर्तन लाता है और सामाजिक विकास समाज की गुणवत्ता में सुधार लाने का कार्य करता है।

10.5 प्रभावी योजना का अर्थ एवं आवश्यकता

प्रभावी योजना से आशय उस ऐसे उसे योजना से है जो समाज के लोगों की वास्तविक जरूरतों को पूरा कर पाने मे समर्थन हो। प्रभावी योजना का लाभ समाज में सही हो समय पर सही व्यक्ति तक पहुंचे। कहने खाने का अर्थ यह है कि प्रभावी योजना का मुख्य उद्देश्य समाज की समस्याओं को कम करके लोगों के जीवन स्तर को बेहतर बनाना होता है। इस प्रकार स्पष्ट है कि उस योजना को प्रभावी योजना कहा जाता है, जो अपने उद्देश्यों के अनुसार संसाधनों, सेवाओं और अफसरों का ऐसा प्रबंधन और वितरण करती हो, जिससे समाज के अधिक से अधिक लोगों को लाभ मिले। और लोगों की सामाजिक-आर्थिक स्थिति में सकारात्मक परिवर्तन आए। समाज में असमानता, गरीबी, बेरोजगारी, अशिक्षा, लैंगिक भेदभाव और स्वास्थ्य जैसी समस्याओं को समाज से दूर करने के लिए प्रभावी योजना की आवश्यकता पड़ती है। जब समाज में योजनाएं प्रभावी रूप से कार्य करती हैं, तब इससे लोगों के जीवन स्तर, सोच और व्यवहार में सकारात्मक परिवर्तन आते हैं। जिससे सामाजिक पुर्ननिर्माण और विकास को गति मिलती है।

10.6 प्रभावी योजना के प्रमुख घटक

प्रभावी योजना वह है जिसमे लक्ष्य, संसाधन, समय और लाभार्थियों के हितों का ख्याल रखा जाए प्रभावी योजना का लाभ वास्तविक रूप से लाभार्थियों लब्धियों तक पहुंचे। प्रभावी योजना समाज की वास्तविक आवश्यकताओं पर आधारित होनी चाहिए। के. एल . शर्मा के अनुसार "प्रभावी योजना की पहली शर्त स्पष्ट और यथायवादी लक्ष्य निर्धारण है। क्योंकि बिना स्पष्ट लक्ष्य के योजना में दिशा और प्रायमिकताएं निर्धारित नहीं हो पाती हैं। इसके साथ ही समस्याओं और आवश्यकताओं की सही पहचान भी महत्वपूर्ण है। ताकि संशोधनों का उपयोग सही दिशा में हो सके। लाभार्थियों की सहभागिता, पारदर्शित प्रशासनिक समन्वय और कार्यान्वय की मजबूत प्रणाली प्रभावी योजना की रीड मानी जाती है[1]। "एस० एस० गोरे ने प्रभावी योजना की सफलता के लिए समाज के कमजोर वर्गों की भागीदारी को आवश्यक बताया है[२] ।" प्रभावी योजना के घटकों में मूल्यांकन एवं निगरानी का महत्वपूर्ण माना जाता है। योजनाएं तभी पूर्ण रूप से प्रभावी होती है, जब उनका मूल्यांकन समय पर किया जाए और इनमें मौजूद कर्मियों को दूर किया जाये। शिक्षार्थियों इस इकाई में किसी योजना को प्रभावी बनाने के लिए जिन महत्वपूर्ण घटकों की आवश्यकता होती है उनको यहां निम्नलिखित सारणी में प्रस्तुत किया जा रहा है।

प्रभावी योजना के घटक	आवश्यक शर्तें
1 लक्ष्यों का स्पष्ट निर्धारण	योजना के उद्देश्य और दिशा स्पष्ट होनी चाहिए।
2 समस्याओं व आवश्यकताओं की सही पहचान	योजना वास्तविक जरूरतों और सामाजिक स्थितियों पर आधारित होनी चाहिए।
3 संसाधनों का उचित उपयोग	वित्तीय, मानव तकनीकी संसाधनों का संतुलित उपयोग किया जाना चाहिए।
4 लाभार्थियों की सहभागिता	योजना के निर्माण और क्रियान्वयन में लक्षित समूहों की सक्रिय भूमिका होनी चाहिए।
5 पारदर्शिता और जवाब देही	योजना को प्रभावी बनाने के लिए पारदर्शिता, भ्रष्टाचार मुक्त और निष्पक्ष प्रक्रिया को अपनाया जाना चाहिए।
6 प्रभावी क्रियान्वयन	कार्यान्वयन के लिए अधिकारियों कर्मचारियों और संस्थाओं के बीच संबंध सुनिश्चित किया जाए।
7 निगरानी और मूल्यांकन	समय-समय पर योजना की प्रगति की जांच और आवश्यक सुधार पर जोर दिया जाए।

10.7 प्रभावी योजना और सामाजिक पुर्ननिर्माण का संबंध

जैसा की आप जानते हैं कि प्रभावी योजना सामाजिक पुर्ननिर्माण की आधारशिला होती है। जो भी योजना सरकार के द्वारा चलाई जाती है, उस योजना का कार्य सामाजिक असमानता को समाज से दूर करना होता है। ये योजनाएं समाज को परिवर्तित करने का कार्य करती हैं। प्रभावी योजनाएं गरीबी, अशिक्षा, लैंगिक असमानता, बेरोजगारी और सामाजिक भेदभावों को समाज से समाप्त करने का कार्य करती है। प्रश्न उठता है कि क्या प्रभावी योजना और सामाजिक पुर्ननिर्माण एक दूसरे से संबंध रखते हैं? निश्चित तौर पर ये एक दूसरे के पूरक है। जब कोई योजना समाज के सदस्यों को शिक्षा, रोजगार, स्वास्थ्य और सामाजिक सुरक्षा प्रदान करवाती है, तब इससे समाज के लोग आत्मनिर्भर और सशक्त बनते हैं। इससे समाज की दिशा और दशा बदलने लगती है, पुर्ननिर्माण की प्रक्रिया को गति मिलती है। योगेंद्र सिंह के अनुसार "योजनाएं समाज में तभी पुर्ननिर्माण में योगदान देने का कार्य करती है, जब योजनाएं समाज के सामाजिक आर्थिक और सांस्कृतिक विकास को बढ़ाने में सफल साबित हो[3]" इसलिए यहां पर यह स्पष्ट हो जाता है, कि प्रभावी योजना विकास को, लोगों के व्यवहार परिवर्तन से जोड़कर समाज को पुनर्गठित करके, एक न्याय संगत और समानता मूलक समाज को स्थापित करने का कार्य करती है।

10.7 भारत में सामाजिक पुर्ननिर्माण हेतु प्रमुख योजनाएं

शिक्षार्थियों जैसा कि पूर्व में भी बताया गया है, कि सामाजिक पुर्ननिर्माण का उद्देश्य समाज के कमजोर, वंचित, पिछड़े वर् और अंतिम पायदान पर खड़े व्यक्तियों को समाज की मुख्य धारा से जोड़ना है। इसी उद्देश्य की पूर्ति के लिए केंद्र सरकार और राज्य की सरकारे ,समाज के इन वर्गों के लिए अनेक योजनाओं को क्रियान्वित करती है। इन योजनाओं को लागू करने का मुख्य उद्देश्य समाज में सामाजिक-आर्थिक, सामाजिक-शैक्षणिक, सामाजिक-राजनीतिक और सामाजिक-सांस्कृतिक असमानताओं को कम करके, समाज के इन वंचित वर्गों को, समाज के अन्य वर्गों के सामान बनाना होता है इन योजनाओं का उद्देश्य समाज के इन वंचित वर्गों को केवल आर्थिक सहायता देना नहीं होता है। ये योजनाएं लोगों की सोच, अवसरों और जीवन स्तर में सुधार लाने

का कार्य करती है। ये योजनाएं शिक्षा, स्वास्थ्य, रोजगार, लैंगिक समानता, महिला सशक्तिकरण और स्वच्छता आदि से संबंधित विषयों पर कार्य करती है। इन योजनाओं से समाज की सामाजिक संरचना मजबूत होती है। उदाहरण के रूप में 'मनरेगा' योजना ने गांवों में रोजगार के आवशरो को बढ़ावा देकर, गांवों से बेरोजगारी की समस्या को दूर करने का कार्य किया है। 'बेटी बचाओ बेटी पढ़ाओ' योजना ने लड़कियों की शिक्षा और लैंगिक असमानता को समाज से दूर करने का कार्य किया है। प्रधानमंत्री 'मातृत्व वंदन योजना' ने मातृ-शिशु स्वास्थ्य की स्थिति में सुधार करने का कार्य किया है। इस प्रकार शिक्षा, स्वास्थ्य, रोजगार, आत्मनिर्भरता, महिला सशक्तिकरण और लैंगिक असमानता को दूर करने के लिए अनेक योजनाएं केंद्र सरकार और राज्य सरकारों के द्वारा संचालित की जा रही हैं। ये सब योजनाएं सामाजिक पुर्ननिर्माण की दिशा में महत्वपूर्ण भूमिका निभा रही है। शिक्षार्थियों भारत में सामाजिक पुर्ननिर्माण हेतु जो योजनाएं हमारी सरकार के द्वारा चलाई जा रही हैं, उनमें से प्रमुख योजनाओं को निम्नलिखित तालिका में प्रस्तुत किया गया है।

योजना का नाम	योजना के उद्देश्य	सामाजिक पुर्ननिर्माण में योगदान
बेटी बचाओ बेटी पढ़ाओ	बालिकाओं की शिक्षा, सुरक्षा और जन्म दर में सुधार।	लैंगिक समानता, बालिका शिक्षा में वृद्धि।
महात्मा गांधी राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारंटी योजना	ग्रामीण परिवारों को 100 दोनों का रोजगार उपलब्ध कराना।	गरीबी कम हुई, पलायन घटा और ग्रामीण सशक्त हुए।
स्वच्छ भारत मिशन	शौचालय निर्माण, कचरा प्रबंधन एवं निस्तारण और स्वच्छता को बढ़ावा देना।	समाज के लोगों के स्वास्थ्य में सुधार हुआ स्वच्छता के प्रति लोगों की जागरूकता बढ़ने लगी।
आयुष्मान भारत	गरीब परिवारों को मुफ्त स्वास्थ्य बीमा।	लोगों के स्वास्थ्य में सुधार और स्वास्थ्य सेवाओं तक लोगों की पहुंच बढ़ने लगी है।
सर्व शिक्षा अभियान	प्राथमिक शिक्षा को सार्वभौमिक बनाना।	शिक्षा में वृद्धि और साक्षरता में वृद्धि हुई है।
प्रधानमंत्री आवास योजना	गरीब परिवारों को पक्का घर उपलब्ध करवाना।	लोगों के आवास, सुरक्षा और जीवन स्तर में इससे सुधार हुआ है।

10.8 सामाजिक योजना क्या है

सामाजिक योजना की सिमाओं को जानने से पहले यहां पर यह जानना आवश्यक हो जाता है कि आखिर सामाजिक योजना क्या है? शिक्षार्थियों सरल शब्दों में यदि कहा जाए तो सामाजिक योजना वह संगठित प्रयास है, जिसके माध्यम से समाज की समस्याओं की पहचान करके, उन समस्याओं को दूर करने के लिए सरकार द्वारा बनाई जाने वाली एक व्यवस्था है। इस व्यवस्था के तहत सरकार द्वारा गरीबी, बेरोजगारी, शिक्षा, स्वास्थ्य, महिला सशक्तिकरण, वृद्धावस्था सुरक्षा और सामाजिक सुरक्षा जैसे समाज के अनेक क्षेत्रों में जो योजनाएं बनाई जाती हैं, वे सब सामाजिक योजना का हिस्सा होती हैं। इस प्रकार हम समझ सकते हैं, कि सामाजिक योजना सामाजिक कल्याण और सामाजिक विकास दोनों की आधारशिला है। सामाजिक योजना समाज के वंचित और कमजोर वर्गों को समाज की मुख्य धारा से जोड़ने का कार्य करती है।

10.9 सामाजिक योजना का महत्व

शिक्षार्थियों जैसा कि पूर्व में भी बताया गया है, कि सामाजिक योजनाएं समाज को आगे ले जाने और विकास को गति देने में बहुत महत्वपूर्ण होती है। चूकि हम सब जानते हैं कि, किसी भी समाज के लोगों की एक जैसी सामाजिक आर्थिक स्थिति नहीं होती है। समाज के लोगों की सामाजिक-आर्थिक स्थिति को बेहतर बनाने और समाज से गरीबी, अशिक्षा और बेरोजगारी की समस्याओं को दूर करने के लिए सामाजिक योजना महत्वपूर्ण हो जाती है। सामाजिक योजनाओं के माध्यम से सरकार और सामाजिक संस्थाएं लोगों के जीवन सर से बेहतर बनाने का कार्य करते हैं। जैसे किसी ग्रामीण क्षेत्र की ग्रामीण महिलाओं के सशक्तिकरण के लिए उन्हें कौशल प्रशिक्षण, स्वयं सहायता समूह, आजीविका संवर्धन और रोजगार के नए-नए अवसरों से जोड़ने वाली योजनाएं चलाई जा रही है। इन योजनाओं से ग्रामीण महिलाओं की आय बढ़ रही है। इसके साथ ही इन ग्रामीण महिलाओं के सामाजिक सम्मान और आत्मविश्वास में बढ़ोतरी भी देखने को मिल रही है। इस प्रकार सामाजिक योजनाएं, समाज में कमजोर वर्गों को सशक्त बनाकर, समाज में सकारात्मक सामाजिक परिवर्तन को लाने का कार्य करती है। इन सब प्रक्रियाओं के परिणाम स्वरुप सामाजिक पुर्ननिर्माण की दिशा को गति मिलती है।

10.10 सामाजिक योजना की सीमाएं

सामाजिक योजना को समाज के विकास, जन कल्याण और समाज में समानता स्थापित करने वाला अभिकरण माना जाता है। सामाजिक योजना लोगों को आर्थिक सहायता के साथ-साथ जीवन की गुणवत्ता, सामाजिक सुरक्षा, अवसरों की उपलब्धता और सामाजिक समानता सुनिश्चित करने का कार्य करती है। सामाजिक योजना के अंतर्गत समुदाय संस्थाओं और सरकार मिलकर यह तय करती है कि किन क्षेत्रों में हस्तक्षेप आवश्यक है, और साथ ही यह भी तय करती है कि उपलब्ध संसाधनों सबसे उपयोगी और न्याय पूर्ण वितरण कैसे किया जाए। सामाजिक योजना संरचना सामाजिक संरचना में छपी असमानताओं को लक्षित तरीके से कम करने का प्रयास है। ताकि विकास केवल कुछ लोगों तक सीमित न रह पाए, विकास संपूर्ण समाज तक पहुंचे[4]। सामाजिक योजना तभी प्रभावी होती है, जब वह केवल प्रशासनिक दस्तावेजों मे रहकर व्यवहार में लागू हो। जिससे लोगों के दैनिक जीवन में सकारात्मक परिवर्तन आए[5]। सामाजिक विकास की भूमिका केवल विकास के अवसर प्रदान करना नहीं है। सामाजिक विकास समाज के लोगों के व्यवहार, सोच और सामाजिक संबंधों में भी परिवर्तन लाने में अपनी माहती भूमिका का निर्वहन करता है। शिक्षार्थियों सामाजिक योजना समाज में समानता, न्याय और संतुलन स्थापित करती है। लेकिन इस बात से नकारा नहीं जा सकता कि सामाजिक योजना लागू करते समय कई ऐसी बाधाएं सामने आती है, जो योजनाओं को उनके वास्तविक लक्ष्य तक पहुंचने से रोक देती है। जो योजनाएं कागजों पर जितनी आदर्श और व्यवस्थित दिखाई देती है, जमीनी स्तर पर उतनी आसानी से लागू नहीं हो पाती है। इसके पीछे मुख्य कारण प्रत्येक क्षेत्र का सामाजिक, आर्थिक, सांस्कृतिक और प्रशासनिक स्थितियां एक समान नहीं होती है। कई बार योजनाओं के निर्माण और लाभार्थियों की वास्तविक जरूरतों के बीच दूरी बढ़ जाती है। जिससे योजना के प्रभाव सीमित हो जाता हैं। शिक्षार्थियों इस इकाई में सामाजिक योजना की सीमाओं पर प्रथक प्रथक रूप से चर्चा की जा रही है।

10.11 प्रशासनिक जटिलताएं

सामाजिक योजनाएं अक्सर कागजी प्रक्रियाओं, स्वीकृतियों और विभागीय औपचारिकताओं में उलझ कर रह जाती है। जिससे इन योजनाओं के क्रियान्वयन की गति धीमी पड़ जाती है। यही कारण है, कि प्रशासनिक जटिलताओं के कारण कई योजनाएं लाभार्थियों को सही समय पर लाभ नहीं पहुंचा पाती है। कई राज्यों में वृद्धावस्था पेंशन समय पर जारी न होने के कारण लाभार्थियों की पात्रता सूची को स्वीकृत के लिए महीनों तक लंबित रख दिया जाता है। अत्यधिक प्रशासनिक औपचारिकताएं सामाजिक योजना के प्रभाव को कम कर देती है।[6]

10.12 राजनीतिक हस्तक्षेप

कभी-कभी सामाजिक योजनाओं का क्रियान्वयन राजनीतिक प्रभाव और स्वार्थ के कारण प्रभावित हो जाता है। इसमें देखने को मिलता है, कि वास्तव में जिन्हें योजना का लाभ मिलना चाहिए, उन्हें न मिलकर विशेष वर्ग के लोगों को मिल जाता है। उदाहरण आवास योजना की सूची में योग्य लाभार्थियों के अतिरिक्त किसी पार्टी विशेष को समर्थन करने वाले लोगों के नामों को जोड़ना, इसके उदाहरण के रूप में देखा जा सकता है। पूर्ण ग्राम एम० एस० खान के अनुसार "राजनीतिक हस्तक्षेप योजनाओं को सामाजिक उद्देश्य से हटाकर दलगत लक्ष्य तक सीमित कर देते हैं।"[7]

10.13 सामाजिक और सांस्कृतिक बाधाऐं

कभी-कभी किसी योजना के प्रति समाज के लोगों की नकारात्मक सोच, योजना की सफलता में बाधक बनने का कार्य करती हैं। पितृहात्मक सोच के कारण महिला शिक्षा और लैंगिक समानता जैसी योजना**ऐं** इस सोच से प्रभावित हो जाती है। सामाजिक मान्यताएं लोगों के व्यवहार बदलने से पहले, योजनाओं को अपनी पूरी क्षमता तक पहुंचने नहीं देती है[8]। उदाहरण के तौर पर यदि देखा जाए तो बालिका शिक्षा के लिए हमारी सरकार विभिन्न

प्रकार की छात्रवृत्तियां देती है। इन तमाम तरह की छात्रवृत्तियों के बावजूद भी कुछ समुदायों में लड़कियों को स्कूल भेजने में बेचैनी महसूस होती है।

10.14 संसाधनों एवं बजट की कमी

कभी- कभी सामाजिक योजनाओं में संसाधनों के असमान रूप से वितरण होने के कारण संपूर्ण लक्ष्य प्राप्त नहीं हो पाते हैं। बहुत सी योजनाओं का निर्माण तो हो जाता है लेकिन धन, मानव संसाधन और तकनीकी सहायता की कमी के कारण उन्हें, लागू करने में कठिनाई का सामना करना पड़ता है। हमारी सरकार ने स्वच्छ भारत मिशन कार्यक्रम के तहत शौचालयों का निर्माण करवाया है लेकिन कुछ स्थानो पर जल प्रबंधन की उचित व्यवस्था न होने और जल प्रबंधन के लिए पर्याप्त बजट की कमी के काम होने के कारण कठिनाइयों का सामना करना पड़ता है।

10.15 निगरानी और मूल्यांकन की कमजोर व्यवस्था

किसी भी योजना की सफलता और असफलता की पहचान के लिए निगरानी और मूल्यांकन अति आवश्यक होता है। इसके अभाव में योजनाओं की सुधार प्रक्रिया रुक जाती है। यदि योजनाओं की प्रगति आख्या का नियमित रूप से मूल्यांकन नहीं किया जाए, तब योजनाओं की कमियों में सुधार कर पाना संभव नहीं हो पता है।

10.16- सामाजिक योजनाओं की सीमाओं को दूर करने के

शिक्षार्थियों यह बात को स्पष्ट हो गई है कि सामाजिक योजनाएं समाज में समानता जन कल्याण और विकास के मार्ग को प्रशस्त करने के लिए राज्य सरकारों और केंद्र सरकार के द्वारा बनाई जाती है। इन सामाजिक योजनाओं से समाज के नागरिकों और समाज को एक नहीं पहचान मिलती है। शिक्षार्थियों जैसा कि पूर्व में भी आपने देखा कि सामाजिक योजनाओं को धरातल पर लागू करने और उनके क्रियान्वयन के दौरान कई प्रकार की बाधाऐं सामने आ जाती हैं। इन बाधाओं और सीमाओं की चर्चा हम पिछले भाग में कर चुके हैं। ये बाधाऐं

सामाजिक योजनाओं की उपयोगिता को कम करने का कार्य करते है। इस इकाई में सामाजिक योजनाओं की सीमाओं को कैसे दूर किया जा सकता है। से संबंधित बिंदुओं पर चर्चा करने का प्रयास कर रहे हैं।

10.17 संसाधनों का सुचारू प्रबंध

जैसा कि आप जानते हैं कि किसी भी योजना की सफलता के लिए वित्तीय मानव संसाधन और तकनीकी संसाधनों का संतुलित वितरण आवश्यक होता है। से समाज के प्रत्येक क्षेत्र में योजनाओं को समान रूप से लागू करने में आसानी होती है। इससे यह आवश्यक हो जाता है की योजना के सफल और प्रभावी क्रियान्वयन के लिए, संसाधनों का सुचारु रूप से प्रबंध किया जाए। जिससे निर्धारित लक्ष्यो को पूर्ण करने में आसानी हो सके।

10.18 सहभागी योजना मॉडल

किसी भी योजना की सफलता के लिए यह नितांत आवश्यक हो जाता है कि संबंधित योजना के सकारात्मक परिणाम समाज में दिखाई दे। इसके लिए यह नितांत आवश्यक हो जाता है की योजनाओं को थोपा नहीं जाए, बल्कि योजनाओं को समुदाय, पंचायत, स्थानी संस्थाओं और लाभार्थियों की राय के आधार पर बनाया जाए। जन समुदाय की सहभागिता से योजनाओं के क्रियान्वयन में सरलता होती है। इसलिए नितांत आवश्यक हो जाता है की जन समुदाय की राय और उनके विचारों को समझना।

10.19 पारदर्शिता और जवाब देही

किसी भी योजना की सफलता के लिए उस योजना की पारदर्शिता नितांत आवश्यक होती है। भ्रष्टाचार, पक्षपात और **पारदर्शिता** के लिए स्पष्ट दिशा निर्देश आवश्यक होते हैं। उदाहरण के तौर पर देखें तो जब से डायरेक्ट बैंक ट्रांसफर (डीबीटी) से लाभार्थियों को जोड़ा गया है, तब से विचोलियों की भूमिका समाप्त हो गई है। इसका सीधा फायदा लाभार्थियों को मिलने लगा है।

10.20 मजबूत निगरानी और मूल्यांकन व्यवस्था

सामाजिक योजनाओं की सीमाओं या कर्मियों को दूर करने के लिए योजनाओं का मूल्यांकन अति आवश्यक होता है। योजनाओं की प्रगति को नियमित रूप से ट्रैक करने के लिए स्पष्ट दिशा निर्देश होने चाहिए। इसके लिए यह भी आवश्यक है की योजनाओं के लिए एक समयबद्ध लक्ष्य निर्धारित किए जाएं। इन लक्ष्यो की प्राप्ति के लिए समीक्षा बैठक की व्यवस्था भी की जाए। इससे संबंधित योजना में जो त्रुटियां होगी उसको समय पर दूर किया जा सकता है[10]। बिना निगरानी मूल्यांकन के बिना योजना की सफलता और असफलता का वास्तविक आकलन संभव नहीं है।

10.21 सामाजिक और व्यावहारिक परिवर्तन पर जोर

यह बात हम हम सब भांति बातें जानते हैं कि समाज में रहने वाले सभी व्यक्तियों की किसी योजना के प्रति एक समान सोच नहीं होती है। कुछ लोगों का नजरिया सामाजिक योजनाओं के लिए सकारात्मक होता है, जबकि कुछ लोगों का नजरिया सामाजिक योजनाओं के लिए नकारात्मक भी होता है। जब तक समाज के अधिकांश लोगों की सोच में संबंधित योजना के प्रति सकारात्मक दृष्टिकोण नहीं आएगा, तब तक प्रभावी योजना का क्रियान्वयन कर पाना संभव भी नहीं होगा। इसलिए यह आवश्यक हो जाता है कि सर्वप्रथम लोगों को संबंधित योजना के लिए जागरूक किया जाए। उदाहरण के तौर पर स्वच्छता को बनाए रखने के लिए सिर्फ शौचालयों का निर्माण करना ही प्राप्त नहीं था। जब लोगों ने अपनी सोच और व्यवहार में परिवर्तन किया, तब स्वच्छ भारत अभियान ने अपना मुकाम हासिल किया है।

शिक्षार्थियों इसके अतिरिक्त ऐसे अनेक उपाय हैं जिनके द्वारा हम सामाजिक योजनाओं की सीमाओं को बहुत हद तक दूर कर पाने में सक्षम हो सकते हैं। जैसे-

- योजनाओं से संबंधित शिकायतों को दूर करने के लिए एक स्वतंत्र निष्पक्ष शिकायत निवारण प्रणाली स्थापित की जा सकती है।

- योजनाओं को धरातल पर लागू करने के लिए निजी क्षेत्रो और सामाजिक संगठनों का सहयोग लिया जा सकता है।

- योजनाओं में खर्च और प्रगति के आंकड़ों को सार्वजनिक किया जा सकता है।

- लाभार्थियों के सुझावों को शामिल किया जाए।

- किसी योजना की शुरुआत करने से पहले उस क्षेत्र में पायलट प्रोजेक्ट चलाकर योजना से संबंधित चुनौतियों को दूर किया जा सकता है।

- स्थानीय स्तर पर योजनाओं के क्रियान्वयन की देखरेख के लिए स्थानीय प्रशासन को जिम्मेदारियां देने से योजनाएं सही तरीके से क्रियान्वित होगी।

इस प्रकार स्पष्ट है कि सामाजिक योजनाओं की वास्तविक प्रभावशीलता तभी सफल हो सकती है, जब योजना निर्माण से लेकर क्रियान्वयन, सूचना प्रसार, संसाधन प्रबंधन निगरानी और मूल्यांकन सभी चरणों में लाभार्थियों की भागीदारी, पारदर्शिता, कर्मचारियों और अधिकारियों की जवाब देही सुनिश्चित की जाए। इसके साथ ही सामाजिक योजनाओं की सीमाओं को दूर करने के लिए वित्तीय संसाधन, तकनीकी प्रबंधन, सामुदायिक सहभागिता और सूचना तंत्र को मजबूत किया जाए।

10.22 सारांश

प्रस्तुत इकाई प्रभावी योजना का सामाजिक पुर्ननिर्माण, सामाजिक योजना की सीमाऐं पर केंद्रित है। इसमें प्रभावी योजना और सामाजिक पुर्ननिर्माण के माध्यम से सकारात्मक और संतुलित विकास लाने की प्रक्रिया को व्याप्त रूप से समझने का प्रयास किया है। जैसा कि यह विदित है कि सामाजिक पुर्ननिर्माण का मुख्य उद्देश्य समाज में व्याप्त असमानताओं जैसे- गरीबी, अशिक्षा, बेरोजगारी, अस्वच्छता की समस्या, लैंगिक-असमानता और सामाजिक-आर्थिक असमानता को दूर करना है। इसी लक्ष्य की प्राप्ति के लिए प्रभावी सामाजिक योजनाओं

की भूमिका महत्वपूर्ण हो जाती है। ये योजनाएं समाज की वास्तविक समस्याओं की पहचान करके, इन समस्याओं के निराकरण का मार्ग प्रशस्त करती है। इस इकाई में यह स्पष्ट किया गया है की योजनाओं के उद्देश्य और वास्तविक परिणामो के बीच कई बार अंतर दिखाई देता है। में अंतर के कारण सामाजिक योजना अपने अपेक्षित प्रभाव तक नहीं पहुंच पाती है। साथ ही सी इकाई में योजना के प्रभावी क्रियान्वयन और घटकों पर भी चर्चा की गई है। सामाजिक योजनाओं को प्रभावी बनाने के उपाय और योजनाओं की सीमाओं पर भी चर्चा की गई है। अंत में, इस इकाई में सामाजिक योजनाओं की सीमाओं को दूर करने के उपायों पर भी चर्चा की गई है।

10.23 पारिभाषिक शब्दावली

1.सामाजिक पुर्ननिर्माण (social reconstruction) समाज में व्याप्त असमानताओं, विसंगतियों और को कुप्रथाओं को समाप्त करके, ऐसा नया सामाजिक ढांचा तैयार करना, जिसमें समाज के सभी व्यक्तियों को समान अवसर, सम्मान, सुरक्षा और विकास के अवसर प्रदान करवाना।

2.सामाजिक योजना (Social planning) समाज की आवश्यकताओं समस्याओं और उपलब्ध संसाधनों को ध्यान में रखकर जनकल्याण तथा समाज के विकास के लिए वैज्ञानिक प्रक्रिया से, योजनाओं का निर्माण, क्रियान्वयन और मूल्यांकन करना।

3. मूल्यांकन (Evaluation) योजना के परिणामो प्रभावशीलता की वह प्रक्रिया है जिससे योजना की प्रभावशीलता और असफलता का मापन किया जा सके।

10.24 संदर्भ ग्रंथ सूची

1. Sharma, K.L. (2018) social development in India Issue and approaches Rawat Publications page 67-72.

2. Gore M.S. (2003) social development: Changes faced in an unequal and plural society, Rawat publications page 61 - 67.

3. Singh, Y. (2010) modernization of Indian traditions Rawat publications page 138 - 143.

4. Desai, M 2005 social work in social welfare, Tata Institute of Social Science publications, page 112 -180.

5. Kapur R (2011) social policy, Planning and development in India, Regal Publication page 69 - 75.

6 Kapoor R (2011) social policy, Planning and development in India Regal Publication page 72 -78.

7. Khan, M.A. (2016) Polotical Economy of development Programs, Orient Blackswan Publications, Page 55-63.

8. Batra, P. (2017) Social Change an Public Policy in India, Sage Publications. Page 102-106.

9. Jain,s (2019) Evolution Techniques in Social Policy, ACademic Press, Page 44-50.

10. Jain,s (2019) Evolution Techniques in Social Policy, ACademic Press, Page 55-62.

10.25 निबंधधात्मक प्रश्न

1. भारत में सामाजिक पुर्ननिर्माण हेतु प्रमुख योजनाओं पर चर्चा कीजिए।

2. सामाजिक योजना के महत्व पर प्रकाश डालिए।

3. सामाजिक योजना की क्या-क्या सीमाएं हैं? चर्चा कीजिए।

4. सामाजिक योजना की सीमाओं को दूर करने के लिए आप क्या सुझाव देंगे? चर्चा कीजिए।

5. प्रभावी योजना और सामाजिक पुर्ननिर्माण के संबंध को स्पष्ट कीजिए।

इकाई -11 गैर-सरकारी संगठन की अवधारणा एवं महत्व

Concept And Importance of Non-Government Organisation

इकाई की रुपरेखा

11.1 प्रस्तावना

11 .2 उद्देश्य

11.3 गैर-सरकारी संगठन का अर्थ

11.4 गैर-सरकारी संगठन की अवधारणा

11.5 गैर-सरकारी संगठनों के निर्माण की प्रक्रिया

11.6 गैर-सरकारी संगठनों को महत्त्व प्रदान करने के कारण

11.7 गैर-सरकारी संगठनों के प्रभावशाली कार्यों के लिए आवश्यक शर्ते

11.8 सारांश

11.9 संदर्भ ग्रन्थ सूची

11.10 निबंधात्मक प्रश्न

11.1 प्रस्तावना

वर्तमान समय में विश्व के लगभग सभी राष्ट्रों का स्वरूप कल्याणकारी हो गया है। कल्याणकारी राष्ट्र की अवधारणा ने राज्य के कार्य क्षेत्र को अत्यधिक विस्तृत कर दिया है। कानूनों की संख्या में निरन्तर वृद्धि होती जा रही है। इन कानूनों को समुचित रूप से लागू करने का दायित्व कार्यपालिका पर आ जाता है। इस परिप्रेक्ष्य में लोक सेवकों (नौकरशाहों) की प्रशासन में भूमिका और भी महत्त्वपूर्ण हो जाती है। वर्तमान में राज्य का यह दायित्व है कि वह समाज के गरीब एवं पिछड़े वर्गों, बच्चों, महिलाओं आदि के कल्याण तथा विकास के लिए नई-नई नीतियों, कार्यक्रमों तथा योजनाओं का निर्माण करे। इस उत्तरदायित्व की पूर्ति के लिए शासन को बहुत बड़ी संख्या में लोक सेवकों की आवश्यकता होती है। सामाजिक कल्याण तथा विकास के कार्यों को सम्पादित करने के लिए शासन के द्वारा विभिन्न मन्त्रालयों तथा विभागों का निर्माण किया जाता है। ये विभाग सरकारी संगठन होते हैं जो औपचारिक नियमों तथा कानूनों के आधार पर अपने कार्यों का सम्पादन करते हैं। ये विभाग विभिन्न माध्यमों से अपनी योजनाओं तथा कार्यक्रमों को साधारण जनता तक पहुंचाने का प्रयास करते हैं, परन्तु

सतही स्तर (Grass-root level) तक इन कार्यक्रमों का क्रियान्वयन समुचित रूप से नहीं हो पाता है। समस्त कार्यवाही मात्र कागजी कार्यवाही बनकर फाइलों में बन्द हो जाती है। अतः ऐसी स्थिति में सामाजिक कल्याण तथा विकास के कार्य पूर्ण नहीं हो सकते हैं। सरकारी बजट का बहुत बड़ा भाग नौकरशाही की व्यवस्था करने में ही व्यय हो जाता है तथा विकास कार्यों के लिए धन की कमी उत्पन्न हो जाती है। अतः वर्तमान समय में सभी विकासशील राष्ट्र नौकरशाही के आकार को कम करने का प्रयास कर रहे हैं तथा सामाजिक कल्याण एवं विकास के कार्यों में जनता की सक्रिय सहभागिता को बढ़ाने पर विचार करने लगे हैं। इसी विचार ने गैर-सरकारी संगठनों के निर्माण की प्रक्रिया को तीव्र कर दिया है। साथ ही साथ बाजार अर्थव्यवस्था के वैश्वीकरण तथा उदारीकरण एवं प्रतिस्पर्धात्मक औद्योगिक विकास ने सरकारों को यह विचार करने के लिए विवश कर दिया कि वे अपनी भूमिका को सीमित करें।

11 .2 उद्देश्य

1. गैर-सरकारी संगठन का अर्थ को जान पाएगें।

2. इस इकाई में गैर-सरकारी संगठन की अवधारणा एवं इसके निर्माण की प्रक्रिया का अध्ययन कर पाएगें।

3. गैर-सरकारी संगठनों को महत्त्व प्रदान करने के कारण को जान पाएगें।

11.3 गैर-सरकारी संगठन का अर्थ

गैर-सरकारी संगठनों से तात्पर्य उन संगठनों से है जो समाज सेवा के भाव से प्रेरित होकर समाज सेवियों तथा बुद्धिजीवियों के द्वारा निर्मित किए जाते हैं तथा जिनका उद्देश्य समाज के पिछड़े वर्गों के कल्याण तथा विकास के लिए कार्यक्रमों का निर्माण करके तथा स्थानीय जनता की पूर्ण सहभागिता प्राप्त करके कार्यक्रमों को क्रियान्वित करना है। भारत में स्वैच्छिक संस्थाओं की संख्या निरन्तर बढ़ती ही जा रही है। ये संगठन सामाजिक कल्याण के क्षेत्र में अपनी महत्त्वपूर्ण भूमिका का निर्वहन कर रहे हैं।

औद्योगिक विकास ने सरकारों को यह विचार करने के लिए विवश कर दिया कि वे अपनी भूमिका को सीमित करें तथा विकास कार्यों में गैर-सरकारी संगठनों की भूमिका को बढ़ावा दें। गैर सरकारी संगठनों (जिन्हें स्वैच्छिक अथवा स्वयंसेवी संगठन भी कहा जाता है) से तात्पर्य उन संगठनों से है जो समाज सेवा के भाव से प्रेरित होकर समाज सेवियों तथा बुद्धिजीवियों के द्वारा निर्मित किए जाते है तथा जिनका उद्देश्य समाज के पिछड़े वर्गों के कल्याण तथा विकास के लिए कार्यक्रमों का निर्माण करके तथा स्थानीय जनता की पूर्ण सहभागिता प्राप्त करके कार्यक्रमों को क्रियान्वित करना है। भारत में ऐसे गैर-सरकारी संगठनों अथवा स्वैच्छिक संस्थाओं की संख्या निरन्तर बढ़ती ही जा रही है। ये संगठन सामाजिक कल्याण के क्षेत्र में अपनी महत्त्वपूर्ण भूमिका का निर्वहन कर रहे हैं।

11.4 गैर-सरकारी संगठन की अवधारणा

गैर-सरकारी संगठन कमीशन (2000) एक गैर-सरकारी संगठन (NGO) को किसी भी गैर-लाभकारी, स्वैच्छिक नागरिकों के समूह के रूप में परिभाषित करता है जो स्थानीय, राष्ट्रीय या अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर संगठित होता है। काम पर केंद्रित और समान रुचि वाले लोगों द्वारा संचालित, NGO कई तरह की सेवा और मानवीय कार्य करते हैं, नागरिकों की चिंताओं को सरकार तक पहुंचाते हैं, नीतियों की वकालत करते हैं और उन पर नज़र रखते हैं और जानकारी देकर राजनीतिक भागीदारी को प्रोत्साहित करते हैं। कुछ खास मुद्दों, जैसे मानवाधिकार, पर्यावरण या स्वास्थ्य के इर्द-गिर्द संगठित होते हैं।

एक गैर-सरकारी संगठन को परिभाषित करना आसान नहीं है। इसे किसी कानूनी परिभाषा पर आधारित नहीं किया जा सकता, क्योंकि गैर-सरकारी संगठन गतिविधियों से संबंधित कानूनों में बहुत ज़्यादा भिन्नताएँ हैं।

वर्ल्ड बैंक ऑपरेशनल मैनुअल (1989) गैर-सरकारी संगठन को ऐसे संगठनों के रूप में परिभाषित करता है जो पूरी तरह या काफी हद तक सरकार से स्वतंत्र होते हैं और जिनकी मुख्य पहचान कमर्शियल होने के बजाय कुछ और होती है। शब्दावली अलग-अलग होती है; उदाहरण के लिए, संयुक्त राज्य अमेरिका में उन्हें प्राइवेट वॉलंटरी ऑर्गनाइज़ेशन कहा जाता है, और ज़्यादातर अफ्रीकी गैर-सरकारी संगठन "वॉलंटरी डेवलपमेंट ऑर्गनाइज़ेशन" लेबल पसंद करते हैं। ये प्रोडक्शन से संबंधित गैर-सरकारी संगठन, उपभोक्ता और क्रेडिट कोऑपरेटिव, चैरिटेबल और धार्मिक संगठन हो सकते हैं।

11.5 गैर-सरकारी संगठनों के निर्माण की प्रक्रिया

गैर-सरकारी संगठनों (NGOs) का अपना औपचारिक संगठन और कुछ नियम होते हैं। किसी NGO के संचालकों के लिए सबसे पहले अपनी संस्था का नाम तय करना आवश्यक है। इसके बाद, इस नाम के आधार पर संस्था का अपना विधान (by-laws) बनाना भी जरूरी होता है। इस विधान में संगठन की संरचना, उद्देश्य, सेवा क्षेत्र, कार्यक्रम और वित्तीय स्थिति का विस्तृत विवरण शामिल होता है। विधान तैयार होने के बाद इसे उस जिले के सब-रजिस्ट्रार के कार्यालय में पंजीकृत कराया जाता है। किसी NGO के निर्माण के लिए कम से कम 11 सदस्यों की आवश्यकता होती है, जिनमें से 7 सदस्य कार्यकारिणी समिति के रूप में संस्था के सभी कार्यों के लिए जिम्मेदार होते हैं। NGOs को मुख्य रूप से दो भागों में विभाजित किया जा सकता है।

(1) कुछ ऐसे गैर-सरकारी संगठन होते हैं जो अपने संसाधनों से अपनी योजनाओं तथा कार्यक्रमों को पूर्ण करते हैं।

(2) कुछ गैर-सरकारी संगठन अपने स्वयं के संसाधनों के अलावा विभिन्न विभागों और मंत्रालयों से अनुदान भी प्राप्त करते हैं। भारत में ये NGOs केन्द्रीय सामाजिक कल्याण बोर्ड और अन्य मंत्रालयों जैसे समाज कल्याण, स्वास्थ्य, मानव संसाधन विकास और श्रम मंत्रालय से अनुदान पाते हैं। इस अनुदान की मदद से ये संगठन अपने कार्यक्रमों को लागू करते हैं। सरकार से अनुदान प्राप्त करने के लिए, संगठन को पहले तीन वर्षों में अपने संसाधनों के माध्यम से विभिन्न विकास और जन-कल्याण संबंधी कार्यक्रमों को पूरा करना आवश्यक होता है। इसके

साथ ही, उन्हें पिछले तीन वर्षों की बैलेंस शीट और प्रगति रिपोर्ट संबंधित विभाग के समक्ष प्रस्तुत करनी पड़ती है।

11.6 गैर-सरकारी संगठनों को महत्त्व प्रदान करने के कारण

वर्तमान समय में शासन ने गैर-सरकारी संगठनों को समाज कल्याण सम्बन्धी दायित्वों की पूर्ति करने की व्यवस्था की है। इन कार्यों को पूर्ण करने के लिए शासन तथा गैर-सरकारी संगठनों को अनुदान भी दिया जाता है। इन दायित्वों को प्रदान करने के निम्नलिखित प्रमुख कारण हैं-

1. गैर-सरकारी संगठन (NGOs) सामान्यत: अनौपचारिक संगठन होते हैं और इन्हें सरकारी विभागों जैसी औपचारिकताएँ निभाने की आवश्यकता नहीं होती। इनके काम करने का तरीका सरकारी विभागों से अलग होता है।
2. गैर-सरकारी संगठन का आम जनता से बहुत नज़दीकी संबंध होता है और वे स्थानीय समस्याओं को अच्छी तरह समझते हैं। यही कारण है कि वे आसानी से पहचान लेते हैं कि किस क्षेत्र में कौन-सा कार्यक्रम सफलतापूर्वक चलाया जा सकता है।
3. गैर-सरकारी संगठन के कार्यकर्ता अक्सर उसी क्षेत्र से संबंधित होते हैं जहाँ विकास कार्य किए जाते हैं। इससे उन्हें स्थानीय लोगों का सहयोग आसानी से मिल जाता है और कार्यक्रम की सफलता की संभावनाएँ बढ़ जाती हैं।
4. गैर-सरकारी संगठन स्थानीय लोगों से कार्यक्रमों के लिए धन भी जुटा सकते हैं क्योंकि उनका स्थानीय समुदाय के साथ निरंतर संपर्क रहता है।
5. गैर-सरकारी संगठन के प्रशासनिक कार्यों में भाग लेने से लोगों में अच्छे नागरिक बनने के गुण विकसित होते हैं। इससे उन्हें समाज और राष्ट्र के प्रति अपने दायित्वों का एहसास होता है, जो लोकतांत्रिक प्रक्रिया को मजबूत करने में मदद करता है।

11.7 गैर-सरकारी संगठनों के प्रभावशाली कार्यों के लिए आवश्यक शर्तें

मानव अधिकारों के प्रोत्साहन तथा संरक्षण के कार्यों को उपयोगी तथा प्रभावशाली बनाने के लिए, गैर-सरकारी संगठनों के लिए निम्नलिखित शर्तें अनिवार्य मानी जाती हैं:

विश्वसनीयता (Reliability)

विश्वसनीय सूचना प्रदान करना सबसे महत्वपूर्ण शर्त है क्योंकि आजकल गैर-सरकारी संगठनों की सूचनाओं पर निर्भर करना काफी विश्वसनीय हो गया है। ये संयुक्त राष्ट्र की विभिन्न समितियों को उनके द्वारा की जाने वाली पूछताछ को अपेक्षाकृत अधिक सुस्पष्ट, तथ्यात्मक तथा कम अमूर्त बनाने में सहायता करती है। किसी विषय अथवा मुद्दा-आधारित परीक्षण के लिए अधिकतर गैर-सरकारी संगठनों द्वारा प्रदान की गई सूचनाओं का

ही प्रयोग होता है। 1994 में मनमाने बंदीकरण पर संयुक्त राष्ट्र कार्यकारी समूह (UN Working Group of Arbitrary Deleutions) द्वारा उठाए गए मामलों में से 74 प्रतिशत अन्तर्राष्ट्रीय गैर-सरकारी संगठनों द्वारा, 23 प्रतिशत राष्ट्रीय गैर-सरकारी संगठनों द्वारा तथा 3 प्रतिशत परिवारों की तरफ से लाए गए हैं।

पहुँच बनाम स्वायत्तता (Access vs. Independence)

मानव अधिकार गैर-सरकारी संगठनों के लिए यह सबसे बड़ी विडम्बना है जहाँ एक गैर-सरकारी संगठन के लिए सरकार तक पहुँच आवश्यक है वहाँ यह भी उतना महत्वपूर्ण है कि जब इन संबद्ध सूचनाओं की संयुक्त राष्ट्र के मानव अधिकारों से संबंधित उच्च संगठनों तक पहुँचाने की स्थिति आये तो यह सरकार से स्वायत्त रहे। उदाहरण के लिए, जहाँ नार्वे तथा नीदरलैंड जैसे राजनीतिक उन्मुक्त समाजों में सरकार तक पहुँच अत्यधिक सुलभ है, वहाँ राजनीतिक दृष्टिकोण से कम उन्मुक्त समाजों में यह इतना आसान नहीं है। कई देशों में गैर-सरकारी संगठनों के पूर्व कार्यकर्ता राष्ट्रीय सरकारों में उच्च पदों पर आसीन है तथा संयुक्त राष्ट्र की आमसभा के सत्रों अथवा विशेष सम्मेलनों के लिए अधिकाधिक शिष्ट मंडलों में गैर-सरकारी संगठनों के प्रतिनिधियों को नियमित रूप से नियुक्त किया जाता है। इस संदर्भ में ऑस्ट्रेलिया एक आदर्श उदाहरण प्रस्तुत करता हैः 'संसद के सदस्य (जिसमें सरकार के सदस्य भी शामिल होते हैं) एक समिति का प्रतिनिधित्व करते हैं जिसे संकेतात्मक भाषा में अमेनस्टी इंटरनेशनल के लिए संसद सदस्य' (Parliamentarians for Amensty International) का नाम दिया गया है। एक अन्य रोचक प्रयोग गैर-सरकारी संगठन के साथ दो-दिन का परामर्श कार्यक्रम है जो कनाडा के विदेश मंत्रालय द्वारा हर वर्ष आयोजित किया जाता है।

वैस तथा गोरडेन्कर मानव अधिकार के अग्रणीय संरक्षकों में जैसे अमेरिका के पूर्व राष्ट्रपति जिम्मी कार्टर, नार्वे के पूर्व प्रधानमंत्री ग्रो हॉलेम बर्टलैंड तथा पूर्व डच विदेश मंत्री पीटर कूजसंस की पहुँच की एक महत्वपूर्ण माध्यम के रूप में पहचान करते हैं। इनके अतिरिक्त प्रत्येक देश में ऐसी कई महान हस्तियों हैं जैसे भारत में रजनी कोठारी, सोली सोराबजी, न्यायमूर्ति राजेन्द्र सच्चर, न्यायमूर्ति कृष्ण अय्यर, सुंदरलाल बहुगुणा, बाबा आमटे, मेधा पाटेकर, इला भट्ट, स्वामी अग्निवेश आदि। पाकिस्तान में असमा जहांगीर, आई ए रहमान, बांग्लादेश में कमाल हुसैन तथा मोहम्मद यूनूस तथा श्रीलंका में राधिक कोमारस्वामी, एटी एराइरतने। इन सभी ने मानव अधिकारों से संबंधित प्रसार एवं अभियानों में अपने देशों में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है तथा निभा रहे हैं।

प्रतिनिधित्व (Representativeness)

गैर-सरकारी संगठन वे यंत्र तथा सुविधाएँ प्रदान कर सकते हैं, जो (चाहे सरकार चाहती हो या नहीं) समाज के उस बहुसंख्यक जनसमूह की भागेदारी पर बल दे जो प्रायः राज्य की पहुँच से बाहर होता है। जैसा कि परियोजनाओं के निर्माण के संदर्भ में ब्रेटन ने टिप्पणी की हैः 'एक समय था जब प्रश्न था विकास अभिकरण आम गरीब बहुसंख्यक जनता तक किस प्रकार पहुँच सकते है? अब प्रश्न यह हो गया हैः गरीब बहुसंख्यक किस प्रकार सार्वजनिक नीतियों के निर्माताओं तक पहुँच सकते हैं? कई अध्ययनों ने परियोजना की सफलता तथा मूल स्तर पर संगठनों की भागेदारी में शक्तिशाली परस्पर संबंध पाया है। गैर-सरकारी संगठन अब निम्नलिखित क्षेत्रों में अपने अनोखे योगदान के लिए जाने जाते हैं

1. उनकी समाज के गरीब लोगों तक पहुँच की क्षमता, विशेषकर दुर्गम क्षेत्रों में।
2. उन क्षेत्रों में नवीनीकरण तथा प्रयोग करने की क्षमता जो आधिकारिक अभिकरणों के लिए कठिन होते हैं।
3. गरीब तथा सीमांत समुदायों के साथ इनके निकट संबंध यह एक ऐसी घटना है जिसे अब प्रतिनिधित्वता के नाम से जाना जाता है।
4. भागेदारी को प्रोत्साहित करने के लिए निपुणताओं की व्यापक विविधता।

अतः गैर-सरकारी संगठनों को अब 'तृतीय व्यवस्था' (Third System) का नाम दिया जाता है (अन्य दो व्यवस्थाएँ हैं: अन्तर्राष्ट्रीय तथा राष्ट्रीय आयोग) जो समाज के ऐसे बहुसंख्यक लोगों के प्रतिनिधित्व के लिए संलग्न हैं जो राज्य की पहुँच से बाहर हैं। इन्हीं में से एक कारण के परिणामस्वरूप जोन क्लार्क ने अनुमान लगाया है कि उत्तरी विश्व से प्राप्त होने वाली विकास सहायता का एक महत्वपूर्ण भाग (12 प्रतिशत) अब गैर-सरकारी संगठनों के माध्यम से आवंटित किया जाता है। सार्वजनिक नीतियों के प्रदर्शन में प्रसरणशील प्रतिनिधित्व में गैर-सरकारी संगठन योगदान दे सकते हैं परन्तु अधिकतर गैर-सरकारी संगठन मूल स्तर पर उदासीनता (grass root apathy) (यह शब्दावली फोल्लर द्वारा गढ़ी गई है) के लिए भी जाने जाते हैं अर्थात् अधिकतर गैर-सरकारी संगठन राष्ट्रीय अथवा अन्तर्राष्ट्रीय बैठकों, सम्मेलनों, कार्यशालाओं में संलग्न रहते हैं या इनकी गतिविधियाँ राज्यों की राजधानियों तक सीमित रहती हैं तथा इस प्रक्रिया में वे सशक्तीकरण के उद्देश्य से परे हो जाते हैं। गैर-सरकारी संगठनों की प्रतिनिधात्मक प्रकृति का निर्णय करने के लिए स्थापित एक नियम सामाजिक एवं आर्थिक परिषद में गैर-सरकारी संगठनों को परामर्श अवस्थिति प्रदान करने की शर्तों में मिलता है। इस नियम के अनुसार, संगठन का 'प्रतिनिधात्मक ढाँचा होना चाहिए तथा इसके पास उत्तरदायित्व का उपयुक्त रचनातंत्र होना चाहिए ताकि इसकी नीतियों तथा कार्यों पर वोटिंग के अधिकार अथवा अन्य उपयुक्त प्रजातांत्रिक तथा पारदर्शी निर्णय निर्माण प्रक्रिया द्वारा नियंत्रण आश्वस्त किया जा सके। परंतु इस प्रकार के प्रतिनिधित्व की जाँच करने का मानदंड स्पष्ट नहीं किया गया जिसने असमंजसता को भुनाने का एक अवसर दे दिया है। इस अपवित्र लाभ का फायदा समृद्ध उत्तर के गैर-सरकारी संगठनों तथा दक्षिण के अधिकतर गैर-सरकारी संगठन दोनों ने उठाया है जिसके परिणामस्वरूप ये कुछ अनैतिक मानव अधिकार सक्रियवादियों की व्यक्तिगत जागीरें बन गई हैं जो आडम्बरपूर्ण औपचारिकताओं तथा अलंकारिक शब्दाम्बर की ओट में स्वयं को छुपाए रखते हैं।

11.8 सारांश

वर्तमान समय में गैर-सरकारी संगठनों को अनेक प्रकार की समस्याओं का सामना करना पड़ रहा है। उन्हें पहले तो प्रोजेक्ट की फाइल तैयार करने में समय तथा धन खर्च करना पड़ता है और उसके पश्चात् अनुदान के लिए जिस विभाग के पास फाइल भेजी जाती है उस विभाग के चक्कर काटने पड़ते हैं, इसके पहले भी उसे अनेक चरणों से गुजरना पड़ता है। इन चरणों को पार करना गैर-सरकारी संगठनों की क्षमता से बाहर होता है तथा किसी-न-किसी चरण में फाइल लाल फीताशाही का शिकार हो जाती है तथा अपना दम तोड़ देती है। अतः

गैर-सरकारी संगठनों के द्वारा किया गया प्रयास व्यर्थ हो जाता है। इसके अतिरिक्त, संगठनों को रजिस्ट्रेशनों का नवीनीकरण कराने के लिए भी सम्बन्धित कार्यालयों का निरन्तर चक्कर काटना पड़ता है तथा नवीनीकरण कराने के लिए रिश्वत भी देनी पड़ती है।

11.9 संदर्भ ग्रन्थ सूची

उपेन्द्र बक्शी, दी फ्यूचर ऑफ ह्यूमन राइट्स, ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस, 2000।

अतुल कोहली (संपा.) दी सकसेस ऑफ इंडियाज डेमोक्रेसी कैम्ब्रिज यूनिवर्सिटी प्रेत्त, 2001|

Chambers, R. 1997. Whose reality counts? Putting the first last. London: Intermediate Technology.

Deborah, Eade 1997. Oxford Development Guidelines on Capacity Building. London: Oxford.

Diane. 2004. Transfer Agents and Global Network. New York: Association of Indian Publisher.

Gangrade K. D. 2001. Working with Community at the Grassroots Level. New Delhi: Radha Publications.

11.10 निबंधात्मक प्रश्न

1. गैर-सरकारी संगठन की अवधारणा एवं व इसके निर्माण की प्रक्रिया का वर्णन कीजिए।

2. गैर-सरकारी संगठनों को महत्त्व प्रदान करने के कारण को स्पष्ट कीजिए।

3. गैर-सरकारी संगठन का अर्थ और प्रभावशाली कार्यों के लिए आवश्यक शर्तें के बारें में विस्तार से चर्चा कीजिए।

इकाई-12 सामाजिक परिवर्तन में गैर सरकारी संगठन की भूमिका

The Role of NGOs in Social Change

इकाई की रूपरेखा

12.0 प्रस्तावना

12.1 उद्देश्य

12.2 सामाजिक परिवर्तन एवं गैर सरकारी संगठन

12.2.1 सामाजिक परिवर्तन

12.2.2 सकारात्मक सामाजिक परिवर्तन

12.2.3 गैर सरकारी संगठन

12.3 सामाजिक परिवर्तन में गैर सरकारी संगठनों की भूमिका

12.3.1 सेवा वितरण में सहायक

12.3.2 गरीबी उन्मूलन में भूमिका

12.3.3 सामाजिक सशक्तिकरण में सहायक

12.3.4 वंचित वर्गों के अधिकारों की रक्षा

12.3.5 पर्यावरणीय संरक्षण एवं संवर्धन में सहायक

12.3.6 अशिक्षा के उन्मूलन में भूमिका

12.3.7 रोजगार के क्षेत्र में सहायक

12.3.8 सामुदायिक विकास में भूमिका

12.3.9 सामाजिक जागरूकता की वृद्धि में योगदान

12.3.10 स्वास्थ्य सेवाओं के विस्तार एवं पहुँच में सहायक

12.3.11 राष्ट्र-निर्माण में उपयोगी

12.3.12 सरकारी तंत्र के लिए सहायक

12.3.13 कार्यों की पारदर्शिता एवं जवाबदेही

12.4 गैर-सरकारी संगठनों की प्रमुख चुनौतियाँ

12.4.1 वित्त सम्बन्धी चुनौतियाँ

12.4.2 स्वयंसेवकों की अनुपलब्धता

12.4.3 जटिल कानूनी संरचना

12.4.4 प्रशासनिक चुनौतियाँ

12.4.5 तकनीकी चुनौतियाँ

12.4.6 राजनीतिक हस्तक्षेप

12.4.7 सामाजिक-सांस्कृतिक चुनौतियाँ

12.5 सारांश

12.6 शब्दावली

12.7 बोध प्रश्नों हेतु उत्तर संकेत

12.8 निबन्धात्मक अभ्यास प्रश्न

12.9 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

12.10 सहायक उपयोगी पाठ्य सामग्री

12.0 प्रस्तावना (Introduction):

सामाजिक परिवर्तन सभी समाजों में घटित होने वाली एक अनवरत प्रक्रिया है। समय के साथ समाज की जनसंख्या, घनत्व, वातावरण एवं आवश्यकताओं में बदलाव होता है। यह बदलाव सकारात्मक एवं नकारात्मक दोनों प्रकार के परिणाम उत्पन्न करता है। कई बार किसी सामाजिक बदलाव को लाने के लिए कुछ विशेष सामूहिक प्रयास की आवश्यकता होती है, तो कई बार किसी सामाजिक बदलाव की गति को रोकने अथवा कम करने के लिए कुछ विशेष सामूहिक प्रयासों की आवश्यकता होती है। इन सामूहिक प्रयासों में बहुत से सामाजिक संगठन अपनी सचेष्ट भूमिका निभाते हैं। गैर सरकारी संगठन जिनको एनजीओ के नाम से जाना जाता है वह भी इनमें से एक हैं। गैर सरकारी संगठन सामाजिक परिवर्तन के लिए आवश्यकतानुसार उत्प्रेरक का कार्य करते हैं।

भारत देश का पहला पंजीकृत गैर सरकारी संगठन `द बंगाल होम इंडस्ट्रीज एसोसिएशन` रहा है, जो रवीन्द्रनाथ टैगोर जी के भतीजे श्री गगनेंद्र नाथ टैगोर के द्वारा 1917 में, कोलकाता में हथकरघा बुनकरों और कलाकारों के सहायतार्थ स्थापित किया गया था। यह अधिनियम भारतीय कंपनी अधिनियम 1917 के अंतर्गत स्थापित किया गया था। अपने विभिन्न प्रयासों के द्वारा इस प्रकार गैर सरकारी सामाजिक संगठन परिवर्तन की गति को बढ़ाने अथवा कम करने में अपना योगदान देते हैं। इस इकाई में सबसे पहले संक्षेप में सामाजिक परिवर्तन तथा गैर सरकारी संगठन का परिचय दिया गया है। इसके बाद सामाजिक परिवर्तन में गैर सरकारी संगठनों की भूमिका का विवेचन करने का प्रयास किया गया है। इस इकाई में यह भी बताने का प्रयत्न किया गया है कि गैर सरकारी संगठनों की प्रमुख सामाजिक चुनौतियां कौन-कौन सी हो सकती हैं। क्योंकि सामाजिक चुनौतियों के कारण कई बार गैर सरकारी संगठन अपने प्रयास में अपेक्षाकृत सफलता प्राप्त करने से चूक जाते

हैं। ऐसे में यह इकाई सामाजिक परिवर्तन में गैर सरकारी संगठनों की भूमिका की दृष्टिकोण से महत्वपूर्ण है। यह इकाई शिक्षार्थियों को सामाजिक परिवर्तन एवं गैर सरकारी संगठन को समझने में नवीन दृष्टिकोण प्रदान करेगी।

बोध प्रश्न 1: भारत के पहले पंजीकृत गैर सरकारी संगठन के विषय में संक्षेप में बताइये।

.....

.....

.....

.....

12.1 उद्देश्य (Objectives):

इस इकाई के अध्ययन के बाद आप-

- गैर-सरकारी संगठन और सामाजिक परिवर्तन की अवधारणा से परिचित हो सकेंगे।
- सामाजिक परिवर्तन में गैर-सरकारी संगठनों की भूमिका को समझ सकेंगे।
- गैर सरकारी संगठनों की प्रमुख चुनौतियों को जान सकेंगे।

12.2 सामाजिक परिवर्तन एवं गैर सरकारी संगठन

निर्देशित सामाजिक परिवर्तन के दृष्टिकोण से गैर सरकारी संगठनों की भूमिका सामाजिक परिवर्तन में महत्वपूर्ण होती है। इनके संबंधों की विस्तृत व्याख्या से पूर्व संक्षेप में अलग-अलग अर्थों में सामाजिक परिवर्तन एवं गैर सरकारी संगठनों को समझना इकाई को समझने के दृष्टिकोण से महत्वपूर्ण होगा। सामाजिक परिवर्तन एवं गैर सरकारी संगठनों का संक्षिप्त परिचय निम्नलिखित रूप में दिया जा रहा है-

12.2.1 सामाजिक परिवर्तन (Social Change):

सामाजिक परिवर्तन को सामाजिक संबंधों, सामाजिक संरचना या इसके किसी पक्ष होने वाले ऐसे बदलाव को कहते हैं, जो एक निश्चित समय अंतराल के बाद आता है और अपेक्षाकृत दीर्घकालिक एवं स्थायी होता है। दूसरे शब्दों में, सामाजिक परिवर्तन को सामाजिक संगठन एवं व्यवस्था में आए परिवर्तन से जाना जा सकता है। जैसा कि किंग्सले डेविस ने कहा है कि `परिवर्तन से हमारा तात्पर्य उन परिवर्तनों से है, जो सामाजिक संगठन अर्थात समाज की संरचना और प्रकार्यों में घटित होते हैं।` `सोसाइटी` पुस्तक के लेखक मेकाईवर एवं पेज ने सामाजिक संबंधों में होने वाले परिवर्तन को ही सामाजिक परिवर्तन माना है। इस प्रकार कहा जा सकता है कि सामाजिक परिवर्तन को सामाजिक संगठन, सामाजिक संरचना, सामाजिक व्यवस्था में होने वाले ऐसे बदलावों के रूप में समझा जा सकता है, जो एक निश्चित समय अंतराल से पूर्व की अवस्था से भिन्न होते हैं और जो सापेक्षिक रूप से दीर्घकाल के लिये व्यवस्था में बने रहते हैं।

बोध प्रश्न 2: सामाजिक परिवर्तन से क्या तात्पर्य है?

.....

.....

.....

.....

12.2.2 सकारात्मक सामाजिक परिवर्तन (Positive Social Change):

सकारात्मक सामाजिक परिवर्तन को हम ऐसे व्यापक और वांछित सामाजिक परिवर्तन के रूप में जान सकते हैं, जिनसे समाज में एक निश्चित दिशा की ओर परिवर्तन को बल मिलता है। सकारात्मक सामाजिक परिवर्तन सक्रिय और निरंतर प्रयासों के परिणाम के रूप में होते हैं, जिनका लक्ष्य विभिन्न क्षेत्रों में समाज कल्याण, सामाजिक सुधार करके उत्तम और अनुकूल मानवीय परिस्थितियों का निर्माण करना है। सकारात्मक सामाजिक परिवर्तन का उद्देश्य सामाजिक समस्याओं का निदान और उन्मूलन भी है। सकारात्मक सामाजिक

परिवर्तन के लिए किए गए प्रयासों के बेहतर परिणाम तब सामने आते हैं जब आम जनता, स्थानीय, राज्य एवं राष्ट्रीय निकाय, सरकारी एवं गैर सरकारी संगठन संयुक्त रुप से क्रियाशील होते हैं।

गैर सरकारी संगठनों का संबंध मुख्य रूप से सकारात्मक सामाजिक परिवर्तन से ही होता है। गैर सरकारी विभिन्न सामाजिक क्षेत्रों में समस्याओं के उन्मूलन हेतु अपने पूर्वनिश्चित लक्ष्यों के अनुसार कार्य करते हैं। गैर सरकारी संगठनों के इन प्रयासों का मुख्य उद्देश्य सामाजिक वृद्धि और विकास को प्राप्त करना है। यह सभी सकारात्मक सामाजिक परिवर्तन से संबंधित हैं।

बोध प्रश्न 3: सकारात्मक सामाजिक परिवर्तन क्या है?

.....

.....

.....

.....

12.2.3 गैर सरकारी संगठन (Non-Governmental Organization NGOs):

गैर सरकारी संगठन एक निजी एवं स्वैच्छिक संगठन है जो सरकारी नियंत्रण से स्वतंत्र होता है। गैर सरकारी संगठनों का निर्माण समाजसेवियों एवं बुद्धिजीवियों के द्वारा समाज कल्याण एवं सेवा भाव के उद्देश्यों को ध्यान में रखते हुए किया जाता है। गैर सरकारी संगठनों के अपने नियामक और अपनी औपचारिकताएं होती हैं। गैर सरकारी संगठनों के निर्माण के लिए संस्था का एक विशिष्ट नाम, संस्था के लिए नियामक नियम (जैसे- संस्था के गठन, उद्देश्य, सेवा क्षेत्र का विवरण, कार्यक्रम एवं वित्तीय स्थिति के सम्बन्ध में लेखा जोखा आदि), विभिन्न पदाधिकारी एवं उनकी स्पष्ट पृष्ठभूमि, सात सदस्यों की कार्यकारिणी समिति, अन्य सदस्य आदि आवश्यक शर्तें हैं। गैर सरकारी संगठन समाज के भिन्न-भिन्न क्षेत्रों जैसे, सामाजिक-सांस्कृतिक, मानवीय, स्वास्थ्य संबंधित, पर्यावरणीय, वन्य संपदा एवं जीव-जंतु संरक्षण संबंधी आदि क्षेत्रों में विकास एवं संरक्षण संबंधी कार्यों में सहयोग प्रदान करता है। गैर सरकारी संगठनों का निर्माण गैर लाभकारी होता है। स्वायत रूप से

यह किसी सामाजिक क्षेत्र में चुनौतियों से निपटने के लिए विशिष्ट उद्देश्यों के तहत कार्यरत होते हैं। गैर सरकारी संगठन कानूनी रूप से पंजीकृत हो भी सकते हैं और नहीं भी। गैर सरकारी संगठनों के आर्थिक मद की व्यवस्था निजी तौर पर दान, सदस्यता शुल्क, सरकारी अनुदान आदि पर निर्भर करता है।

बोध प्रश्न 4: गैर सरकारी संगठन किसे कहते हैं?

.....

.....

.....

.....

12.3 सामाजिक परिवर्तन में गैर सरकारी संगठनों की भूमिका

सामाजिक परिवर्तन में गैर सरकारी संगठनों की भूमिका किस प्रकार हो सकती है? गैर सरकारी संगठन कैसे सामाजिक परिवर्तन के दिशा को तय करने में सहायक होते हैं? इन सभी का प्रतिउत्तर निम्नलिखित बिंदुओं के माध्यम से दिया जा सकता है-

12.3.1 सेवा वितरण में सहायक (Service Delivery Assistant):

ग़ैर सरकारी संगठन समाज की व्यवस्था एवं सरकारी तंत्र के बीच एक पुल का कार्य करते हैं। विभिन्न सामाजिक क्षेत्रों में सामाजिक संगठन, सेवाओं और संसाधनों के वितरण में सहायक प्रणाली के रूप में कार्य करते हैं। गैर सरकारी संगठनों के निर्माण में सेवन भाव की प्रेरणा प्राथमिक है। उनके इस कार्य के द्वारा समाज में व्यवस्था और प्रगति के लक्ष्य को प्राप्त करने में सहायता मिलती है। इस प्रकार गैर सरकारी संगठन सेवाओं के वितरण में सहायक होते हैं।

12.3.2 गरीबी उन्मूलन में भूमिका (Role in Poverty Alleviation)

समाज में सकारात्मक परिवर्तन को प्राप्त करने के लिए गरीबी उन्मूलन के लक्ष्यों को प्राप्त करना आवश्यक है। गैर सरकारी संगठन विभिन्न प्रयासों के द्वारा गरीबी उन्मूलन में अपना योगदान देते हैं। गैर सरकारी संगठन सामाजिक विकास के विभिन्न पक्षों पर लक्ष्य केंद्रित करके कार्य करते हैं। ये संगठन महिला सशक्तिकरण, बाल कल्याण, विभिन्न वर्गों के लिए शिक्षा और उन संसाधनों की व्यवस्था आदि द्वारा देश में गरीबी उन्मूलन करके भारत को एक समृद्ध राष्ट्र बनाने में देश को मदद पहुँचाते हैं। भारतीय एवं अंतरराष्ट्रीय स्तर पर ग्रामीण संगठन, हिन्दराइस फाउंडेशन, बाल रक्षा भारत आदि जैसे गैर सरकारी संगठन गरीबी उन्मूलन हेतु शिक्षा, कौशल, आजीविका तब विभिन्न प्रकार के प्रशिक्षण के माध्यम से गरीबी उन्मूलन में अपना योगदान देते हैं।

12.3.3 सामाजिक सशक्तिकरण में सहायक (Helps in Social Empowerment)

गैर सरकारी संगठन विविध क्षेत्रों में योगदान देकर अपने देश के सामाजिक सशक्तिकरण में सहायक होते हैं। एक सशक्त समाज का निर्माण तभी हो सकता है, जब सभी सामाजिक क्षेत्रों में समान रूप से आवश्यकता के अनुसार सेवाओं, वस्तुओं एवं संसाधनों का वितरण सुनिश्चित हो सके। इस प्रकार एनजीओ विविध क्षेत्रों में योगदान देकर सामाजिक सशक्तिकरण में, निर्देशित सामाजिक परिवर्तन में केंद्रीय भूमिका निभाते हैं।

12.3.4 वंचित वर्गों के अधिकारों की रक्षा (Protecting the Rights of the Underprivileged):

विभिन्न सामाजिक क्षेत्रों के गैर सरकारी संगठन विभिन्न क्षेत्रों में मानवाधिकारों की स्थापना के लिए संघर्षरत रहते हैं। इस प्रकार यह संगठन महिला कल्याण, बाल कल्याण, दिव्यांगजन, एवं अन्य वंचित वर्गों के अधिकारों की रक्षा के लिए तत्पर होते हैं। इन प्रयासों के द्वारा समाज में शोषण और असमानता के उन्मूलन में मदद मिलती है। और समाज में निर्दिष्ट लक्ष्यों के अनुसार सामाजिक परिवर्तन को बल मिलता है। बाल रक्षा भारत, राइट्स एंड यू, एमनेस्टी इंटरनेशनल, असोसियेशन फॉर प्रोटेक्शन ऑफ सिविल राइट्स, पीपल्स यूनियन फॉर डेमोक्रेटिक राइट्स आदि जैसे गैर सरकारी संगठन राष्ट्रीय एवं अंतरराष्ट्रीय स्तर पर बच्चों, महिलाओं, निर्धन एवं सीमान्त समुदाय के लोगों के अधिकारों की रक्षा के लिए सक्रिय भूमिका निभा रहे हैं।

12.3.5 पर्यावरणीय संरक्षण एवं संवर्धन में सहायक (Helpful in Environmental Protection and Conservation):

कई प्रकार के गैर सरकारी संगठन पर्यावरणीय संरक्षण एवं संवर्धन के लिए अपने प्रयासों द्वारा तत्पर रहते हैं। इस प्रकार के गैर सरकारी संगठन जहाँ एक तरफ पर्यावरण प्रदूषण को नियंत्रित करने में अग्रणी भूमिका निभाते हैं, वहीं वर्तमान समय में एनजीओ की भूमिका पर्यावरण संबंधी नीतियों के निर्माण में, पर्यावरण संरक्षण हेतु जन समर्थन के लिए, वृक्षारोपण, जीव-जंतु संरक्षण आदि हेतु भी महत्वपूर्ण है। पर्यावरण के क्षेत्र में कार्य करने वाले प्रमुख राष्ट्रीय एवं अंतर्राष्ट्रीय गैर सरकारी संगठनों में तरुण भारत संघ (जल संरक्षण हेतु), वर्ल्ड वाइल्डलाइफ फंड, संयुक्त राष्ट्र पर्यावरण कार्यक्रम (यूएनईपी), पेटा, स्वच्छता के क्षेत्र में सुलभ इंटरनेशनल, रिलीफ इंडिया ट्रस्ट, सेवियर फाउंडेशन तथा हेल्पिंग हैंड इंडिया आदि महत्वपूर्ण हैं।

12.3.6 अशिक्षा के उन्मूलन में भूमिका (Helpful in Eradicating Illiteracy):

सामाजिक विकास और प्रगति की लक्ष्य प्राप्ति हेतु समाज में सभी का शिक्षित और योग्य होना एक आवश्यक शर्त है। अनेकों गैर सरकारी संगठन सामाजिक प्रगति एवं परिवर्तन के लक्षित उद्देश्यों को प्राप्त करने के लिए विभिन्न शैक्षिक समस्याओं के समाधान एवं संसाधनों को मुहैया कराने के लिए प्रयासरत रहते हैं। इस प्रकार गैर सरकारी संगठन अशिक्षा के उन्मूलन में अपनी महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। एजुकेट गर्ल्स, स्माइल फाउंडेशन, प्रथम, प्रोजेक्ट नन्ही कली आदि जैसे भारतीय एनजीओ अशिक्षा उन्मूलन हेतु सक्रिय रूप से अपना योगदान दे रहे हैं। यह एनजीओ शिक्षक प्रशिक्षण, गुणवत्तापूर्ण शिक्षा जैसे स्मार्ट क्लास रूम उपलब्ध कराना, डिजिटल शिक्षण उपकरणों की व्यवस्था, समग्र शिक्षा तक विद्यार्थियों की पहुँच, शिक्षा हेतु सामाजिक जागरूकता आदि की व्यवस्था करने पर अपना ध्यान केंद्रित करते हैं।

12.3.7 रोजगार के क्षेत्र में सहायक (Helpful in the Field of Employment):

ग़ैर सरकारी संगठन रोजगार के क्षेत्र में दो प्रकार से सहायक होते हैं। एक तो स्वयं गैर सरकारी संगठन प्राप्त अनुदान से आवश्यकता के अनुसार लोगों को रोजगार मुहैया कराते हैं और दूसरा विभिन्न प्रकार से लोगो

में शिक्षा और विभिन्न प्रकार के कौशल का विकास करके विभिन्न सामाजिक क्षेत्रों में लोगों को उपलब्ध रोजगार के योग्य बनाते हैं। इसमें स्वयं सहायता समूहों को प्रशिक्षण देना, निजी व्यवसाय के लिए लोगों को प्रशिक्षित करना, लोगो में कौशल विकास करना आदि महत्वपूर्ण है। यूनीसेफ, अमेरिकन इंडिया फाउण्डेशन (एआईएफ), सेव द चिल्ड्रेन, जागोरी, सेक्टर स्किल काउंसिल आदि अंतरराष्ट्रीय एवं राष्ट्रीय गैर सरकारी संगठन शिक्षा एवं रोजगार के क्षेत्र में आवश्यकता के अनुसार लक्षित समूह को परामर्श, प्रशिक्षण, कानूनी एवं वित्तीय सहायता प्रदान करके उनकी आत्मनिर्भरता में सहायता करते हैं।

12.3.8 सामुदायिक विकास में भूमिका (Role in Community Development):

गैर सरकारी संगठन विभिन्न क्षेत्रों में जैसे सामाजिक सांस्कृतिक, शैक्षिक, आर्थिक एवं रोजगार संबंधी, स्वास्थ्य संबंधी, हिंसा अपराध रोकथाम आदि संबंधी अपने प्रयासों के द्वारा सतत सामुदायिक विकास को सुनिश्चित करने में अपनी भूमिका निभाते हैं। इस प्रकार गैर सरकारी संगठनों द्वारा सामुदायिक विकास में दिये गए योगदान से सामाजिक परिवर्तन की दिशा निर्देशित और नियंत्रित करने में सहायता मिलती है।

12.3.9 सामाजिक जागरूकता की वृद्धि में योगदान

गैर सरकारी संगठनों की प्रवृत्ति सहायतापरक और समस्या उन्मूलन की होती है। लोगों और समुदायों की मदद करना गैर सरकारी संगठन के केंद्रीय मूल्यों में से एक है। एक विशिष्ट प्रकार का गैर सरकारी संगठन जिस क्षेत्र के लिए कार्यरत होता है, वह अपने उद्देश्यों के अनुसार, पूर्व निर्धारित लक्ष्य और स्थान के अनुसार लोगों की सामाजिक जागरूकता में वृद्धि करता है। विशिष्ट बदलाव लाने के उद्देश्य से गैर सरकारी संगठन अपने स्वयंसेवकों और सरकारी तंत्र के साथ मिलकर कार्य करते हैं।

12.3.10 स्वास्थ्य सेवाओं के विस्तार एवं पहुँच में सहायक

अनेकों गैर सरकारी संगठन स्वास्थ्य सेवाओं एवं इनकी पहुँच को बेहतर बनाने के लिए प्रयासरत रहे हैं। गैर सरकारी संगठनों की यह भूमिका तब और भी अधिक महत्वपूर्ण हो जाती है जब उनके द्वारा चिन्हित

किया गया स्थान और समुदाय, पिछड़े इलाकों से आता हो। इस प्रकार स्वास्थ्य सेवाओं की पहुँच एवं गुणवत्ता को बेहतर बनाने की दृष्टिकोण से गैर सरकारी संगठन अपनी महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। भारत में ग्रामीण एवं शहरी इलाकों में स्वास्थ्य एवं चिकित्सा के क्षेत्र में प्रमुख रूप से गूंज, स्माइल फाउंडेशन, हेल्पेज इंडिया, स्नेहा, निर्मला फाउंडेशन, जन संजीवनी ट्रस्ट आदि जैसे गैर सरकारी संगठन अपना प्रमुख योगदान दे रहे हैं, जो विभिन्न प्रकार के पोषण कार्यक्रम, जागरूकता अभियान, आपदा राहत चिकित्सा, समय-समय पर चिकित्सा शिविरों का आयोजन, मोबाइल क्लिनिक की व्यवस्था, एम्बुलेंस की व्यवस्था आदि के द्वारा अपने लक्ष्यों की प्राप्ति के लिए तत्पर रहते हैं।

12.3.11 राष्ट्र-निर्माण में उपयोगी (Useful in Nation Building):

गैर सरकारी संगठनों की भूमिका राष्ट्र निर्माण में उपयोगी है। गैर सरकारी संगठन राष्ट्र निर्माण के लिए नागरिक समाज के रीढ़ के रूप में कार्य करते हैं। यह सामाजिक समस्याओं के समाधान में सहायक हैं, कौशल एवं विकास के क्षेत्र में सक्रिय हैं, समुदायों एवं सामुदायिक भागीदारी को विभिन्न क्षेत्रों में सशक्त बनाने का कार्य करते हैं। इन सभी क्रियाओं के द्वारा ये गैर सरकारी संगठन राष्ट्र निर्माण को बढ़ावा देते हैं।

12.3.12 सरकारी तंत्र के लिए सहायक (Assistant to the Government Machinery):

गैर सरकारी संगठन किसी भी समाज में सरकार का हिस्सा नहीं होते इसके बावजूद भी गैर सरकारी संगठनों के कुछ कार्यों का संपादन सरकारी तंत्र के साथ मिलकर भी होता है। इसके साथ ही कई ऐसे कार्य हैं, जैसे आपदा एवं राहत बचाव कार्य, जिसमें गैर सरकारी संगठन सरकारी एजेंसियों के साथ-साथ समानांतर रूप से सहयोग प्रदान करते हैं। इस प्रकार गैर सरकारी संगठन सरकारी तंत्र के लिए सहायक होते हैं।

बोध प्रश्न 5: गैर सरकारी संगठन सामाजिक नियन्त्रण में किस प्रकार सहायक है? कोई दो उदहारण दीजिये।

.....

.....

.....

12.4 गैर-सरकारी संगठनों की प्रमुख चुनौतियाँ (Major Challenges faced by NGOs):

गैर सरकारी संगठन किसी समाज के विकास, समृद्धि एवं उन्नति के लिये समाज के महत्वपूर्ण अंग के रूप में कार्य करते हैं। आधुनिक समाज, जहाँ सभी सामाजिक क्षेत्रों में समस्याओं की भरमार है, यहाँ पर गैर सरकारी संगठनों की भूमिका और भी अधिक महत्वपूर्ण हो जाती है। इन सभी वास्तविकताओं के साथ यह भी सत्य है कि कार्यों के संपादन के दौरान गैर सरकारी संगठनों को अपने कार्यक्षेत्र में अनेक चुनौतियों का सामना करना पड़ता है। यह चुनौतियां इन संगठनों के प्रभावी कार्य संचालन और विस्तार में बाधा डालती हैं। गैर सरकारी संगठनों के समक्ष आने वाली कुछ प्रमुख चुनौतियों को निम्नलिखित रूप में स्पष्ट किया जा सकता है-

12.4.1 वित्त सम्बन्धी चुनौतियाँ (Financial Challenges):

गैर सरकारी संगठनों के समक्ष बड़ी चुनौतियों में से एक चुनौती वित्तपोषण की है। गैर सरकारी संगठन ने वित्त की निर्बाध व्यवस्था उनके संचालन को बेहतर बनाती है, किंतु इसकी कमी गैर सरकारी संगठनों के कार्यों की पूर्ति को रोक देती है। कई संगठन अनुदान की व्यवस्था के लिये सीएसआर (कॉर्पोरेट सोशल रेस्पोंसिबिलिटी) और सामान्य अनुदान पर निर्भर करते हैं, किंतु इनकी निश्चितता और निरंतरता को तय करना एक कठिन कार्य है। कभी तो इन संगठनों को अनुदान मिल जाता है, तो कभी ये अनुदान से वंचित रह जाते हैं। इस प्रकार गैर सरकारी संगठनों के समक्ष वित्तीय अस्थिरता और बाधाएं एक बड़ी चुनौती के रूप में है। आंकड़े बताते हैं कि 70 प्रतिशत एनजीओ को परियोजनाओं के लिए निरंतर वित्त प्राप्त करने में बाधा होती है। अधिकांश तौर पर वित्त संबंधी चुनौती से छोटे और स्थानीय स्तर के गैर सरकारी संगठन अपेक्षाकृत अधिक प्रभावित होते हैं।

12.4.2 स्वयंसेवकों की अनुपलब्धता (Unavailability of Volunteers):

गैर सरकारी संगठनों में स्वयंसेवकों की कमी इनकी कार्यप्रणाली को प्रभावित करती है। किसी भी संगठन के सफल संचालन के लिए आवश्यकतानुसार दक्ष और कुशल स्वयंसेवकों का होना आवश्यक है। योग्य और कुशल स्वयंसेवकों के द्वारा परिणामों की निश्चितता और प्रभाविता को बढ़ाया जा सकता है। कई बार ऐसा भी पाया जाता है कि स्वयंसेवकों को बदलती सामाजिक परिस्थितियों में भूमिका दूरी होने लगती है, कई बार वे भावनात्मक तौर पर सुदृढ़ नहीं होते और नियमों में लचीलेपन की कमी की वजह से भी कार्यकारी स्वयंसेवकों का उत्साह कुछ कम हो जाता है। इससे गैर सरकारी संगठनों के उद्देश्यों पर विपरीत प्रभाव पड़ता है।

12.4.3 जटिल कानूनी संरचना (Complex legal Structure):

जटिल कानूनी संरचना भी गैर सरकारी संगठनों की कार्यशैली को कुप्रभावित करती है। इन जटिल कानूनी संरचनाओं में कई अधिनियमों जैसे सोसाइटी राजिस्ट्रेशन ऐक्ट, ट्रस्ट ऐक्ट, कंपनी एक्ट की धाराओं के अंतर्गत पंजीकरण कराना सम्मिलित है। इसके अतिरिक्त फॉरेन कॉन्ट्रिब्यूशन रेग्युलेशन ऐक्ट (एफसीआरए) के नियमों का पालन न किए जाने पर किसी भी गैर सरकारी संगठन का लाइसेंस निलंबित हो सकता है। 12A एवं 80G का पंजीकरण कर में छूट के लिए अनिवार्य है, किंतु यह एक लंबी प्रक्रिया है और इसके बिना सीएसआर एवं अंतर्राष्ट्रीय दान मिलना संभव नहीं है। वित्त संबंधी जटिल कानूनी कार्यों में आयकर रिटर्न, वार्षिक रिपोर्ट और जीएसटी का रिटर्न समय पर दाखिल न करना एनजीओ के दंडात्मक कार्यवाहियों और पंजीकरण निलंबन का एक बड़ा कारण हो सकता है।

12.4.4 प्रशासनिक चुनौतियाँ (Administrative Challenges)

ग़ैर सरकारी संगठनों के समक्ष कार्य करने के दौरान प्रशासनिक चुनौतियों का भी सामना होता है। छोटे और स्थानीय गैर सरकारी संगठनों के लिए कुशल कर्मचारियों की नियुक्ति करना तथा उन्हें बनाए रखना,

डिजिटल उपकरणों की कमी होना, अपने कार्यक्रमों एवं प्रशासनिक कार्यों के बीच संतुलन बनाए रखना, अनावश्यक सरकारी जांचों से बचना और अपनी विश्वसनीयता को बनाए रखना आदि जैसी प्रशासनिक चुनौतियों का सामना करना पड़ता है। कई बार यह चुनौतियां व्यापक स्तर पर कार्यरत राष्ट्रीय और अंतरराष्ट्रीय स्तर के गैर सरकारी संगठनों के लिए भी गंभीर रूप से सामने आती हैं।

12.4.5 तकनीकी चुनौतियाँ (Technical Challenges):

गैर सरकारी संगठनों की तकनीकी चुनौतियों में से प्रमुख चुनौतियां आधुनिक उपकरणों का अभाव, पर्याप्त आईटी सपोर्ट करना होगा, कर्मचारियों एवं लाभार्थियों दोनों में डिजिटल साक्षरता की कमी होना, साइबर अपराधों का भय, तकनीकी में तेजी से परिवर्तन और विभिन्न प्रकार के तकनीकी मंचों का आवश्यकता और उद्देश्य के अनुसार एकीकृत न हो पाना सम्मिलित है।

12.4.6 राजनीतिक हस्तक्षेप (Political Interference):

गैर सरकारी संगठनों में राजनैतिक हस्तक्षेप भी एक बड़ी चुनौती है, जो उनकी स्वायत्तता, स्वतंत्रता, कार्यशैली, वित्त व्यवस्था एवं प्रभावशीलता को कुप्रभावित कर सकता है। कई बार राजनैतिक हस्तक्षेप के कारण गैर सरकारी संगठनों को राजनीतिक दबाव में कार्य करना पड़ता है, तो कई बार सरकारी नीतियों के विरुद्ध कार्य करने के लिए उन्हें अकारण ही कई प्रकार के प्रतिरोधों जिनमें, कार्यालय पर छापे, कर्मचारियों की गिरफ्तारी, आर्थिक दंड आदि का सामना करना पड़ता है। इन सभी के पीछे राजनीतिक हस्तक्षेप संबंधी कारण विद्यमान हो सकते हैं। यह सभी गैर सरकारी संगठनों की स्वतंत्र कार्यशैली के लिए गंभीर चुनौतियां उत्पन्न करते हैं।

12.4.7 सामाजिक-सांस्कृतिक चुनौतियाँ (Socio-Cultural Challenges)

गैर सरकारी संगठनों के समक्ष अपने लक्षित क्षेत्र में सामाजिक-सांस्कृतिक चुनौतियों का भी सामना करना पड़ता है। ऐसा पाया गया है कि यदि कोई गैर सरकारी संगठन निर्देशित सामाजिक परिवर्तन जैसे विकास

समृद्धि के किसी एजेंडे पर कार्य कर रहा होता है, तो स्थानीय रीति रिवाजों से होने वाले टकरावों के कारण उसे वांछित परिणाम प्राप्त नहीं हो पाते। जातिवाद, सांप्रदायिकता, क्षेत्रवाद, लैंगिक असमानता आदि जैसे सामाजिक सांस्कृतिक कारक गैर सरकारी संगठनों के मार्ग में बड़ी बाधा बन कर सामने आते हैं। इन सभी कारकों के कारण दूर-दराज और हाशिए पर रहने वाले समुदायों तक पहुँचना और उनकी समस्याओं का निदान और समाधान करना अत्यधिक चुनौतीपूर्ण हो जाता है।

बोध प्रश्न 6: गैर सरकारी संगठनों की वित्त सम्बन्धी चुनौतियाँ क्या हैं?

.....

.....

.....

.....

12.5 सारांश (Conclusion):

उपरोक्त विवेचन के आधार पर संक्षेप में कहा जा सकता है कि सामाजिक परिवर्तन और गैर सरकारी संगठनों का संबंध घनिष्ठ एवं विशिष्ट है। सामाजिक परिवर्तन प्रत्येक देश, काल एवं परिस्थिति में होने वाली एक अवश्यंभावी घटना है, जिसे रोका नहीं जा सकता। सामाजिक परिवर्तन के परिणाम सकारात्मक भी होते हैं और नकारात्मक भी। गैर सरकारी संगठनों की भूमिका सामाजिक परिवर्तन में महत्वपूर्ण मानी जा सकती है, क्योंकि ये संगठन स्वतंत्रता के साथ सामाजिक हितों के लिए क्रियाशील रहते हैं। इन संगठनों के माध्यम से नकारात्मक सामाजिक परिवर्तन की गति को नियंत्रित करके उसकी दिशा को मोड़ कर उसके नकारात्मक प्रभावों को रोका जा सकता है और इन्हीं संगठनों के माध्यम से सकारात्मक सामाजिक परिवर्तन जैसे राष्ट्रीय व्यवस्था के समृद्धि, प्रगति एवं विकास के लक्ष्यों को प्राप्त करने में सहायता मिलती है। इस प्रकार गैर सरकारी संगठन जहाँ एक ओर सामाजिक व्यवस्था को बनाए रखने में अपना योगदान देते हैं, वहीं समाज की प्रगति एवं विकास को सुनिश्चित करने में अपनी महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। सामाजिक संगठन के बने रहने हेतु समाज

में व्यवस्था एवं प्रगति में संतुलन होना अनिवार्य है। गैर सरकारी संगठन विभिन्न सामाजिक क्षेत्रों में इन लक्ष्यों को प्राप्त करने हेतु संघर्षरत रहते हैं।

इस इकाई के माध्यम से गैर सरकारी संगठन एवं सामाजिक परिवर्तन का संक्षेप में अवधारणात्मक विवेचन किया गया है। इसके बाद सामाजिक परिवर्तन में गैर सरकारी संगठनों की भूमिका का विस्तृत विवेचन प्रस्तुत करते हुए यह स्पष्ट किया गया है कि किन-किन तरीकों से गैर सरकारी संगठन सामाजिक परिवर्तन में अपनी भूमिका निभाते हैं। अंतिम रूप से इस इकाई में चुनौतियों के रूप में उन कारकों की व्याख्या की गई है, जो गैर सरकारी संगठनों के समक्ष चुनौतियों के रूप में सामने आते हैं। इन चुनौतियों में प्रमुख रूप से वित्त संबंधी चुनौतियां, स्वयं सेवकों और कर्मचारियों की अनुपलब्धता, जटिल कानूनी संरचना, प्रशासनिक चुनौतियां, तकनीकी चुनौतियां, राजनीतिक हस्तक्षेप सामाजिक-सांस्कृतिक चुनौतियों को प्रमुख रूप से विवेचित किया गया है। यह इकाई शिक्षार्थियों के लिए सामाजिक परिवर्तन एवं गैर सरकारी संगठनों के संबंधों को समझने के दृष्टिकोण से महत्वपूर्ण है।

12.6 शब्दावली (Glossary):

- **गैर सरकारी संगठन अथवा एनजीओ (Non-Government Organisation):** गैर सरकारी संगठन अथवा एनजीओ का तात्पर्य एक ऐसे गैर सरकारी और गैर लाभकारी समूह या संस्था से होता है जो स्वतंत्र रूप से किसी विशिष्ट सामाजिक उद्देश्य अथवा उद्देश्यों की प्राप्ति हेतु प्रयासरत रहते हैं। जैसे- सामाजिक सांस्कृतिक, मानवाधिकार संबंधी, स्वास्थ्य एवं कल्याण संबंधी, निर्धनता एवं अशिक्षा संबंधी एवं अन्य सामाजिक क्षेत्रों से सम्बंधित गैर सरकारी गैर लाभकारी एवं कानूनी रूप से पंजीकृत समूह। संक्षेप में, एनजीओ को समाज में सकारात्मक परिवर्तन लाने वाले एक ऐसे समूह और संगठन के रूप में जाना जा सकता है, जो सरकार से अलग होने के बावजूद भी आवश्यकता के अनुसार सामाजिक समस्याओं का समाधान खोजने का प्रयत्न एवं लोगों के सहायतार्थ कार्य करते हैं। इनमें सेवा भाव प्रमुख होता है।

- **सामाजिक परिवर्तन (Social Change):** सामाजिक परिवर्तन एक व्यापक अवधारणा है, जिसे संक्षेप में सामाजिक व्यवस्था एवं संगठन में आए उन बदलावों के रूप में जाना जा सकता है जो समाज को एक विशिष्ट अवस्था से दूसरी विशिष्ट अवस्था में ले जाते हैं और अपेक्षाकृत स्थायी होते हैं। सामाजिक परिवर्तन एक वैज्ञानिक और मूल्य मुक्त अवधारणा है, जिसकी दिशा सकारात्मक भी हो सकती है एवं नकारात्मक भी। गैर सरकारी संगठन सकारात्मक सामाजिक परिवर्तन को प्रोत्साहित करते हैं।

- **भूमिका दूरी (Role Distance):** भूमिका दूरी इरविंग गॉफमैन द्वारा विकसित की गई एक समाजशास्त्रीय अवधारणा है। यह एक ऐसी स्थिति है जहाँ कोई कर्ता अपनी सामाजिक भूमिका से भावनात्मक रूप से खुद को अलग महसूस करता है। यहाँ पर व्यक्ति या कर्ता से उसकी किसी भूमिका के लिए समाज जैसी अपेक्षा करता है, वह उस भूमिका का संपादन कुछ समय के लिए उस रूप में नहीं कर पाता, अर्थात् अपनी भूमिका से कर्ता का कुछ समय के लिए कुछ अलगाव हो जाता है।

- **पारदर्शिता (Transparency):** पारदर्शिता का तात्पर्य किसी विषय, वस्तु अथवा प्रक्रिया को इस प्रकार सभी के समक्ष रखना है, जिससे लोगो में उसकी विश्वसनीयता के प्रति कोई संदेह न रहे। अर्थात् सभी को यह पता रहे कि किसी विषय अथवा प्रक्रिया में क्या हो रहा है? पारदर्शिता की आवश्यकता न केवल सरकार तक सीमित होनी चाहिए बल्कि न्यायिक प्रणाली, राजनीतिक दल, एवं अन्य सरकारी तथा गैर सरकारी संस्थान जो सामाजिक हितों से जुड़े हुए कार्य कर रहे हैं, ऐसे प्रत्येक निकाय और स्थान पर पारदर्शिता की आवश्यकता होती है। जिस समाज में पारदर्शिता जितनी अधिक होगी भ्रष्टाचार, अपराध और सामाजिक विचलन की संभावना वहाँ उतनी कम होगी।

- **कॉर्पोरेट सोशल रेस्पोंसिबिलिटी (सीएसआर):** सीएसआर एक आधुनिक व्यवसाय मॉडल है, जिसमें कम्पनियाँ अपने मुनाफे के साथ ही पर्यावरण एवं समाज के प्रति भी अपना नैतिक एवं सामाजिक उत्तरदायित्व निभाती हैं। इन उत्तरदायित्वों में मुख्य रूप से व्यावसायिक नीतियों के द्वारा

पर्यावरण संरक्षण में योगदान, कर्मचारियों कल्याण हेतु उत्तम नीतियों का निर्माण सामुदायिक सहभागिता एवं विकास जैसे- शिक्षा, स्वास्थ्य, और निर्धनता उन्मूलन हेतु प्रयास, स्वयं सेवा को बढ़ावा देना आदि सम्मिलित है। तथा भारत में कंपनी अधिनियम, 2013 सेक्शन 135 के अंतर्गत नेट प्रॉफिट, नेटवर्थ या टर्नओवर को पूर्ण करने वाली कंपनियों के लिए अपने लाभ का दो प्रतिशत सीएसआर पर व्यय करना अनिवार्य है।

- **फोरेन कॉन्ट्रिब्यूशन रेगुलेशन एक्ट (एफसीआरए):** एफसीआरए कानून मूल रूप में 1976 में बना बाद में 2010 और फिर 2020 में इसमें व्यापक बदलाव किये गए। यह क़ानून भारत में विदेशी अंशदान प्राप्त करने वाले संगठनों और व्यक्तियों पर निगरानी रखने वाला कानून है जो यह तय करता है कि विदेशों से मिलने वाला अंशदान देश हित में प्रयोग किया जाये तथा इस अंशदान से देश की सुरक्षा को कोई खतरा न हो।

12.7 बोध प्रश्नों हेतु उत्तर संकेत (Answer Hints for Comprehension Questions)

- बोध प्रश्न 1- देखें – 12.1. को।
- बोध प्रश्न 2- देखें – 12.2.1. को।
- बोध प्रश्न 3- देखें – 12.2.2 को।
- बोध प्रश्न 4- देखें – 12.2.3 को।
- बोध प्रश्न 5- देखें – 12.3.1 से 12.3.12 को।
- बोध प्रश्न 6- देखें – 12.4.1 को।

12.8 निबन्धात्मक अभ्यास प्रश्न (Essay Practice Questions)

- गैर सरकारी संगठन एवं सामाजिक परिवर्तन पर एक विस्तृत निबंध लिखिए।
- गैर सरकारी संगठनों को परिभाषित कीजिये और सामाजिक परिवर्तन में गैर सरकारी संगठनों की भूमिका का वर्णन कीजिये।
- सकारात्मक सामाजिक परिवर्तन से आप क्या समझते हैं? सकारात्मक सामाजिक परिवर्तन में गैर सरकारी संगठनों की भूमिका का विवेचन कीजिये।
- गैर सरकारी संगठन क्या हैं? इनकी प्रमुख चुनौतियों की व्याख्या कीजिए।

12.9 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची (References):

1. सेंटर फॉर डिजास्टर मैनेजमेंट, (2001), मैनुअल नेचर डिजास्टर मैनेजमेंट इन इंडिया, कृषि मंत्रालय, भारत सरकार, नई दिल्ली,
2. डेविस, किंग्सले (1949), ह्यूमन सोसाइटी, पब्लिकेशन- दी मैकमिलन कंपनी, वर्ष 1949,
3. श्रीनिवास, एम.एन. (2016), आधुनिक भारत में सामाजिक परिवर्तन, प्रथम संस्करण, राजकमल प्रकाशन, वर्ष 2016,
4. सिंह, डॉ. जे. पी. (2023), आधुनिक भारत में सामाजिक परिवर्तन: 21वीं सदी में भारत, तृतीय संस्करण, पीएचआई लर्निंग प्राइवेट लिमिटेड, वर्ष-2023,
5. अग्रवाल, डॉ. एच.ओ. (2010), अंतर्राष्ट्रीय विधि एवं मानवाधिकार, सेंट्रल लॉ पब्लिकेशन, इलाहाबाद, वर्ष 2010,
6. पाण्डेय, तेजस्कर एवं पाण्डेय, बालेश्वर (2021), सामाजिक विकास एवं समाजकार्य, रावत पब्लिकेशन, जयपुर, दिल्ली, वर्ष-2025

12.10 सहायक उपयोगी पाठ्य सामग्री (Helpful Reading Materials)

- कामत, संगीता (2001), डेवलपमेंट हेजियोमनी: एनजीओस एंड दी स्टेट इन इंडिया, पब्लिशर- ओयूपी पब्लिकेशन, वर्ष 2001,

- यादव, डॉ. कमला (2016), आधुनिक समाज कार्य एवं ग़ैर सरकारी संगठन, आईबीपी पब्लिकेशंस, वर्ष 2016,

इकाई 13 गैर सरकारी संगठनः समस्याएँ एवं निराकरण

(Non-Governmental organizations: Problems and Solutions)

इकाई की रूपरेखा

13.0 उद्देश्य

13.1 प्रस्तावना

13.2 गैर सरकारी संगठन क्या है?

13.3 गैर-सरकारी संगठन का अर्थ एवं परिभाषाएँ

13.4 गैर-सरकारी संगठनों की विशेषताऐं

13.5 गैर-सरकारी संगठनों के कार्य

13.6 गैर-सरकारी संगठनों के सामने मुख्य समस्याऐं

13.7 गैर-सरकारी संगठनों की समस्याओं को दूर करने के उपाय

13.8 सारांश

13.9 पारिभाषिक शब्दावली

13.10 संदर्भ ग्रंथ सूची

13.11 निबंधात्मक प्रश्न

13.1 प्रस्तावना- (Introduction)

किसी भी देश और समाज के विकास की प्रक्रिया में, उस देश की सरकार की भूमिका महत्वपूर्ण हो जाती है। लेकिन हम लोग यह भी भलि-भांति जानते हैं कि, सरकार अकेले देश और समाज की सम्पूर्ण समस्याओं का

समाधान नहीं कर पाती है। चूंकि प्रत्येक समाज में कुछ न कुछ समस्याएँ व्याप्त होती हैं। जैसे- बेरोजगारी, बढ़ती जनसंख्या, अशिक्षा, स्वास्थ्य से संबंधित समस्याएँ, सामाजिक-आर्थिक समस्याएँ, लैंगिक असमानता और पर्यावरणीय समस्याएँ आदि अनेक समस्याएँ मौजूद होती हैं। ऐसी परिस्थितियों में समाज के भीतर से ही लोगों के द्वारा ऐसे संगठित प्रयास उभरने लगते हैं, जो इन समस्याओं को कम और समाप्त करने की दिशा में कार्य करते हैं। ये संगठन सेवा, सहयोग और सामुदायिक सहभागिता के आधार पर समाज की समस्याओं के निराकरण के लिए कार्य करते हैं। ये संगठन शिक्षा, स्वास्थ्य, रोजगार, पर्यावरण संरक्षण, स्वच्छता, मानवता, बाल-कल्याण, महिला-कल्याण और ग्रामीण विकास आदि अनेक सामाजिक क्षेत्रों में बढ़-चढ़ कर अपनी भूमिका निभाते हैं। इन संगठनों को गैर सरकारी संगठन (Non Government organization) कहते हैं। ये संगठन समाज के लोगों की किसी समस्या के निराकरण के लिए चेतना जगाने, सामुदायिक भागेदारी बढ़ाने और समाज में सकारात्मक परिवर्तन लाने की प्रक्रिया को गति देने का कार्य करते हैं। ये गैर सरकारी संगठन सरकार से स्वतंत्र रहते हुए समाज की समस्याओं के समाधान और निराकरण के लिए अपनी सक्रिय सहभागिता देते हैं। इकाई की शुरुआत करने से पहले यह जानना जरूरी है कि आखिर गैर सरकारी संगठन है? क्या? ये कैसे काम करते हैं?

13.0 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आप-

- गैर-सरकारी संगठनों के विषय में ज्ञान प्राप्त कर सकते हैं।
- गैर-सरकारी संगठनों के द्वारा किये जाने वाले कार्यों को समझ सकते हैं।
- गैर-सरकारी संगठनों के सम्मुख आने वाली चुनौतियों तथा इन चुनौतियों को दूर करने के व्यवहारिक उपायों के विषय में ज्ञानार्जन कर पायेंगे।

13.2 गैर सरकारी संगठन क्या हैं (What is non-government organizations)

गैर सरकारी संगठन वे संगठन हैं, जो समाज में रहने वाले वंचित, कमजोर वर्गों के लोगों की भलाई और सहायता करने का कार्य करते हैं। ये संगठन लाभ के लिए कार्य नहीं करते हैं। इनका मुख्य उद्देश्य जरूरतमंदों तक सहायता पहुंचाना होता है। ये संगठन समाज के विभिन्न क्षेत्रों जैसे शिक्षा, स्वास्थ्य, अस्वच्छता, महिला विकास, लैंगिक समानता, महिला सशक्तिकरण, द्विव्यांगों के सशक्तिकरण, गरीबी उन्मूलन और पर्यावरण संरक्षण जैसे अनेक क्षेत्रों में कार्य करते हैं। इन गैर सरकारी संगठनों के निर्माण का मुख्य उद्देश्य समाज को विकसित ओर अंतिम पायदान पर खड़े व्यक्तियों को समाज की मुख्यधारा से जोड़ना होता है।

ये गैर सरकारी संगठन सरकार और जनमानस के बीच एक पुल का कार्य करते हैं। जहां कहीं सरकार द्वारा बनाई गई योजना पूरी तरह नहीं पहुंच पाती है, वहां ये गैर सरकारी संगठन उन योजनाओं को पहुंचाने में मदद भी करते हैं। इसके लिए सरकार इन्हें वित्तीय सहायता भी प्रदान करती है।

13.3 गैर सरकारी संगठन का अर्थ एवं परिभाषाएँ

गैर सरकारी संगठन जिसे अंग्रेजी में **Non-Government organization** कहते हैं। गैर सरकारी संगठन व्यक्तियों का एक ऐसा संगठन है जो सरकारी प्रशासनिक तंत्र से स्वतंत्र होता है। ये संगठन समाज के जनकल्याण और विकास के लिए कार्य करते हैं। इन संगठनों का मुख्य उद्देश्य सामाजिक समस्याओं को दूर करना होता है। ये संगठन मुनाफा कमाने के उद्देश्य से गठित नहीं किये जाते हैं। सेवा, सामुदायिक भावना और जनकल्याण के कार्य इनकी प्राथमिकता में प्रमुख होते हैं।

परिभाषाएँ- गैर-सरकारी संगठन की विभिन्न विद्वानों के द्वारा दी गई परिभाषाएँ निम्नलिखित हैं-

1. डेविड ल्यूश के अनुसार "गैर सरकारी संगठन ऐसे स्वैच्छिक और गैर लाभकारी संगठन होते हैं, जो समाज की सामाजिक जरूरतों को पहचानकर, लोगों के जीवन में सकारात्मक परिवर्तन लाने के लिए स्वतंत्र रूप से कार्य करते हैं[1]।"

2. जूली फिशर के अनुसार "गैर सरकारी संगठन सामाजिक सुधार और सामुदायिक क्षमता निर्माण को केन्द्र में रखकर कार्य करते हैं। ये जनमानस की भागेदारी के माध्यम से समाज में स्थायी सामाजिक परिवर्तन लाने का प्रयास करते हैं[2]।"

3. माइकल एडर्वड के अनुसार N.G.O. वह संगठन है, जो सामाजिक न्याय, जनसहभागिता और विकास की भावना के साथ काम करते हैं। ये संगठन समाज के उन लोगों तक सहायता और अवसर पहुंचाते हैं, जिन लोगों तक सरकारी सेवाऐं पूरी तरह से नहीं पहुंच पाती हैं[3]।"

4. डॉ० बी०जी० घोष के अनुसार "गैर सरकारी संगठन वे संस्थाएँ हैं, जो सरकारी नियंत्रण से अलग रहकर सामाजिक विकास, सामुदायिक भागेदारी और जनमानस के सशक्तिकरण के लिए निरंतर और संगठित रूप से कार्य करती हैं। इन संगठनों का गठन लाभ कमाने के उद्देश्य से नहीं किया जाता है[4]।"

5. डॉ० रमेश खन्ना के अनुसार N.G.O. ऐसे संगठित प्रयास हैं, जो समाज की वास्तविकता जरूरतों को समझते हैं। सेवा, जनजागरूकता और सहयोग के माध्यम से सामाजिक समस्याओं के समाधान के लिए, ये संगठन जमीनी स्तर पर सक्रिय भूमिका निभाते हैं। विशेषकर उन वर्गों के लिए जो समाज में अन्य वर्गों से पीछे छूट जाते हैं। यह संगठन के लिए कार्य करते हैं"[5]।

13.4 गैर सरकारी संगठनों की विशेषताऐं

गैर-सरकारी संगठनों का विकास समाज की सामाजिक, आर्थिक और मानवीय चुनौतियों के कारण हुआ है। हम सब जानते हैं कि हमारी सरकारें अकेले समाज की हर जरूरत को पूरा नहीं कर सकती है। इसलिए सरकारों के कार्यों को जनमानस तक पहुंचाने और सामाजिक समस्याओं के निराकरण के लिए ऐसे संगठित प्रयासों की आवश्यकता हुई, जो जनमानस के बीच में जाकर, उनकी वास्तविक समस्याओं को समझ सके और समस्याओं के समाधान की दिशा में कार्य कर सकें। गैर सरकारी संगठनों की यही विशिष्ट कार्यशैली और सामाजिक दृष्टिकोण, उन्हें अन्य संस्थानों से अलग बनाते हैं। इसलिए सर्वप्रथम गैर सरकारी संगठनों की विशेषताओं को समझना आवश्यक हो जाता है।

(i) सामाजिक समस्याओं पर केन्द्रित कार्य (Problem Centered Approach) गैर सरकारी संगठन समाज की वास्तविक समस्याओं की पहचान करते हैं। ये संगठन न सिर्फ समाज की समस्याओं की पहचान करते हैं, बल्कि इन समस्याओं के समाधान का रास्त भी खोलते हैं। ये संगठन सीधे लोगों के बीच जाकर उनकी जरूरतों को भी समझते हैं।

(ii) जनसहभागिता और समुदाय से जुड़ाव (Peoples Participation and Community Involvement) ये संगठन समाज में अपनी सेवा देते हैं। ये संगठन समाज के लोगों को जागरूक बनाते हैं। इसके साथ ही ये संगठन लोगों को जागरूक करके, उनकी क्षमताओं को बढ़ाने का कार्य भी करते हैं। इसलिए गैर सरकारी संगठनों को सामुदायिक नेतृत्व विकसित करने वाले संगठन भी कहते हैं।

(iii) गैर-लाभकारी स्वरूप (Non- Profit Nature)- ये संगठन किसी लाभ के लिए कार्य नहीं करते हैं। इनको मिलने वाली वित्तीय सहायता को, ये जनकल्याण के कार्यों में ही लगाते हैं।

(iv) स्वतंत्र एवं गैर-सरकारी संचालन (Independent and Non-Governmental Functioning)- गैर सरकारी संगठनों को सरकार नहीं चलाती है। ये सरकार से सहयोग लेते हैं। ये अपनी योजनाओं, कार्यक्रमों और कार्य प्रणालियों को स्थानीय जरूरतों के अनुसार तय करते हैं। कभी-कभी ये संगठन सरकार की योजनाओं को आम जनमानस तक पहुंचाने के लिए भी कार्य करते हैं। जिसके लिए सरकार इन्हें वित्तीय सहायता भी प्रदान करती है।

(v) सेवाभाव और जनकल्याण पर आधारित (Service and Welfare-Oriented) इन संगठनों के निर्माण का मुख्य उद्देश्य समाज की समस्याओं का निराकरण करना होता है। इसके साथ ही ये संगठन समाज के कमजोर और वंचित वर्गों की सहायता करने का कार्य भी करते हैं। ये संगठन शिक्षा, स्वास्थ्य, आपदा राहत, महिला सुरक्षा और पर्यावरणीय सुरक्षा आदि अनेक क्षेत्रों से संबंधित कार्यों को करते हैं। सेवाभाव और जनकल्याण के कार्य इनकी प्रमुख प्राथमिकताओं में होते हैं।

(vi) क्षमता विकास पर जोर देते हैं (Emphasis on Capacity Development)- ये संगठन समाज के वंचित वर्गों के लोगों को आत्मनिर्भर बनाने का कार्य करते हैं। इसके लिए ये संगठन कमजोर वर्ग के लोगों के लिए प्रशिक्षण, कौशल और सशक्त बनाने के लिए मार्गदर्शन देते हैं। इससे समाज के कमजोर वर्ग के लोगों में आत्मविश्वास पैदा होता है जिससे वे समाज की मुख्यधारा में आसानी से जुड़ पाने में समर्थ हो जाते हैं।

13.5 गैर सरकारी संगठनों के कार्य (Functions of NGOs)

गैर सरकारी संगठन समाज की समस्याओं की पहचान तक ही सीमित नहीं रहते हैं। ये संगठन समाज की स्थितियों, संसाधनों और संभावनाओं को ध्यान में रखते हुए समाज की समस्याओं का हल भी ढूंढते है। गरीब, वंचित, कमजोर, असहाय आदि समाज के अनेक वर्गों को ये संगठन सशक्त बनाते हैं। गैर सरकारी संगठन आम जनमानस के बीच में रहकर उनकी जरूरतों के अनुरूप कार्यक्रम चलाते हैं। इस इकाई में गैर सरकारी संगठनों के द्वारा किये जाने वाले कार्यों पर चर्चा की जा रही है।

(i) सामाजिक समस्याओं का निदान करना (Diagnosing Social Problems)- गैर सरकारी संगठन समाज के भीतर उत्पन्न समस्याओं की पहचान करते हैं। ये संगठन समाज के लोगों से सीधे सम्पर्क करते हैं। ये लोगों की दिन-प्रतिदिन की कठिनाईयों, आवश्यकताओं और चुनौतियों को करीब से देखते हैं। इन सब समस्याओं, चुनौतियों और लोगों की आवश्यकताओं की पहचान के बाद, हस्तक्षेप करके समाधान की दिशा में कार्य करते हैं।

(ii) सामाजिक सहायता और सुविधा उपलब्ध करवाना (Providing Support and Services)- गैर सरकारी संगठन समाज के हॉशिये पर खड़े कमजोर वर्गों की सहायता करने का कार्य करते हैं। ये शिक्षा, स्वास्थ्य, पोषण, कौशल और संकट के समय लोगों की सहायता करने का कार्य करते हैं। ये समाज के लोगों की परिस्थितियों के अनुरूप सहायता करते हैं। जिससे समाज के लोगों की जीवन की गुणवत्ता में सुधार आता है।

(iii) जन जागरूकता और शिक्षा कार्यक्रम चलाना (Conducting Awareness and Educational Programs)- ये संस्थान समाज के लोगों को सामाजिक समस्याओं के प्रति जागरूकता करने का कार्य करते हैं। ये शिक्षा, स्वास्थ्य, स्वच्छता, नशा उन्मूलन, बाल सुरक्षा, लैंगिक समानता, पर्यावरण संरक्षण और महिला सशक्तिकरण के विषय में लोगों जागरूक करने का भी कार्य करते हैं। इस प्रकार ये गैर सरकारी संगठन समाज के लोगों की सोच और व्यवहार में परिवर्तन कर उन्हें जागरूक करने का कार्य करते हैं।

(iv) प्रशिक्षण और क्षमता विकास (Training and Capacity Building)- ये संगठन सिर्फ समाज के वंचित और कमजोर वर्गों की सहायता ही नहीं करते हैं। बल्कि ये इनको सशक्त बनाने का कार्य भी करते हैं। लोगों को सशक्त बनाने के लिए ये संगठन कौशल विकास, प्रशिक्षण कार्यक्रम, स्वयं सहायता समूहों का निर्माण और नेतृत्व विकास के कार्यों को भी करते हैं। इन कार्यक्रमों में प्रशिक्षण के बाद समाज के कमजोर वर्ग के लोग अपनी क्षमताओं को पहचान पाते हैं। इनके द्वारा संचालित कार्यक्रमों से लोगों की सामाजिक-आर्थिक स्थिति में सकारात्मक परिवर्तन देखने को मिलते हैं।

(v) सामुदायिक संगठन और नेतृत्व विकास (Community Mobilization and Leadership Building)- गैर सरकारी संगठन समुदाय के भीतर लोगों को एकजुट करके सामुदायिकता की भावना को विकसित करने का कार्य करते हैं। ये संगठन स्थानीय लोगों में नेतृत्व विकसित करके, और उनकी समस्याओं के समाधान के लिए उन्हें सशक्त बनाने का कार्य करते हैं। गैर सरकारी संगठनों की इन कार्यप्रणालियों से समाज और समुदाय में आत्मनिर्भरता की भावना का विकास होता है। इसके साथ ही लोगों में जिम्मेदारी और कर्तव्यों के निवर्हन के प्रति निष्ठा मजबूत होती है।

(vi) नीति निर्माण में भागेदारी (Participation in Policy Advocacy)- गैर सरकारी संगठन लोगों की वास्तविक समस्याओं को जानते हैं। ये समाज की समस्याओं की सर्वे रिर्पोट, शोध रिर्पोट और सामाजिक संवाद के माध्यम से सरकार का ध्यान उन विषयों की ओर आकर्षित करते हैं, जिन विषयों को नीतियों में शामिल करने की जरूरत होती है। इस प्रकार गैर सरकारी संगठन समाज और नीति-निर्माण की भूमिका में भी अपनी महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं।

(vii) सामाजिक अनुसंधान और डेटा संग्रह (Social Research and Data Collection)-गैर सरकारी संगठन सामाजिक अनुसंधान में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। ये संगठन सामाजिक समस्याओं, जन मानस की समस्याऐ, सरकारी योजनाओं के प्रभाव और सरकारी योजनाओं की लोगों तक पहुंच आदि से संबंधित मुद्दों का डेटा विश्लेषण भी करते हैं। इसके द्वारा एकत्रित की गई जानकारी नीति निर्माताओं को समाज की वास्तविक स्थिति को समझने में सहायता करती है।

(viii) सामाजिक अधिकारों की पैरवी (Advocacy for Social Rights)- गैर सरकारी संगठन समाज के कमजोर वर्गों के अधिकारों की रक्षा के लिए आवाज उठाने का कार्य भी करते हैं। ये गैर सरकारी संगठन मानवाधिकारों, बाल अधिकारों, महिलाओं के अधिकारों, द्विव्यागजनों के अधिकारों व पर्यावरणीय संरक्षण से संबंधित विभिन्न ज्वलंत मुद्दों की आवाज को भी उठाने का कार्य करते हैं। जिससे समाज में न्याय और समानता स्थापित होती है[6]।

गैर सरकारी संगठन इन कार्यों के अतिरिक्त समाज से संबंधित अन्य कार्यों को भी करते हैं। जैसे-

- बाल श्रम उन्मूलन के लिए अभियान और जन-जागरूकता का प्रचार प्रसार करना।
- अल्पसंख्यक वर्ग के लिए समान अवसर सुनिश्चित करवाने के लिए कार्य करना।
- युवाओं के लिए कैरियर काउंसलिंग कार्यक्रमों को चलवाना।
- किसानों को आधुनिक खेती के लिए जागरूक करना।
- गरीबों के लिए पोषण सुधार कार्यक्रमों को संचालित करना।
- आदिवासी लोगों की संस्कृति के संवर्धन के लिए कार्य करना।
- घरेलू हिंसा के मामले में महिलाओं को कानूनी सहायता प्रदान करवाना।
- एच०आई०वी०/एड्स प्रभावित लोगों की जांचे करवाना और उन्हें परामर्श प्रदान करवाना।

- पर्यावरण, जल-जंगल जमीन के संरक्षण के लिए कार्य करना।
- स्वच्छता के प्रति लोगों की जागरूकता को बढ़ाना।
- सरकारी योजनाओं की जानकारी को ग्रामीणों तक पहुंचाना।
- रक्तदान शिविरों का आयोजन करवाना।
- लोगों को स्वरोजगार से जोड़ने के लिए प्रेरित करना।
- लिंग आधारित भेद-भाव के प्रति लोगों को जागरूक करना।
- जरूरतमंदों को चिकित्सा उपकरण उपलब्ध करवाना।
- नशामुक्ति केन्द्रों का संचालन करवाना।
- वन संरक्षण और जैव विविधता संरक्षण के लिए कार्य करना।
- आपदा और संकट के समय लोगों की मदद करना।

13.6 गैर सरकारी संगठनों के सामने आने वाली मुख्य समस्याएँ

जैसा कि शिक्षार्थियों पूर्व में भी बताया गया है कि गैर सरकारी संगठन समाज के विकास में अपनी महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। ये संगठन सरकारी योजनाओं को धरातल तक पहुंचाने के लिए भी कार्य करते हैं। जिससे समाज के उन लोगों को सरकारी योजनाओं के विषय में जानकारी प्राप्त हो जाती है, जो सरकारी योजनाओं की जानकारी के विषय में अनभिज्ञ होते हैं। इस तरह से गैर सरकारी संगठन समाज में सेवा और विकास का महत्वपूर्ण माध्यम बन जाते हैं। इन सब कार्यों के बावजूद भी गैर सरकारी संगठनों के सम्मुख आज अनेक चुनौतियां देखने को मिलती हैं। वित्त की समस्या, तकनीकी संसाधनों की कमी, गैर सरकारी संगठनों में कर्मचारियों का अभाव, समुदाय का सीमित समर्थन और कानूनी प्रक्रियाओं की जटिलताएं आदि अनेक कारक

गैर सरकारी संगठनों के सम्मुख नई-नई चुनौतियां प्रस्तुत करने का कार्य करती हैं। जिससे गैर सरकारी संगठनों की कार्यक्षमता प्रभावित होती है। इस इकाई में हम गैर सरकारी संगठनों के सम्मुख आने वाली विभिन्न चुनौतियों या समस्याओं के विषय में बिंदुवार चर्चा करेंगे।

(i) वित्त की कमी (Lack of Finane)- जैसा कि शिक्षार्थियों आप जानते हैं कि किसी भी कार्य को सुचारू रूप से चलाने के लिए वित्त यानि रूपयों-पैसों की जरूरत पड़ती है। गैर सरकारी संगठनों के कार्य की निरन्तरता उनकी आर्थिक स्थिरता पर निर्भर करती है। यह बात भी सही है सभी गैर सरकारी संगठनों की वित्तीय स्थिति एक जैसी नहीं होती है। गैर सरकारी संगठन भी चंदे, विदेशी दान, सरकारी सहायता, कारपोरेट शोसल रिसौंपोन्सविलिटी (CSR) और सरकारी अनुदानों पर निर्भर रहते हैं। गैर सरकारी संगठनों के सामने नियमित और सुरक्षित फंड प्राप्त करना एक बड़ी चुनौती है। वित्त की कमी के कारण गैर सरकारी संगठनों के कार्य प्रभावित हो जाते हैं। यदि आर्थिक मदद सुचारू रूप से गैर सरकारी संगठनों को मिलती रहती है, तब इनके द्वारा चलाये गये कार्यक्रमों की निरन्तरता बनी रहती है।

(ii) प्रशिक्षित स्टाफ की कमी (Lock of Trained Staff)- गैर सरकारी संगठन समाज में सेवा और जनकल्याण के कार्य करते हैं। जिसके लिए कुशल प्रशिक्षित कर्मचारियों की आवश्यकता पड़ती है। जैसा कि आप जानते हैं कि आज विज्ञान और प्रौद्योगिकी का युग है। आज के युग में गैर सरकारी संगठनों को भी विशेषज्ञता पर आधारित कार्य प्रणाली की आवश्यकता होती है। आज हम देखते है कि कई गैर सरकारी संगठनों के पास प्रशिक्षित कर्मचारियों, शोधकर्ता, मनोवैज्ञानिक और काउंसलर आदि उपलब्ध नहीं होते हैं। इन सबके कारण और गैर सरकारी संगठनों को मिले कार्य सही तरीके से क्रियान्वित नहीं हो पाते हैं। उदाहरण के तौर पर देखा जा सकता है कि महिलाओं और बाल संरक्षण से जुड़े गैर सरकारी संगठनों के पास कानून विशेषज्ञों की कमी होती है। जिससे न्याय प्रक्रिया भी प्रभावित होती है। जिसके परिणामस्वरूप गैर सरकारी संगठनों की विश्वसनीयता और कार्य प्रभावित होते हैं।

(iii) कानूनी नियमों की कठिनाई (Difficulty of Legal Procedures) कानूनी और प्रशासनिक औपचारिकताएँ गैर सरकारी संगठनों के लिए आवश्यक होती हैं। कई ग्रामीण क्षेत्रों में कार्य करने वाले गैर

सरकारी संगठनों को इन कानूनी नियमों जैसे पंजीकरण, नवीनीकरण, फॉरेन फंडिंग, ऑडिट और बैलेश शील आदि की पर्याप्त जानकारी नहीं होने के कारण इन गैर-सरकारी संगठनों को कठिनाईयों का सामना करना पड़ता है। गैर सरकारी संगठनों के पास प्रशासनिक ज्ञान की कमी, इनके मार्ग में बांधा बनने का कार्य करती है।

(iv) कार्यों में पारदर्शिता बनाऐं रखने की चुनौती (The Challenge of Maintaining Transparency in Operations)- जैसा कि शिक्षार्थियों आप जानते हैं कि गैर सरकारी संगठन समाज से संबंधित कार्य करते हैं। आपने अक्सर सुना भी होगा कि कुछ गैर सरकारी संगठनों पर सरकार के फंड का दुरुप्रयोग करने के आरोप भी लगते हैं। जिससे कार्य करने वाले अन्य गैर सरकारी संगठनों की छवि भी खराब होती है, इससे अन्य गैर सरकारी संगठनों को मिलने वाले अनुदान, चंदे और सहयोग भी प्रभावित हो जाते हैं।

(v) राजनैतिक या बाहरी दबाव (Political or External Pressure)- गैर सरकारी संगठनों की प्रभावशीलता इनके कार्यों पर निर्भर करती है। कई बार देखा जाता है कि गैर सरकारी संगठनों के कार्यों के मामले में बाहरी शक्तियां, राजनैतिक हस्तक्षेप और प्रभावशाली लोगो द्वारा गैर सरकारी संगठनों के कार्यों में हस्तक्षेप करने का कार्य किया जाता हैं। ऐसी परिस्थितियों में गैर सरकारी संगठन अपने मुख्य उद्देश्यों से भटक जाते हैं। कई बार महिला सशक्तिकरण और महिला अधिकारों की दिशा में कार्य करने वाले गैर सरकारी संगठनों को स्थानीय स्तर पर विरोध का सामना भी करना पड़ता है। क्योंकि गैर सरकारी संगठनों के कार्य रूढ़िवादी मानसिकता को चुनौती देने का कार्य करते है।

(vi) समाज का कम सहयोग (Low Support from Community)- किसी भी सामाजिक कार्य की सफलता समाज के लोगों पर निर्भर करती है। बहुत बार देखने को मिलता है कि कई ग्रामीण और नगरीय क्षेत्रों के लोग गैर सरकारी संगठनों के कार्यों के प्रति उदासीन रहते हैं, और लोग उन्हें बाहरी संगठन के रूप में देखते हैं। इस कारण गैर सरकारी संगठनों को जो सहयोग मिलना चाहिए, वह सहयोग क्षेत्रीय व स्थानीय लोगों से मिल नहीं पाता है। जिससे गैर सरकारी संगठनों के द्वारा किये जाने वाले कार्यों को जनता का समर्थन नहीं मिल पाता है। गैर सरकारी संगठनों के द्वारा किये जाने वाले कार्यों में आम जनमानस का सहयोग न होना, गैर सरकारी संगठनों के सम्मुख प्रमुख समस्या के तौर पर देखा जा सकता है।

(vii) तकनीक ज्ञान की कमी (Lack of Technical Knowledge)- गैर सरकारी संगठनों के पास तकनीकी ज्ञान की कमी एक चुनौती या समस्या के रूप में देखी जा सकती है। आज के समय में तकनीकी ज्ञान और कुशलता महत्वपूर्ण साधन के रूप में देखा जा सकता है। कम्प्यूटर का ज्ञान, डिजिटललाइजेशन, ऑनलाइन रिपोटिंग, डिजिटल फंड मैनेजमेंट, शोसल मीडिया कम्युनिकेशन और डेटा विश्लेषण गैर सरकारी संगठनों के कार्यों में दक्षता लाने का कार्य करते हैं। कई बार देखने को मिलता है कि कुछ गैर सरकारी संगठन अपने परियोजना के आंकड़ों को सही तरीके से संग्रहित कर पाने में भी असमर्थ होते हैं। ये गैर सरकारी संगठन सरकारी विभागों को अपने द्वारा किये गये कार्यों का सही तरीके से प्रमाण भी नहीं दे पाते हैं। तकनीकी ज्ञान और तकनीकी दक्षता की कमी इन गैर सरकारी संगठनों की कार्यों की क्षमता और दक्षता को प्रभावित करती है।

इन सब समस्याओं के अतिरिक्त गैर सरकारी संगठनों के सम्मुख आने वाली बांधाऐं या चुनौतियां और भी हैं, जिनसे इन गैर सरकारी संगठनों की कार्यक्षमता और विश्वसनीयता प्रभावित होती है। जैसे-

- समाज के लोगों की गैर सरकारी संगठनों के प्रति सिर्फ फंड लेने वाले समूह जैसी मान्यताएँ।
- जन प्रतिनिधियों से तालमेल न होने के कारण गैर सरकारी संगठन के कार्यों में विलम्ब की स्थिति।
- गैर सरकारी संगठनों के द्वारा अपने कर्मचारियों को कम वेतन दिये जाने के कारण, कर्मचारी लम्बे समय तक काम नहीं कर पाते हैं।
- गैर सरकारी संगठनों के द्वारा परियोजना की रिर्पोट पूर्ण न होने के कारण, उन्हें सरकार से फंड मिलने में देरी होती है।
- गैर सरकारी संगठनों के कर्मचारियों को कार्यों की स्पष्ट जानकारी का अभाव।
- जनसमुदाय में गैर सरकारी संगठनों के द्वारा किये जाने वाले कार्यों के प्रति उदासीनता का भाव ।

- ग्रामीण और दूरस्थ क्षेत्रों में गैर सरकारी संगठनों के द्वारा कार्य करने में कठिनाई।
- गैर सरकारी संगठनों के द्वारा कार्यों की नियमित निगरानी और मूल्यांकन न करना।
- गैर सरकारी संगठनों के बीच आपसी सहयोग की कमी
- ग्रामीण क्षेत्रों में इंटरनेट और नेटवर्क की समस्या गैर सरकारी संगठनों के कार्यों को प्रभावित करती है।

13.7 गैर सरकारी संगठनों की समस्याओं को दूर करने के उपाय

शिक्षार्थियों जैसा कि पूर्व में भी बताया गया है कि गैर सरकारी संगठन समाज के विकास में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। लेकिन इन गैर सरकारी संगठनों के सामने आने वाली आर्थिक, प्रशासनिक, कानूनी, तकनीकी और सामाजिक चुनौतियों से इन संगठनों की कार्यप्रणाली और कार्यक्षमता प्रभावित हो जाती है। इसलिए प्रत्येक गैर सरकारी संगठन के लिए यह आवश्यक हो जाता है कि वे अपने कार्यों के सम्मुख आने वाली समस्याओं का सही विश्लेषण और मूल्यांकन करें। जिससे गैर सरकारी संगठनों की उपयोगिता और विश्वसनीयता समाज में बढ़ी रहेगी। इसलिए इस इकाई के अंत में यह समझना आवश्यक हो जाता है कि गैर सरकारी संगठनों के सम्मुख आने वाली समस्याओं को कैसे दूर किया जा सके। जिससे ये संगठन अपने कार्यों को सुचारू रूप से चला सकें।

(i) फंड के स्रोतों को बढ़ाना (Increasing Sources of Funds)- गैर सरकारी संगठनों को अपने कार्यों के निष्पादन के लिए फंड की आवश्यकता होती है। गैर सरकारी संगठनों को किसी एक फंड के स्रोत पर निर्भर रहने के बजाय, कई स्रोतों से फंड प्राप्त करने के लिए प्रयासरत् रहना चाहिए। फंड के अधिक स्रोतों से जुड़ने के कारण गैर सरकारी संगठनों के कार्यों में निरन्तरता बनी रहती है। इन फंड के स्रोतों के लिए सरकारी अनुदान, कॉरपोरेट शोसल रिसोपांन्सविलि (CSR) क्राउडफंडिंग, व्यक्तिगतदान, अन्तराष्ट्रीय सहायता और सामुदायिक योगदान जैसे विकल्पों का सहारा लिया जा सकता है[7]।

(ii) सरकारी विभागों और अन्य संगठनों के साथ सहयोग (Collaboration with Government and Other Organizations)- कोई भी गैर सरकारी संगठन अकेले कार्य नहीं कर सकते हैं। गैर सरकारी संगठनों को सरकारी विभागों के साथ तालमेल बिठाना आवश्यक हो जाता है। इससे गैर सरकारी संगठन के संसाधनों, कार्यों और नेटवर्क प्रणाली मजबूत होती है [8]।

(iii) दीर्घकालिक योजना और नियमित मूल्यांकन (Long-term Planning and Periodic Evalution)- गैर सरकारी संगठनों के द्वारा किये गये कार्य तभी प्रभावी होते हैं, जब वे अपने लक्ष्यों को प्राप्त कर पाते हैं। इसके लिए यह आवश्यक है कि गैर सरकारी संगठन दीर्घकालिक योजनाऐं और अपने कार्यों का नियमित मूल्यांकन करें। इससे कमियों को दूर करने में आसानी होती है।

(iv) तकनीक और डिजिटल प्रबंधन का उपयोग (Use of Technology and Digital Management)- आज विज्ञान और प्रौद्योगिकी का युग है। इसलिए गैर सरकारी संगठनों के लिए यह आवश्यक हो जाता है कि वे डिजिटलाइजेशन, ऑनलाइन रिपोर्टिंग, मिडिया मैनेजमेंट, सोशल मीडिया, मैनेजमेंट, वर्चुअल प्रशिक्षण और आकडे संग्रह की व्यवस्था को मजबूत बनायें। इससे समय की बचत होती है। साथ ही इन सब कार्यों से सरकारी विभागों को अपनी प्रगति आख्या दिखाने में आसानी होती है, । जिससे गैर सरकारी संगठनों के कार्यों में पादरर्शिता आती है[9]।

(v) समुदाय की सक्रिय भागेदारी बढ़ाना (Increasing Active Participation of the Community)- किसी भी गैर सरकारी संगठन के द्वारा किये जाने वाले कार्यों की उपयोगिता तब बढ़ती है, जब समुदाय या समाज के लोग भी अपनी सक्रिय भागिता गैर सरकारी संगठनों को दें। गैर सरकारी संगठनों को अपने कार्यों में समाज के लोगों को भी शामिल करना चाहिए। जब समाज के लोग बढ़-चढ़ कर कार्यों में भागेदारी देते हैं, तब कार्यक्रम का वजूद और बढ़ जाता है[10]।

(vi) कर्मचारियों का प्रशिक्षण और क्षमता विकास (Training and Capacity Building of Employees)- गैर सरकारी संगठनों की कार्यक्षमता उनके कर्मचारियों पर निर्भर करती है। इसलिए गैर सरकारी संगठनों को अपने कर्मचारियों के प्रशिक्षण पर विशेष ध्यान देना चाहिए। नियमित प्रशिक्षण, कार्यशालाएँ,

डिजिटल लर्निंग और संचार कौशल का प्रशिक्षण समय-समय पर अपने कर्मचारियों को देना चाहिए। इससे कर्मचारियों के कार्यों में कुशलता आयेगी, और गैर सरकारी संगठनों की विश्वसनीयता और प्रभावशीलता मजबूत होगी[11]।

इसके अतिरिक्त गैर सरकारी संगठनों को अपने कार्यों की प्रभावशीलता को बढ़ाने के लिए-

- कार्यों में पारदर्शिता और ईमानदारी लानी पड़ेगी।
- गैर सरकारी संगठनों को जहां पर वे कार्य कर रहे हैं, वहां के युवक और युवतियों को भी अपने साथ शामिल करना चाहिए। जिससे कार्यों की गति को तेजी मिलेगी।
- गैर सरकारी संगठनों को समाज, समूह और समुदायों को भी आमंत्रित करना चाहिए।
- ग्रामीण और दूरस्थ क्षेत्रों में चलायी जाने वाली परियोजनाओं की सफलता के लिए स्थानीय भाषा को प्रथमिकता देनी चाहिए।
- छोटे-छोटे लक्ष्यों को बनाकर इन्हें पूर्ण करना चाहिए।

13.8 सारांश (Summary)

गैर सरकारी संगठन समाज की जरूरतों को समझते हुए शिक्षा, स्वास्थ्य, महिला सशक्तिकरण, पर्यावरण, बालिका शिक्षा, लैंगिक समानता, स्वच्छता, पर्यावरण संरक्षण और आपदा राहत आदि समाज के विभिन्न क्षेत्रों से संबंधित कार्यों को करते हैं। गैर सरकारी संगठन जनकल्याण, सामुदायिकता और सामाजिक विकास में अपनी महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। इस इकाई में गैर सरकारी संगठनों के कार्यों पर चर्चा की गई है। कि किस प्रकार गैर सरकारी संगठन समाज को आगे ले जाने का कार्य करते हैं। गैर सरकारी संगठनों के सम्मुख आने वाली चुनौतियां और इन चुनौतियों को दूर करने के उपायों पर भी इस इकाई के अंत में चर्चा की गई है।

13.9 पारिभाषिक शब्दावली (Glossary of Terms)

(i) क्षमता विकास (Capacity Building)- क्षमता विकास का आशय व्यक्तियों या संगठनों के कौशल, ज्ञान और कार्यक्षमता को बढ़ाना हैं, जिससे कार्यों को अधिक प्रभावी बनाया जा सके।

(ii) निगरानी और मूल्यांकन (Monitoring and Evaluation)- निगरानी और मूल्यांकन वह प्रक्रिया है जिसमें किसी परियोजना या कार्यक्रम की प्रगति, गुणवत्ता और प्रभावशीलता की समीक्षा की जाती है। इससे परियोजना की कमियों में सुधार लाकर संबंधित लक्ष्यों को पाप्त करने में आसानी होती है।

13.10 संदर्भग्रंथ सूची (Reference List)

1-Lewis, D. (2001) The management of Non-Govern-ment organizations, Routledge Publications

2-Fisher, J. (1998) Nongovernments: NGO and the political development of the Third word, Kumarian Pruss.

3-Edwards, m (2014) Civil society, Polity Press Publications

4- Ghosh, B. G. (1997) N. G. O and social development, Rawat Publications, Jaipur

5-Khanna, R (2005), Non-Government organization in India: Role and relevance, Def and Deep Publications, New Delhi.

6-khanna, R (2005) Non-Government's organized ions in India: Role And Relevance, Deep and Deep Publications, New Delhi

7- Brown, L., & Kalengaonkar, A. (2002) support organizations and the NGO sector, Nonprofit and Voluntary Sector Quarterly.

8- Patel, R. (2017) collaboration and Networking for social change, Ahmedabad.

9- Narain, V. (2020) Digtal Tools in Social Work and NGOs, Mumbai, Tech-Social Foundation, Mumbai.

10-Fernandez, M. (2019) Community Partricaption and social Development, Sunrise Publications, Jaipur.

11- Mukherjee,s (2015) Copacity Building for NGOs in India, Sage Publicatios.

13.11 निबंधात्मक प्रश्न- (Essay Questions)

1. गैर सरकारी संगठनों की भूमिका पर प्रकाश डालिए।

2. गैर सरकारी संगठन क्या है? इनकी विशेषताओं की चर्चा कीजिए।

3. गैर सरकारी संगठनों के सम्मुख आने वाली चुनौतियों पर प्रकाश डालिए।

4. गैर सरकारी संगठनों के सम्मुख आने वाली बांधाओं को दूर करने के उपाय बताइये।

इकाई- 14 भारत सरकार की योजनाओं में गैर सरकारी संगठनों की भूमिका

The Role of Non-Governmental Organization in Government Schemes of India

इकाई की रूपरेखा

14.0 प्रस्तावना

14.1 उद्देश्य

14.2 गैर-सरकारी संगठन क्या है?

14.3 गैर सरकारी संगठनों की विशेषताएं

14.4 भारत सरकार की प्रमुख योजनाओं का परिचय

14.5 सरकारी योजनाओं में गैर सरकारी संगठनों की प्रमुख भूमिकाऐं

14.6 विभिन्न क्षेत्रों में गैर सरकारी संगठनों का योगदान

14.7 गैर सरकारी संगठनों का महत्व

14.8 सारांश

14.9 पारिभाषिक शब्दावली

14.10 संदर्भ ग्रंथ सूची

14.11 निबंधात्मक प्रश्न

14.0 प्रस्तावना:

भारत जनसंख्या की दृष्टि से एक बड़ा देश है। यहां पर रहने वाले सभी लोगों की सामाजिक-आर्थिक, सामाजिक-शैक्षणिक, सामाजिक-धार्मिक और सामाजिक-राजनैतिक स्थिति अलग-अलग है। शिक्षार्थियो आप इस बात को भलि-भांति जानते हैं कि हमारी सरकारों ने भारत में रहने वाले प्रत्येक व्यक्ति की सामाजिक-आर्थिक, समाजिक-शैक्षणिक और सामाजिक-राजनैतिक स्थिति को उत्तम बनाने के लिए अनेकों सरकारी योजनाओं का क्रियान्वयन किया है। ताकि भारत से सामाजिक, आर्थिक राजनैतिक और शैक्षणिक विषमताओं को दूर किया जा सके। इसके लिए हमारी सरकारों ने अनेक समाज से सम्बंधित क्षेत्रों की सरकारी योजनाओं का क्रियान्वयन किया है। अब प्रश्न उठता है कि हमारी सरकारें भारत में रहने वाले व्यक्तियों के जीवन स्तर को उँचा उठाने के लिए जो सरकारी योजनाओं का क्रियान्वयन करती है। क्या वे योजनाएं देश में रहने वाले गरीब कमजोर और अंतिम पायदान पर खड़े व्यक्तियों को आसानी से प्राप्त हो जाती हैं? ऐसी स्थिति में सरकार के इन

सब कार्यों के सफल संचालन के लिए गैर सरकारी संगठन (NGOs) सरकार के एक महत्वपूर्ण सहयोगी के रूप में उभरकर सामने आते हैं। गैर सरकारी संगठन स्थानीय स्तर पर लोगों की समस्याओं और जरूरतों को समझते हैं। ये संगठन सरकारी योजनाओं को आम जनमानस के बीच पहुचाने में सरकार की मदद करते हैं। इसके एवज में सरकार इन गैर सरकारी संगठनों को आर्थिक मदद करती है। शिक्षार्थियो आपने देखा भी होगा भारत सरकार की अनेक योजनाओं जैसे-स्वास्थ्य, शिक्षा, ग्रामीण विकास, महिला सशक्तिकरण, पोषण और आजीविका संवर्धन से संबंधित अनेक सरकारी योजनाओं में गैर सरकारी संगठनों को सक्रिय भूमिका निभाते हुए। टालकाट पारसन्स ने अपने सामाजिक प्रणाली के सिद्वान्त में बताया है ''कि कोई भी समाज तभी आगे बढता है जब उस समाज के विभिन्न संस्थान परस्पर सहयोग करते हैं।''[1] इस इकाई में भारत सरकार की योजनाओं में गैर सरकारी संगठन, सरकारी योजनाओं में किस प्रकार से अपनी भूमिका को निभाते हैं, इस इकाई में चर्चा की जा रही है। शिक्षार्थियो इस इकाई की शुरूवात करने से पहले यह जानना आवश्यक हो जाता है कि आखिर गैर सरकारी संगठन हैं क्या?

14.1 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् शिक्षार्थियो आप निम्नलिखित बिंदुओं पर अपनी समझ विकसित कर पाने में सक्षम होंगे-

1. गैर सरकारी संगठन और उनकी विशेषताओं पर समझ विकसित कर पायेगें।
2. भारत सरकार की प्रमुख योजनाओं के विषय में आप जान पायेगें।
3. भारत सरकार की योजनाओं के क्रियान्वयन में गैर-सरकारी संगठनों की भूमिका के विषय में आप ज्ञान प्राप्त कर सकेगें।
4. समाज के विभिन्न क्षेत्रों में गैर-सरकारी संगठनों के योगदान के विषय को जान पायगें।
5. इकाई के अंत में समाज में गैर-सरकारी संगठनों के महत्व के विषय में अपनी समझ को विकसित कर पायेंगे।

14.2 गैर सरकारी संगठन क्या है?

शिक्षार्थियो गैर-सरकारी संगठन ऐसे स्वैछिक संगठन होते हैं जो लाभ रहित जन कल्याण का कार्य करते हैं। इन संगठनों का मुख्य उददेश्य सामुदायिक विकास से जुडी गतिविधियों को समाज में आगे बढाना है। ये संगठन समाज के कमजोर वर्ग के लोगों के जीवन स्तर को ऊँचा उठाने का कार्य करते हैं।[2] चिराग, हेस्को, हिमालयन इंस्टीट्यूट हॉस्पिटल ट्रस्ट, पीपुल्स साइंस इंस्टीट्यूट देहरादून और रूरल लिटरेसी एडं हैल्थ प्रोग्राम, चमोली उत्तराखण्ड राज्य में कार्य करने वाले गैर-सरकारी संगठन हैं। शिक्षार्थियो इस इकाई को समझने के लिए गैर-सरकारी संगठनों की विशेषताओं को भी समझना आवश्यक हो जाता है। इन विशेषताओं के आधार पर आप गैर-सरकारी संगठनों की संरचना को भलि-भांति समझ पाने में सक्षम हो जायेगे।

14.3 गैर-सरकारी संगठनों की विशेषताएं

गैर सरकारी संगठनों की विशेषताओं को निम्नलिखित बिंदुओं के माध्यम से यहां पर समझाया जा रहा है।

I. **स्वैच्छिक संगठन:** गैर सरकारी संगठन स्वैच्छिक होते है। यह स्वैच्छिकता गैर-सरकारी संगठनों को सरकारी संस्थानों की तुलना में अधिक लचीला और जन समुदाय आधारित बनाती है।

II. **लाभ रहित प्रकृति:** गैर सरकारी संगठन किसी भी आर्थिक लाभ के लिए कार्य नहीं करते है। गैर सरकारी संगठनों की यह विशेषता इन्हें नैतिक रूप से मजबूत बनाती है। इससे जन समुदाय के बीच एक विश्वास पैदा होता है।

III. **लचीलापन:** गैर सरकारी संगठन सरकारी सस्थानों की तुलना अधिक लचीले और तेजी से निर्णय लेने वाले संगठन होते है। इससे समस्याओं के समाधान में आसानी होती है।

IV. **सामुदायिक भागीदारी:** गैर-सरकारी संगठन क्षेत्रीय समुदाय को अपने कार्यक्रमों में सक्रिय रूप से शामिल करते हैं। इससे लोगों में स्वामित्व की भावना विकसित होती है। दुर्खीम ने अपने सामाजिक एकता के सिद्धांत में "समुदाय की सहभागिता को सामाजिक स्थिरता के लिए आवश्यक बताया है।[3]"

V. **जवाबदेही और पारदर्शिता:** गैर सरकारी संगठनों को अपने दानकर्ताओं, सरकारी संस्थानों और स्थानीय समुदाय के प्रति जवाबदेह रहना पड़ता है। ये अपने कार्यों में अधिक स्पष्टता और नैतिकता बनाये रखते है। इससे सामुदायिक विश्वास इसके कार्यों में बढ़ता है।[4]

14.4 भारत सरकार की योजनाओं का परिचय

शिक्षार्थियो भारत सरकार, विकास के विभिन्न क्षेत्रों में अनेक सरकारी योजनाओं का क्रियान्वयन करती है। भारत सरकार के द्वारा इन सरकारी योजनाओं का चलाने का मुख्य उद्देश्य समाज की सामाजिक आर्थिक असमानता को कम करना है। इससे समाज में सामाजिक आर्थिक संतुलन को स्थापित करने में आसानी होती हैं। साथ ही समाज में इन सरकारी योजनाओं से, समाज के नागरिकों का जीवन स्तर उत्तम होता है।

भारत सरकार ने स्वास्थ्य के क्षेत्र में राष्ट्रीय मिशन, आयुष्मान भारत योजना, महिला एवं बाल विकास के क्षेत्र में एकीकृत बाल विकास सेवा, पोषण अभियान, ग्रामीण विकास के क्षेत्र में मनरेगा, राष्ट्रीय ग्रामीण आजीविका मिशन और शिक्षा के क्षेत्र में सर्व शिक्षा अभियान और समग्र शिक्षा अभियान आदि अनेक सरकारी योजनाओं का सफल क्रियान्यवन किया है। इन योजनाओं ने समाज की सामाजिक आर्थिक असमानता को कम करने का कार्य किया है। यूं तो भारत सरकार ने समाज के प्रत्येक क्षेत्र में सरकारी योजनाओं का क्रियान्वयन किया है। यहां पर आपको सिर्फ प्रमुख क्षेत्रों में चलाईं जा रही योजनाओं के विषय में ही बताया गया है। भारत सरकार द्वारा समाज के इन तमाम क्षेत्रों में चलाई जा रही सरकारी योजनाओं के प्रचार प्रसार में गैर सरकारी संगठनों की महत्वपूर्ण भूमिका है। ये गैर-सरकारी संगठन सरकार द्वारा चलाई जा रही सरकारी योजनाओं को

आम जन-मानस तक ले जाने का कार्य करते है। इन इकाई में हम भारत सरकार की योजनाओं में गैर सरकारी संगठनों की प्रमुख भूमिका के विषय में चर्चा करेगें।

14.5 सरकारी योजनाओं में गैर सरकारी संगठनों की प्रमुख भूमिकाएं

शिक्षार्थियो आपको पूर्व में भी बताया गया है कि भारत सरकार की विकास प्रक्रिया में सरकारी योजनाएं बहुत महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। लेकिन इन योजनाओं का समाज के अंतिम व्यक्ति तक पहुँचाना आसान नहीं होता है। प्रशासनिक सीमाओं, भौगोलिक कठिनाइयों और सामाजिक विषमताओं के कारण कई बार सरकारी योजनाओं का लाभ वास्तविक जरूरतमंदों तक पूरी तरह से नहीं पहुँच पाता है। ऐसी स्थिति में गैर सरकारी संगठन, सरकार के सहयोगी के रूप में अत्यंत महत्वपूर्ण भूमिका निभाते है। ये गैर सरकारी संगठन स्थानीय समुदायों के बीच सक्रिय रहते हैं, और ये संगठन स्थानीय लोगों की वास्तविक जरूरतों को भी समझते है। ये संगठन भारत सरकार के द्वारा चलाई जा रहीं योजनाओं को धरातल पर व्यवहारिक रूप से लागू कराने में सरकार की मदद करते है। इसके साथ ही गैर सरकारी संगठन सरकारी योजनाओं को आगे बढ़ाने के लिए जन जागरूकता, प्रशिक्षण, लाभार्थी पहचान, सेवा-प्रदान, निगरानी और फीडबैक जैसी विविध जनकारियों को निभाकर संबंधित योजनाओं की प्रभावशीलता को बढ़ाने का कार्य भी करते हैं। गैर सरकारी संगठनों के माध्यम से सरकार और समाज के बीच संबंधित योजनाओं के विषय में संवाद मजबूत होता है। इससे विकास की प्रकिया को गति मिलती हैं। इस प्रकार भारत सरकार के द्वारा चलाई जाने वाली योजनाओं की सफलता में गैर-सरकारी संगठन एक महत्वपूर्ण भागीदारी के रूप में उभरकर सामने आते हैं। शिक्षार्थियो इस प्रकार इकाई में सरकार द्वारा चलायी जाने वाली योजनाओं में गैर-सरकारी संगढनों की प्रमुख भूमिका पर चर्चा करने का प्रयास किया जा रहा है।

I. **लाभार्थियों की पहचान में सहयोग-** भारत सरकार अनेक प्रकार की योजनाओं का क्रियान्वय करती है। इन योजनाओं में से कई योजनाओं का लक्ष्य एक विशेष समूह के विकास पर केन्द्रित होता है। जैसे महिलाऐं अनुसूचित जाति अनुसूचित जनजाति वृद्ध द्विव्यांग और गरीब आदि। गैर सरकारी संगढन सामाजिक सर्वेक्षण, घर-घर सम्पर्क और ग्राम सभाओं के माध्यम से वास्तव लाभार्थियों की पहचान करने का कार्य करते हैं। गैर-सरकारी संगठनों के द्वारा लाभार्थियों की पहचान करके सरकारी योजनाओं को लक्ष्य उन्मुख बनाया जाता है। इससे सम्बन्धित योजनाओं को सुचारू रूप से चलाने में सरलता होती है।

II. **जन जागरूकता और सूचना प्रसार:-** गैर-सरकारी संगठन स्थानीय भाषा, संस्कृति और स्थानीय मुद्दों को भलि-भांति समझते हैं। ये भारत सरकार की योजनाओं को सरल भाषा में बनाकर स्थानीय जनता तक पहुंचाने का भी कार्य करते हैं। शिक्षार्थियो आप जानते हैं कि ग्रामीण क्षेत्रों में सूचना का अभाव एक प्रमुख समस्या है। गैर-सरकारी संगठन प्रभावी अभियान, बैठकों और समुदाय आधारित संवाद के द्वारा इस समस्या को दूर करने का कार्य भी करते हैं। गैर-सरकारी संगठनों की ये भूमिका ग्रामीण समाज को सामाजिक परिवर्तन की दिशा देने का कार्य करती है।[5]

III. **समुदाय और सरकार के बीच सेतु-** गैर-सरकारी संगठन समुदाय और सरकार के बीच एक सेतु यानि पुल का कार्य भी करते हैं। गैर-सरकारी संगठनों के द्वारा सामुदायिक शिकायतों को सरकार तक पहुंचाना, या सरकारी योजनाओं में आने वाली बाधांओं से सरकार को परिचित करवाना, सामुदायिक आवश्यकताओं के विषय में सरकार का ध्यान आकर्षित करने का कार्य गैर-सरकारी संगठन करते हैं। इससे सरकार को समुदाय की वास्तविक आवश्यकताओं और समस्याओं के विषय में जानकारी मिलती है।

IV. **प्रत्यक्ष सेवा प्रदाता-** भारत सरकार के द्वारा चलाई जाने वाली कुछ सरकारी योजनाओं में गैर-सरकारी संगठन लोगों को प्रत्यक्ष रूप से अपनी सेवायें देते हें। जैसे- स्वास्थ्य शिविर, टीकाकरण अभियान, शिक्षा केन्द्र, पोषण, पुर्नवास केन्द्र और जल-संरक्षण से संबंधित योजनाओं में गैर-सरकारी संगठन अपनी प्रत्यक्ष भूमिका को निभाते हैं।

V. **प्रशिक्षण एवं क्षमता निर्माण-** गैर सरकारी संगठन सरकारी योजनाओं के सफल क्रियान्वयन के लिए कौशल आधारित प्रशिक्षण देने का कार्य भी करते हैं। सरकारी योजनाओं में प्रशिक्षण एक केन्द्रीय घटक होता है। जैसे स्वयं सहायता समूह, आशा कार्यकर्ता, ऑगनबाड़ी सेविकाऐं और किशोर स्वास्थ्य कार्यक्रमों की सफलता कर्मचारियों के प्रशिक्षण पर निर्भर करती है। प्रशिक्षण और समता निर्माण से सरकारी योजनाओं के क्रियान्वयन में आसानी होती है।[6] कर्मचारियों के प्रशिक्षण से गुणवत्ता में सुधार आता है।

VI. **निगरानी, मूल्यांकन और फीडबैक-** गैर सरकारी संगठन सरकारी योजनाओं के क्रियान्वयन और प्रगति पर निगरानी रखते हैं। इससे योजना से संबंधित जानकारी प्राप्त होती है। योजना की कमियां और अच्छाईयों का फीडबैक सरकार को प्रदान करते हैं।

14.6 विभिन्न क्षेत्रों में गैर-सरकारी संगठनों का योगदान

शिक्षार्थियो भारत जैसे विविधतापूर्ण देश में विकास की जरूरतें प्रत्येक क्षेत्र में बदलती रहती है। इसलिए सिर्फ सरकारी संस्थानों पर निर्भर रहकर सभी समस्याओं का समाधान संभव नहीं होता है। ऐसी स्थिति में गैर-सरकारी संगठन एक शक्ति और कार्यों को दिशा देने के रूप में उभरकर सामने आते हैं। गैर-सरकारी संगठनों की भूमिका बहुआयामी होती है। ये गैर-सरकारी संगठन सरकार की योजनाओं को सशक्त बनाते हैं। इस इकाई में गैर-सरकारी संगठनों के द्वारा प्रमुख विभिन्न क्षेत्रों में जो कार्य किये जा रहे हैं, उनके कार्यों के क्षेत्रों को निम्नलिखित बिंदुओं के माध्यम से समझाने का यहां पर प्रयास किया जा रहा है।

I. **स्वास्थ्य क्षेत्र-** सरकार की स्वास्थ्य से संबंधित योजनाओं को गैर-सरकारी संगठन गांवों के दूरस्थ इलाकों में पहुंचाने का कार्य करते हैं। ये गैर-सरकारी संगठन टीकाकरण, प्रसूति स्वास्थ्य, पोषण, साफ-सफाई और बीमारी रोकथाम पर लोगों को जागरूक करते हैं। कई गैर-सरकारी संगठन गांवों में स्वास्थ्य शिविरों का आयोजन भी करते हैं।

II. **शिक्षा क्षेत्र-** गैर-सरकारी संगठन शिक्षा के क्षेत्र में बालक-बालिकाओं को स्कूल से जोड़ने का कार्य करते हैं। बालिकाओं के स्कूलों में नामांकन को बढ़ाने और बेटी बचाओ बेटी पढ़ाओं जैसी सरकारी योजनाओं की तरह आम जनमानस का ध्यान केन्द्रित करने का कार्य भी ये गैर-सरकारी संगठन करते हैं। ये वंचित वर्गों के बच्चों को निःशुल्क अध्ययन सामग्री प्रदान और उन्हें स्कूल भेजने का कार्य भी करते हैं। इससे सरकार के द्वारा शिक्षा के क्षेत्र में चलाई जा रही योजनाऐं जमीनी स्तर पर मजबूत होती हैं।

III. **ग्रामीण विकास-** ग्रामीण क्षेत्रों में गैर सरकारी संगठन स्वच्छता, पेयजल, पर्यावरण संरक्षण और आजीविका संवर्धन से संबंधित सरकारी योजनाओं का प्रचार-प्रसार करते हैं। किसानों को आधुनिक कृषि तकनीक, जैविक खेती और प्राकृतिक संसाधनों के बारे में जानकारी देते हैं। इससे सरकार के द्वारा चलाई जाने वाली ग्रामीण विकास योजनाओं के लक्ष्य प्राप्त होते हैं।

IV. **महिला विकास एवं स्वयं सहायता समूह-** गैर-सरकारी संगठन ग्रामीण महिलाओं को सशक्त और आत्मनिर्भर बनाते हैं। ये संगठन ग्रामीण महिलाओं को संगठित कर स्वयं सहायता समूह बनवाते हैं। ये गैर-सरकारी संगठन इन स्वयं सहायता समूहों को बचत, ऋण और छोटे-छोटे व्यवसायों को शुरू करने की जानकारी भी देते हैं। इससे ग्रामीण महिलाऐं सरकारी योजनाओं के लाभों को आसानी से प्राप्त कर लेती हैं। इससे ग्रामीण महिलाऐं सशक्त, आत्मनिर्भर होती हैं।

V. **पर्यावरण संरक्षण-** गैर-सरकारी संगठन पेड़ों को लगाना, जल संरक्षण अपशिष्ट प्रबंधन और पर्यावरण संरक्षण पर सामुदायिक जागरूकता बढ़ाने का कार्य करते हैं। ये सथानीय लोगों को पर्यावरण के अनुकूल व्यवहार को अपनाने के लिए प्रेरित करते हैं। इससे भारत सरकार के स्वच्छ भारत मिशन, पर्यावरण संरक्षण और जल संरक्षण जैसी सरकारी योजनाओं को सीधा लाभ मिला है।

VI. **आपदा प्रबंधन-** गैर-सरकारी संगठन उत्तराखण्ड जैसे पहाड़ी राज्यों में आपदा के समय राहत सामग्री, अस्थायी आवास, भोजन और स्वास्थ्य सुविधाऐं तुरंत उपलब्ध कराते हैं। ये आपदा से प्रभावित लोगों के पुर्नवास का भी कार्य करते हैं। गैर-सरकारी संगठनों के इन कार्यों से सरकारी संस्थाओं के प्रयासों को मजबूती मिलती है।

VII. **सामाजिक न्याय और अधिकार-** कुछ गैर-सरकारी संगठन समाज के कमजोर वर्गों को उनके अधिकारों के विषय में जागरूक कराने का कार्य भी करते हैं। ये गैर-सरकारी संगठन महिलाओं, बच्चों, बुर्जुगों और दिव्यांगों को कानूनी सलाह और उनके अधिकारों के विषय में भी जागरूक करने का कार्य करते हैं। इन लोगों के विकास और समाजिक सुरक्षा के लिए सरकार के द्वारा बनाई योजनाऐं इनके लिए महत्वपूर्ण साधन बन जाते हैं।

14.7 गैर-सरकारी संगठनों का महत्व

शिक्षार्थियो समाज के विकास में गैर-सरकारी संगठनों की भूमिका केवल सेवा-प्रदाता तक सीमित नहीं है। ये गैर-सरकारी संगठन समाज में परिवर्तन, जन-जागरूकता और जन-सहभागिता की प्रक्रिया को दिशा देने का

कार्य भी करते हैं। शिक्षार्थियो सरकारी योजनाऐं समाज के सभी क्षेत्रों से संबंधित होने के कारण बड़े पैमाने पर होती हैं। इन सरकारी योजनाओं के प्रभावी क्रियान्वयन के लिए स्थानीय समझ, समुदाय तक पहुंच और स्थानीय क्षेत्रों, सामाजिक-भौगोलिक जानकारी का होना आवश्यक होता है। ये सारे कार्य, गैर-सरकारी संगठन सरकारी योजनाओं के अनुरूप कर लेने में सक्षम होते हैं। गैर-सरकारी संगठन का महत्व अनेक आयामों में उभरकर समाज के सामने आता है। समाज में गैर-सरकारी संगठनों के महत्व को निम्नलिखित बिंदुओं के माध्यम से स्पष्ट किया जा सकता है-

I. **जमीनी समझ-** गैर-सरकारी संगठन समुदाय के बीच जाकर कार्य करते हैं। इन संगठनों को स्थानीय समस्याओं और जरूरतों की वास्तविक जानकारी होती है। गैर-सरकारी संगठनों की वास्तविकता जानकारियों से सरकार को नीतियां बनाने में आसानी होती है।

II. **सामाजिक नवाचार-** गैर-सरकारी संगठन छोटे-छोटे स्तर पर नये-नये प्रयोग करते हैं। ये ऐसी योजनाऐं विकसित करते हैं, जिन्हें बाद में सरकार बड़े स्तर पर लागू कर सकती है। ये स्थानीय सामाजिक समस्याओं के लिए रचनात्मक समाधान पेश करने का कार्य करते हैं।

III. **सामाजिक मूल्यों का संरक्षण-** गैर-सरकारी संगठन करूणा, समानता और मानवता जैसे मूल्यों को समाज में बढ़ाने का कार्य करते हैं। ये संगठन समाज के संवेदनशील मुद्दों पर समाज को जागरूक करने का कार्य करते हैं। जिसके परिणामस्वरूप समाज में सकारात्मक सामाजिक वातावरण बनता है। इससे समाज में नैतिकता को मजबूती मिलती है।

IV. **हाशिये पर पड़े मुद्दों को मुख्यधारा में लाना-** समाज के कई सामाजिक मुद्दों जैसे- बाल श्रम, मानव तस्करी, दिव्यांगों के अधिकार, महिलाओं के अधिकार और लैंगिक असमानता जैसे- संवेदनशील मुद्दों पर ये अपनी आवाज प्रखर करते हैं।

V. **सामाजिक विश्वास का निर्माण-** गैर-सरकारी संगठन समुदायों के बीच विश्वास का वातावरण बनाने में मदद करते हैं। क्योंकि ये संगठन जन-समुदाय के बीच में रहकर कार्य करते हैं। सामाजिक पूंजी सिद्धांत के अनुसार ''समाज में विश्वास जितना मजबूत होगा, विकास प्रक्रिया उस समाज में उतनी ही प्रभावी होगी।[7]''

VI. **लोकतांत्रिक मजबूती-** गैर-सरकारी संगठन समाज के नागरिकों को उनके अधिकारों, कतव्र्यो और शासन प्रक्रियाओं के बारे में जागरूक करने का कार्य करते हैं। गैर-सरकारी संगठनों के इन कार्य से समाज में लोगों की सक्रिय भागेदारी बढ़ती है। यह लोकतंत्र के लिए बहुत आवश्यक होता है8।

VII. **प्रशासनिक भार कम करना-** शिक्षार्थियो हमारी सरकार हर क्षेत्र में कार्य नहीं कर सकती है। गैर-सरकारी संगठन शिक्षा, स्वास्थ्य, स्वच्छता और आजीविका संर्वधन जैसे अनेक क्षेत्रों में सरकार की सहायक भूमिका निभाते हैं। इससे प्रशासनिक तंत्र पर दबाव कम पड़ता है, और सरकारी योजनाऐं त्वरित गति से लोगों तक पहुंचती हैं।

14.8 सारांश

शिक्षार्थियो भारत सरकार की योजनाओं में गैर-सरकारी संगठनों की भूमिका का समग्र अध्ययन यह दर्शाता है कि गैर-सरकारी संगठन विकास की प्रक्रिया में एक महत्वपूर्ण स्तम्भ है। ये संगठन समुदायों और सरकार के बीच संवाद को मजबूत करने का कार्य करते हैं। गैर-सरकारी संगठनों ने भारत सरकार की योजनाओं के क्रियान्वयन में अपनी सक्रियता और स्थानीय समझ के कारण, भारत सरकार की योजनाओं की प्रभावशीलता को बढ़ाने का कार्य किया है। इस इकाई में शिक्षार्थियो आपने गैर-सरकारी संगठनों के विषय में जानकारी और इन संगठनों की विशेषताओं के विषय में अपनी समझ विकसित की है। साथ ही आपने इस इकाई में भारत सरकार की प्रमुख योजनाओं के विषय में भी ज्ञान प्राप्त किया। आपने इस इकाई में सरकारी योजनाओं के क्रियान्वयन में गैर-सरकारी संगठनों की भूमिका के विषय में भी जाना। इकाई के अंत में आपने समाज के विभिन्न क्षेत्रों में गैर-सरकारी संगठनों की भूमिका तथा समाज में गैर-सरकारी संगठनों की महत्ता के विषय में भी ज्ञान प्राप्त किया।

14.9 पारिभाषिक शब्दावली

I. **गैर-सरकारी संगठन-** गैर-सरकारी संगठनों से आशय ऐसे लाभ रहित और स्वैच्छिक संस्थाओं से है, जो समाज के कल्याण, विकास और सेवा संबंधित कार्यों में सरकार का सहयोग करती हैं।

II. **सहभागी विकास-** यह एक ऐसी प्रक्रिया है जिसमें समुदाय सक्रिय रूप से योजना निर्माण, निर्णय, क्रियान्वयन और मूल्यांकन में हिस्सा लेते हैं।

III. **सामाजिक पूंजी-** इसके अंतर्गत समुदाय का विश्वास, सहयोग, पारस्परिक संबंध और नेटवर्क विकास की योजनाओं को सफल बनाने में सहायता करते हैं।

14.10 संदर्भ ग्रंथ सूची

1. Parsons, T (1951) "The Social system, Free Press Publications.

2. Sen, A (1999) "Development as Freedom" oxford University Press.

3. Durkheim, E. (1922) "Education and Sociology" Free press Publications.

4. Patton, M., Q. (1997) "Utilization-focused Evaluation, Sage Publications, New Delhi.

5. Freir, P. (1970) Pedagogy of the oppressed continum.

6. Balu, P.M.& Soott, W.R. (1962) "Formal organizations.

7. Putnam, R.D. (1993) "Making Democracy Work: Civil Traditions in modern Italy" Princetion university Press, Page- 163-170.

8. Tocquevilla, A. (1835) "Democracy in America".

14.11 निबंधात्मक प्रश्न

1. भारत सरकार की योजनाओं में गैर-सरकारी संगठनों की भूमिका पर चर्चा कीजिए।
2. गैर-सरकारी संगठनों की विशेषताओं पर प्रकाश डालिए।
3. गैर-सरकारी संगठन समाज के किन क्षेत्रों में कार्य करते हैं? स्पष्ट कीजिए।
4. गैर-सरकारी संगठनों का क्यों महत्व है? स्पष्ट कीजिए।
5. भारत सरकार की प्रमुख योजनाओं पर एक लेख लिखिए।